इलाहाबाद जनपद में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का संगठनात्मक विकास

(1885-1937)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल्०
उपाधि के लिये प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

प्रस्तुतकर्त्री
श्रीमती संध्या सिंह

निर्देशक
प्रो० सी० पी० झा

मध्य कालीन एवम् आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

1989

विषय - सूची

प्राक्कथन

प्रस्तुत अध्ययन इलाहाबाद जनपद में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का संगठनात्मक विकास 1885 से 1937 ई० पर आधारित है । इलाहाबाद जनपद उत्तर प्रदेश के प्रमुख क्षेत्रों में से एक है ।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का आन्दोलन औपनिवेशिक दासता के विरुद्ध अंग्रेजों के साथ संघर्ष की कहानी है जिसका स्रोत वह धार्मिक और सामाजिक आन्दोलन थे जिन्हें आरम्भ में सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए प्रारम्भ किया गया और जो अन्ततः राष्ट्र में राजनीतिक और सामाजिक चेतना के भरने के लिए उत्तरदायी थे ।

इलाहाबाद जनपद भारतीय राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर गया था, क्योंकि इलाहाबाद उदारवादी नेताओं तथा दक्षिणपंथ के महानतम एवं श्रेष्ठतम नेताओं का निवास स्थल था । नेहरू परिवार, सप्रू परिवार, परिवार का निवास स्थल एवं कर्मभूमि इलाहाबाद जनपद ही था ।

प्रस्तुत अध्ययन में यह प्रयास किया गया है कि जो भी राजनैतिक आन्दोलन हुए, उन्हें इलाहाबाद ने किस ढंग से स्वयं में आत्मसात करके उसको कार्यान्वित किया था । इसके साथ ही यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि इलाहाबाद जनपद के नेताओं के विचारों तथा आदर्शों ने किस तरह से किसी काल विशेष में राष्ट्र और प्रान्त को नवीन दिशा प्रदान की ।

प्रस्तुत अध्ययन का कार्यक्षेत्र पूर्णरूपेण एवं मुख्य रूप से इलाहाबाद जनपद तक ही सीमित है । यद्यपि आवश्यकतानुसार उन घटनाओं और कुछ अन्य जनपदों का भी इसमें उल्लेख किया गया है, क्योंकि उनके विशिष्ट परिवर्तनों, भावी घटनाओं एवं मनोवृत्ति की झलकें, परिलक्षित हुई, तो अन्य जनपदों से सम्बंधित उल्लेख भी आवश्यक था । विशेषतः इलाहाबाद के नेताओं तथा जनसाधारण के इलाहाबाद में किये गये सम्मिलित प्रयासों को अंकित करने का मुख्य रूप से प्रयास किया गया है ।

प्रस्तुत शोध ग्रन्थ में समस्त निम्न साधनों का उपयोग है - इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, राजकीय पब्लिक लाइब्रेरी इलाहाबाद, इलाहाबाद स्टेट आरकाइब्स, इलाहाबाद संग्रहालय, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, भारती-भवन पुस्तकालय इलाहाबाद, क्षेत्रीय अभिलेखागार इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी कार्यालय लखनऊ, जिला कांग्रेस कार्यालय इलाहाबाद, राजकीय अभिलेखागार उत्तर प्रदेश लखनऊ, सचिवालय अभिलेखागार लखनऊ, कार्यालय उपमहानिरीक्षक (गुप्तचर) लखनऊ, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय नयी दिल्ली, नेशनल आरकाइब्स ऑफ इंडिया नयी दिल्ली, इन्स्टीट्यूट फॉर इन्टरनेशनल स्टडीस नयी दिल्ली, इन्डिया कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स नयी दिल्ली, कांग्रेस ऑफिस दिल्ली, नेहरू मेमोरियल म्यूजियम एवम् लाइब्रेरी नयी दिल्ली ।

मैं विशेष एवं मुख्य रूप से अपने निर्देशक प्रोफेसर चन्द्र प्रकाश झा की

प्रस्तुत अध्ययन का कार्यक्षेत्र पूर्णरूपेण एवं मुख्य रूप से इलाहाबाद जनपद तक ही सीमित है । यद्यपि आवश्यकतानुसार उन घटनाओं और कुछ अन्य जनपदों का भी इसमें उल्लेख किया गया है, क्योंकि उनके विशिष्ट परिवर्तनों , भावी घटनाओं एवं मनोवृत्ति की झलकें, परिलक्षित हुई , तो अन्य जनपदों से सम्बंधित उल्लेख भी आवश्यक था । विशेषतः इलाहाबाद के नेताओं तथा जनसाधारण के इलाहाबाद में किये गये सम्मिलित प्रयासों को अंकित करने का मुख्य रूप से प्रयास किया गया है ।

प्रस्तुत शोध ग्रन्थ में समस्त निम्न साधनों का उपयोग है - इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, राजकीय पब्लिक लाइब्रेरी इलाहाबाद, इलाहाबाद स्टेट आरकाइव्स, इलाहाबाद संग्रहालय, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, भारती-भवन पुस्तकालय इलाहाबाद, क्षेत्रीय अभिलेखागार इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी कार्यालय लखनऊ , जिला कांग्रेस कार्यालय इलाहाबाद, राजकीय अभिलेखागार उत्तर प्रदेश लखनऊ, सचिवालय अभिलेखागार लखनऊ, कार्यालय उपमहानिरीक्षक (गुप्तचर) लखनऊ, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय नयी दिल्ली, नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया नयी दिल्ली, इन्स्टीट्यूड फॉर इन्टरनेशनल स्टडीस नयी दिल्ली, इन्डिया कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स नयी दिल्ली, कांग्रेस ऑफिस दिल्ली, नेहरू मेमोरियल म्यूजियम एवम् लाइब्रेरी नयी दिल्ली ।

मैं विशेष एवं मुख्य रूप से अपने निर्देशक प्रोफेसर चन्द्र प्रकाश झा की

आभारी हूँ जिन्होंने मुझे बहुमूल्य एवं उपयोगी सुझाव देकर मेरा विशेष पथ-प्रदर्शन किया । इसके साथ ही मैं " मध्यकालीन एवं आधुनिककालीन इतिहास विभाग " के प्रति अपना आभार व्यक्त करती हूँ जिसने मेरे शोध प्रबन्ध में अपना विशेष योगदान दिया ।

अन्त में मैं अपने पति डा० अजीत सिंह एवं अपने पुत्र ऐश्वर्य सिंह के प्रति विशेष रूप से आभारी हूँ जिन्होनें मुझे हरसम्भव सहयोग प्रदान किया ।

दिनांक
26.8.1998

सन्ध्या सिंह
। सन्ध्या सिंह ।

मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

प्रथम - अध्याय

प्रस्तावना

सन् 1857 तक समस्त भारत ब्रिटिश साम्राज्य की सत्ता के अधीन हो गया था । अंग्रेज भारत में सर्वशक्तिशाली हो चुके थे । देशी राजा और जनता दोनो ही उनसे आतंकित थे किन्तु शासन सदैव आतक से ही नहीं चलाया जा सकता, और यह भी सम्भव नहीं है कि कोई विदेशी शासक स्वतंत्रता की भावना को अनन्तकाल तक दबाकर रख सके । एक बुद्धिमान विदेशी शासक अपनी नीति कुशलता से किसी देश में अपना शासन-काल बढ़ा सकता है । जहाँ तक अंग्रेजों का प्रश्न था, उनका इस देश में अधिक दिनों तक ठहरना तभी सम्भव था , जब वह ट्रेवेलियन द्वारा सुझायी गई नीति पर पर चलते । परन्तु भारत के अंग्रेजी शासकों ने उसकी बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह से कोई भी लाभ नहीं उठाया और भारतीयों को ऊपर उठाने में सहयोग देने के बदले उन्होंने उनकी उपेक्षा ही की । उन्होंने ऊँचे पदो के द्वार उनके लिए बन्द कर दिये । भारतीयों के लिए कानून बनाते समय भी अंग्रेज उनकी सलाह नहीं लेते थे और सन् 1857 का प्रबल विद्रोह इसी का परिणाम था । उस विद्रोह के एक अंश को सचमुच भारतीय सैनिकों के गदर की संज्ञा दी जा सकती है, जिसका कारण धर्म में तथाकथित हस्तक्षेप था । परन्तु उसमें भाग लेने वाली जनता अंग्रेजी शासन के विनाशकारी आर्थिक परिणामों से भली प्रकार परिचित थी और इस बात से प्रसन्न थी कि अंग्रेजो को देश से निकाल बाहर करने के लिए अन्ततोगत्वा कुछ ठोस कदम उठाये जा रहे हैं ।[1]

---

1. राम गोपाल - हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फार फ्रीडम, पृष्ठ 26

यद्यपि सन् 1857 का विद्रोह सफल नहीं हुआ, परन्तु उससे अनेक अनुभव प्राप्त हुए । अंग्रेजों ने यह अनुभव किया कि हिंसात्मक कार्यों में वह भारतीयों से बढ़कर हैं । भारतीयों ने यह अनुभव किया कि उनमें आपस में फूट थी, कुछ अंग्रेजों के पक्ष में थे और कुछ विद्रोह में सहायता दे रहे थे । इसके साथ ही उन्होंनें यह भी अनुभव किया कि जो संगठन उन्होंने बनाया था वह देश के दूर-दूर के भागों को अपने में समेटने में समर्थ नहीं था । जिन राजाओं ने अंग्रेजों की मदद की उनका यह विश्वास दृढ़ हो गया कि अंग्रेजों की शक्ति से पार पाना बहुत कठिन है । अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों को और भी अधिक दृढ़ अनुभव हुआ कि शासकों में सद्बुद्धि के उदय की प्रार्थनाएँ करना ही प्रशासन से भारतीयों को सम्बद्ध करने का एक मात्र उपाय था ।[2] शासकों ने ब्रिटिश शक्ति का प्रदर्शन करने के उद्देश्य से चारों ओर आतंक का राज्य फैला दिया, परन्तु जब मानसिक संतुलन पुनः स्थापित हुआ तब उन्हें अपनी पिछली भूलों का अनुभव हुआ । सन् 1857 के विद्रोह की भयंकर घटनाओं ने उन्हें सबक दिया कि देश के लिए कानून बनाने में भारतीयों का सहयोग न लेने के परिणाम कितने भंयकर हो सकते हैं । सर सैयद अहमद खाँ जैसे व्यक्ति भी, जो विद्रोह के समय अंग्रेजों के प्रति पूर्ण वफादार रहे थे, यह कहने लगे थे कि दोनों ओर खतरा है । उसी समय प्रायः अनेक अंग्रेजो को ऐसा ही अनुभव हुआ । सर बार्टर फ्रियर ने ,जो गवर्नर जनरल की लेजिस्लेटिव कौंसिल के एक सदस्य थे कहा कि यह बुद्धिमानी का काम नहीं है कि करोड़ों आदमियों के लिए बिना जाने बूझे ऐसा

---

2. राम गोपाल, हाउ इन्डिया स्ट्रगल्ड फार फ्रीडम, पृष्ठ 26

कानून बना दिया जाये, जिसका परिणाम विद्रोह के अतिरिक्त और किसी उपाय से ज्ञात न किया जा सके ।[3]

सन् 1857 के विद्रोह से जो सबसे बड़ा हित हुआ, वह यह था कि अधिकांश गवर्नर-जनरलों को आशंका होने लगी कि कहीं लोग अंग्रेजी शासन का विरोध करने हेतु हिंसा पर न उतर आयें, जिससे अंग्रेजों को जान औरमाल की हानि उठानी पड़े । ब्रिटेन के विचारशील राजनीतिज्ञों ने महारानी को यह सुझाव दिया, कि हमारी प्रजा चाहे किसी जाति या धर्म की क्यों न हो, उसे सरकारी दफ्तरों की नौकरियों में स्वतन्त्रता और निष्पक्षतापूर्वक प्रवेश मिल सकेगा, बशर्ते कि वह शिक्षा योग्यता और ईमानदारी से उस कार्य को करने की क्षमता से सम्पन्न हो ।

सन् 1857 के विद्रोह की असफलता भी, कुछ सीमा तक उसके संगठन कर्त्ताओं की सफलता को प्रमाणित करती है । वह कुछ समय तक शासन तन्त्र को ठप्प करने में सफल हो जाते हैं, जिससे शासकों के आसन डोल उठते हैं । मनुष्य स्वभाव से शान्ति चाहता है और शासक भी शान्ति के बिना कार्य नहीं चला पाता । सन् 1857 के विद्रोह के पश्चात् अंग्रेज राजाओं से उतने भयभीत नहीं रहते थे, जितने कि जनता से ।[4]

ब्रिटेन में उस समय पार्लियामेन्ट में जनता का प्रतिनिधित्व धनी तथा भूस्वामी वर्ग के व्यक्ति ही करते थे । अतएव महारानी के घोषणा पत्र के अभिप्राय

---

3. राम गोपाल, हाउ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 27
4. वही , पृष्ठ 27

के अनुसार, " विदेशी शासन के जनता से अलगाव को विधिवत समाप्त करने के लिए, गवर्नर जनरल ने कलकत्ता के निकट के तीन-चार राजाओं को इस हेतु आमंत्रित किया कि वह लेजिस्लेटिव कौंसिल में उनसे और उनके योरोपीय सहयोगियों से मिलें और प्रस्तावित विधेयक पर अपनी सम्मति प्रकट करें । मद्रास और बम्बई में द्वितीय श्रेणी के राजाओं को भी इसी प्रकार गवर्नरों को परामर्श देने के लिए आमंत्रित किया गया था ।[5]

ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन अभी भी सांस ले रहा था, परन्तु वह सन् 1857 के विद्रोह और उसके परिणामों से इतना भयभीत था कि उसने क्षेत्र से सन्यास ले लिया और अपना कार्य क्षेत्र जमींदारों के हितों की सुरक्षा तक सीमित कर लिया । उसका इतना अधिक पतन हो गया कि उसकी दृष्टि अब स्वार्थ सिद्धि से आगे न जाती थी । सन् 1857 में उसने पार्लियामेन्ट के समक्ष एक प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया था, जिसमें स्थायी बन्दोबस्त ,जो किसानों के लिए एक अनिष्टकारी पद्धति थी, सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत में लागू करने की माँग की गई थी । इस प्रार्थना पत्र में यह दलील दी गयी थी कि विद्रोह तथा उसके बाद की अशांति ने यह प्रमाणित कर दिया है कि बगैर स्थायी बन्दोबस्त वाले प्रान्तों में पाये जाने वाले भिन्न-भिन्न हैसियतों और भिन्न भिन्न अधिकारों वाले जमींदारों की अपेक्षा स्थायी बन्दोबस्त वाले प्रान्तों के जमींदार राजनीतिक दृष्टि से अधिक लाभदायक हैं । विगत संकटकाल में वफादार और गैरवफादार जमींदारों की तुलना करने पर कम से कम यह ज्ञात हो जायेगा कि स्थायी

---

5. डब्लू ,एम, टारेन्स, एम0 पी0- एम्पायर इन एशिया, पृष्ठ 402

बन्दोबस्त में एक ऐसे शक्तिशाली वर्ग के निर्माण की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है, जो शासन के साथ अपने हितों की एकता का अनुभव करता है और जो अपनी स्थिति से सन्तुष्ट है । इससे ज्ञात होता है कि इसके विपरीत पद्धति एकदम विपरीत प्रवृत्ति और फल उत्पन्न करती है ।[6]

आन्दोलन के और अधिक शक्तिशाली साधन शीघ्र ही उत्पन्न हो गये । उनमें से एक, जिसे सर्वप्रथम स्थान प्राप्त होना चाहिए, समाचार पत्र था । परन्तु भारत में समाचारपत्रों को भिन्न-भिन्न समय में भिन्न प्रतिबन्धों का सामना करना पड़ा । परतन्त्र देश में पूर्णरूप से स्वतंत्र समाचार पत्र की बात सोची भी नहीं जा सकती । अंग्रेज लोग भी , जो भारत में समाचार पत्रों के प्रर्वतक थे, जब अधिकारियों के विरूद्ध लिखने लगते थे तब उन पर भी प्रतिबन्ध लगा दिये जाते थे । मुनरोने एक प्रश्न उठाया था और उसका उत्तर स्वयं ही दिया था- " स्वतन्त्र समाचार पत्र का कर्त्तव्य क्या है ? देश को विदेशी बन्धन से मुक्त करना । " सन् 1857 के विद्रोह के दौरान और उसके पश्चात् संकट काल में पुन: समाचार पत्रो का गला घोंट दिया गया, परन्तु सामान्य स्थिति की स्थापना हो जाने पर समाचार पत्रों ने लगभग 15 वर्षों तक प्रर्याप्त मात्रा में स्वतन्त्रता का उपयोग किया । भारतीय समाचारपत्रों के इतिहास में यह 15 वर्ष स्मरणीय रहेगें । काफी संख्या में समाचार पत्रों ने किसी प्रजातान्त्रिक देश के विरोधी राजनीतिक दल के ढंग पर कार्य किया । उन्होनें राजनीतिक चेतना से युक्त पढ़े लिखे लोगों को अपना एक राजनीतिक संगठन गठित करने के

---

6. राम गोपाल, हाऊ इंडिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 30

लिए प्रेरित किया । इसमें भारतीय भाषाओं के समाचारपत्रों में प्रकाशित कुछ संपादकीय लेखों से निम्नांकित उद्धरण दिये जा रहे हैं -

22 अक्टूबर , सन् 1875 के अंक मे " खानदेश वैभव " ने लिखा था -[7] " भारत में छोटे से छोटे मामलों से लेकर राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण बड़े से बड़े मामलों में अंग्रेज सरकार की ही तूती बोलती है । हमसे किसा भी मामले में परामर्श नहीं लिया जाता । यदि कहीं हमारे स्वार्थ सरकार के स्वार्थ से टकराते हैं, तो हमारे स्वार्थों को पूरी तरह एक किनारे फेंक दिया जाता है और इस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं की जाती है कि उससे लोगों का कितना नुकसान होगा । हम असहाय होकर निरन्तर प्रार्थना करते हैं और वह हमें बराबर ठोकर मारते रहते हैं, हम जितना झुकते हैं वह हमें उतना ही झुकाते हैं । अंग्रेजी सरकार ने इस समय हिन्दुओं के प्रति यही रूख अपना रखा है - । यह भलीभाँति समझा जा चुका है कि यदि हम दब्बूपन का व्यवहार करेगें, तो अंग्रेज सरकार के हाथों में हमे कभी न्याय नहीं मिल सकता । किसी शक्ति को उससे बड़ी शक्ति को उससे बड़ी शक्ति द्वारा ही पराजित किया जा सकता है । बिना उसके सब व्यर्थ हो जाता है । यह शिक्षा तो हमें स्वयं अंग्रेजी सरकार दे रहा है ।[8]

---

7. राम गोपाल, हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 31

8. वही, पृष्ठ 32 ,

लार्ड रिपन के शासन काल के अन्य पहलुओं को समझने के लिए हमें सन् 1876 की घटनाओं का पुनरावलोकन करना पड़ेगा । उस वर्ष सुरेन्द्र नाथ बनर्जी द्वारा इंडियन एसोसियेशन नामक एक संस्था की स्थापना हुई थी । इंडियन सिविल सर्विस में सर्वप्रथम नियुक्त किये जाने वाले कुछ भारतीयों में सुरेन्द्र नाथ बनर्जी भी एक थे । वह मुश्किल से कुछ हीसाल नौकरी पर पाये होगें कि अपने दफ्तर के एक कर्लक की चालाकी के कारण कठिनाई में पड़ गये और उन्हें नौकरी से निकाल दिया गया । । वह नवम्बर 1871 में सिविल सर्विस में प्रविष्ट हुए थे । उन्होनें मध्यवर्ग के शिक्षित लोगों के विचारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए एक संस्था का निर्माण करने की उपयोगिता पर गम्भीरपूर्वक चिन्तन करना आरम्भ किया, ताकि उनको सार्वजनिक कार्यों में अधिक दलचस्पी लेने के लिए प्रेरित किया जा सके । उन्होनें यह अनुभव किया कि ब्रिटिश इन्डियन एसोसियेशन जमींदारो की संस्था होने के कारण, सक्रिय राजनीतिक आन्दोलन का नेतृत्व नहीं कर सकती । उन्हीं के शब्दों में - " देश में विस्तृत लोकतांत्रिक आधार पर काम करने के लिए किसी दूसरी राजनीतिक संस्था की बहुत आवश्यकता थी और इस बात को ब्रिटिश इंडियन एसोसियेशन के नेताओं के द्वारा भी स्वीकार किया जाता था और 26 जुलाई सन् 1876 को इंडियन एसोसियेशन की स्थापना हुई । सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने उसके निम्न आदर्श स्थिर किये थे -

(1) वह देश में एक सुदृढ़ लोकमत का निर्माण करेगी ।

(2) वह सामान्य राजनीतिक हितों और आकांक्षाओं के आधार पर भारत की विविध जातियों को एक सूत्र में बांधेगी ।

17 जून, सन् 1875 के " महाराष्ट्र - मित्र " के अंक में -

" निस्सन्देह देश में शिक्षा काफी दूर तक फैल गयी है । परन्तु यह शिक्षा है किस प्रकार की ? इसका प्रयोजन सिर्फ क्लर्क और मुंशी अर्थात्, ऐसे मनुष्य तैयार करना है जो नौकरी करने के योग्य हों । यही कारण है कि देश में नौकरी करने वालों की संख्या तो अधिक है, परन्तु उन्हें काम में लगाने के लिए नौकरियाँ कम हैं । यहाँ इतिहास का पाठ करने वालों की संख्या तो बहुत अधिक है, परन्तु कोई ऐसा नहीं, जो कि इतिहास का निर्माण करसकें ।.. अंग्रेज सरकार सम्भवत: सबसे अधिक पक्षपातपूर्ण सरकार है । संक्षेप में, किसी राजा ने, जिसने भारत पर शासन किया है, इस देश को इतनी क्षति नहीं पहुँचाई जितनी कि अंग्रेज शासकों ने ।[9]

" अमृत बाजार पत्रिका " तीखी आलोचना करने में इस समय के अधिकांश पत्रों से आगे था और सन् 1875 के एक अंक में, बड़ौदा के गायकवाड़ द्वारा अपने दरबार में अंग्रेज रेजिडेण्ट कर्नल फायरे की हत्या करने के तथाकथित प्रयत्न पर टिप्पणी करते हुए उसने लिखा -

" निसन्देह एक अज्ञात कर्नल को विष देना, निष्कण्टक राज्य करने के लिए एक समूचे राष्ट्र को नपुंसक बना देने की अपेक्षा एक छोटा अपराध है ।"

---

9. राम गोपाल, हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 32,

सन् 1978 में वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट द्वारा देशी भाषाओं के पत्रों का फिर से गला घोंट दिया गया ।[10] वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट एक बड़ा ही कठोर कानून था । उससे मैजिस्ट्रेटों को यह अधिकार मिल गया था कि वह प्रान्तीय सरकार की पूर्व अनुमति लेकर देशी भाषाओं में प्रकाशित होने वाले पत्र - सम्पादकों को आदेश दे सकें कि वह प्रकाशित होने वाली सामग्री के प्रूफ सेंसर को दिखा दिया करें या फिर ऐसा बॉन्ड भरें कि वह ऐसी कोई सामग्री नहीं छापेगें जिससे सरकार की अप्रतिष्ठा हो अथवा भिन्न-भिन्न जातियों के मध्य घृणा का भाव फैले ।[11]

सन् 1857 के विद्रोह के पश्चात् समाचार पत्रों की संख्या बढ़ती जा रही थी और वह सरकार के विरूद्ध जन-भावना को अधिकाधिक जाग्रत कर रहे थे । उस समय लार्ड लिटन भारत के वायसराय थे । उनका कार्यकाल जनता के तीव्रतम असन्तोष का काल था जिसका कारण वाइसराय लार्ड लिटन की आर्थिक और राजनीतिक नीतियाँ थीं । उन्होंने आर्थिक शोषण की चक्की को और अधिक तीव्र गति से चलाना आरम्भ किया । बाम्बे एसोसियेशन द्वारा हाउस ऑफ कामन्स में पेश किये प्रार्थना पत्र के अनुसार । 28 मार्च 1871 विगत 12 वर्षों में मद्रास में नमक कर 100% बम्बई से 81% तथा भारत के अन्य भागों में 50% बढ़ा दिया गया है । शक्कर पर ड्यूटी और शराब पर आबकारी कर में 100% की वृद्धि हो गई है । स्टैम्प ड्यूटी तो बार-बार

---

10. राम गोपाल, हाऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम पृष्ठ 33.

11. राम गोपाल, हाऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम पृष्ठ 34.

बदली और बढ़ाई जाती थी, परन्तु अब वह इतनी अधिक बढ़ गयी है और परेशान करने वाली हो गई है कि उसे अन्यायपूर्ण ही कहा जा सकता है। भारी कोर्ट फीस और 2% का उत्तराधिकार कर भी लगा दिया गया है। 6.1/2 प्रतिशत का स्थानीय भूमि कर तथा इसी ऊँची दर पर ग्राम सेवा कर, कस्बा कर, रोजगार तथा पेशों पर कर, गृह कर, चुँगीकर तथा भाँति-भाँति के म्यूनिसिपल और स्थानीय टैक्स, देश के विविध भागों पर लगा दिये गये। इन टैक्सों की कुल राशि जनता की कमर तोड़ने वाली है और अब यह प्रस्तावित किया गया है कि कुछ नये ह टैक्स इसलिए लगाये जायें ताकि भारत सरकार ने अनेक प्रान्तीय सेवाओं को दी जाने वाली ग्राँट में जो कमी कर दी है, उसकी पूर्ति की जा सके। ब्रिटिश शासनकाल में इतना अधिक टैक्स लगा दिया है कि यह देश के लिए अभिशाप सिद्ध हो रहा है और अधिकारियों द्वारा सरकारी व्यय को कम करने के लिए कोई ज़ोरदार कोशिश नहीं की गई है, जिसके कारण वह प्रति वर्ष बढ़ता जा रहाहै और यहाँ तक कि अब वह 1856-57 के मुकाबले में 1 करोड़ 90 लाख और बढ़ गया है।[12] जनता की आर्थिक स्थिति बिगड़ती जा रही थी। लार्ड लिटन जिन्होनें सन् 1876 में वाइसराय का पदग्रहण किया था के शासनकाल मे वह औरभी अधिक बिगड़ गई देश में चारो तरफ असन्तोष फैल रहा था। उस समय दो प्रमुख अंग्रेजों ने। दोनों सरकारी अफसर थे, और बाद मे वह भारत की राजनीतिक जाग्रति से घनिष्ट रूप से

12.

राम गोपाल - हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 35

सम्बंधित रहे । अपने पास पहुँचने वाली सूचनाओं के आधार पर यह रिपोर्ट भेजी कि विद्रोह को संगठित करने का जोरदार प्रयत्न किया जा रहा है । उन्हें आशंका थी कि कहीं सन् 1857 की पुनरावृत्ति न हो । यह दोनों व्यक्ति थे - एलेन ऑक्टोवियन ह्यूम और विलियम वेडरबर्न । इनमें से प्रथम को इंडियन नेशनल कांग्रेस का जन्मदाता माना जाता है और द्वितीय को कांग्रेस के विख्यात अध्यक्षों में से एक माना जाता है, ए. ओ. ह्यूम के जीवन चरित्र में वेडरबर्न ने लिखा है -

" सन् 1878 और सन् 1879 के आस पास भारत में चारों ओर राजनीतिक और आर्थिक असन्तोष व्याप्त था । एक तरफ बहुसंख्यक लोगों को नाना प्रकार के कष्ट उठाने पड़ रहे थे और दूसरी तरफ कुछ मुट्ठी भर लोगों में बौद्धिक असन्तोष पनप रहा था फलस्वरूप जन असन्तोष विस्फोटक बिन्दु तक पहुँच रहा था । गरीबी, अकाल और महामारी से पीड़ित किसान जनता घोर नैराश्य के गर्त में डूबी हुई थी । उसकी तकलीफों की कहीं कोई सुनवाई नहीं थी, और उसे आशा की कोई किरन भी दिखलाई नहीं पड़ रही थी । मि0 ह्यूम इस नाजुक स्थिति को अच्छी तरह से समझ रहे थे ।[13]

लार्ड लिटन के शासन काल के अन्तिम दिनों में वासुदेव बल्वंत राव फड़के ने जो पूना के मिलिटरी एकाउण्ट्स आफिस में क्लर्क से कुछ लड़ाकू जवानों को एकत्र कर एक छोटी सी विद्रोही सेना का संगठन कर लिया था । उनका

13.
डबल्यू वेडरबर्न, एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम, पृष्ठ 2

विश्वास था कि विद्रोह के भड़कने पर उनकी सेना के सैनिकों की संख्या भी बढ़ेगी । अंग्रेजी राज्य के अन्तर्गत देश की आर्थिक अवनति पर दिये गये रानाडे के व्याख्यान से वह अत्यधिक प्रभावित हुए और उनके मन में अंग्रेजो के प्रति घृणा का भाव बढ़कर विद्रोह के जोश में परिणत हो गया था । कठोर परिश्रम तथा शारीरिक कष्ट सहन करके उन्होनें कुछ आदमियों को इकट्ठा किया, उन्हें हथियार दिये और अपनी योजना के निमित्त धन एकत्रित करने केलिए डाके तक डाले, परन्तु अंग्रेजों को कोई ठोस नुकसान पहुँचाने के पहले ही वह गिरफ्तार कर लिये गये । और महारानी के विरूद्ध युद्ध छेड़ने के अभिप्राय से अस्त्र शस्त्र तथा मनुष्यों को एकत्रित करने के आरोप में उन्हें कालेपानी की सजा दी गयी । वह अदन भेज दिये गये, जहाँ वह तन्हाई में एक कोठरी में बन्द रखे गये । जेल से फरार होने की कोशिश करने के परिणाम-स्वरूप उन्हें बेड़ियाँ पहना दी गयी और चार साल के अन्दर 38 वर्ष की आयु में क्षय रोग से पीड़ित होकर वह मर गये ।[14]

यह कहना गलत होगा कि लार्ड लिटन की नीति केकारण जो प्रतिक्रिया तथा हिंसात्मक उपद्रव हुए, उनके फलस्वरूप कोई बहुत बड़ा हिंसात्मक आन्दोलन उठ खड़ा होता- यदि एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम द्वारा उल्लिखित तैयारियाँ शासकों को ज्ञात न हो जाती अथवा वासुदेव को आन्दोलन छेड़ने से पहले बन्दी न बना लिया गया होता, अथवाभारत में अंग्रेजी राज्य का अन्त हो जाता

---

14. राम गोपाल हाऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम , पृष्ठ 37.

फिर भी अंग्रेजों ने यह अनुभव किया, जैसा कि किसी भी शासक ने अनुभव किया होता कि प्रजा में निरन्तर असन्तोष और अशान्ति का बना रहना सरकार के लिए चिन्ताजनक है और यदि इस असन्तोष को दूर नहीं किया गया, तो उन्हें किसी खतरनाक परिस्थिति का सामना करना पड़ सकता है । यद्यपि खतरा तात्कालिक नहीं था तथापि वह भविष्य में किसी भी समय में उपस्थित हो सकता था । अंग्रेजी सरकार ने, इसलिए अगले कुछ वर्षों में कुछ ठोस कदम उठाये, जिससे लोगों का ध्यान हिंसा की ओर से खींचकर कानूनी तरीके से शिकायतों को दूर करने की ओर लगाया जा सके, और उनमें निराशा के स्थान पर आशा का संचार किया जा सके । और लार्ड लिटन से त्याग पत्र देने की माँग की गयी तथा सन् 1880 के आरम्भ में गवर्नर जनरल के पद पर लार्ड रिपन की नियुक्ति हुई ।[15]

वाइसरॉय का कार्य भार संभालने पर लार्ड रिपन ने ब्रिटिश सरकार की अनुमति से यह घोषणा की थी कि भारतीयों को कुछ हद तक स्थानीय स्वशासन दिया जायेगा, स्थानीय निकायों को, जहाँ तक हो सकेगा, स्वायत्त-शासी संस्था बना दिया जायेगा । मई, सन् 1852 में प्रकाशित सरकारी प्रस्ताव में रखा गया कि लोकल बोर्डों में गैर-सरकारी सदस्यों का भारी बहुमत होना चाहिए और उसका चेयरमैन भी कोई गैर सरकारी व्यक्ति ही होना चाहिए । लार्ड रिपन ने प्रान्तीय गवर्नरों को यह सूचित किया कि यद्यपि अन्तिम निरीक्षण,

---

15.
राम गोपाल, हाऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम , पृष्ठ 37

नियंत्रण और देखभाल का अधिकार सम्बन्धित प्रान्तीय सरकार के हाथों में रखा जाये, तथापि म्युनिसिपल प्रशासन का भार जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों को सौंप दिया जाय। उनके आदेश की प्रान्तीय सरकारों के द्वारा, कुछ अंशों तक उपेक्षा की गई और गैर-सरकारी चुने हुए सदस्यों को, कुछ प्रान्तों में, उनके लिए निरूपित पद नहीं दिया गया, किन्तु लार्ड रिपन ने अपने शासन काल के आरम्भ में ही इस प्रस्ताव से अपने को लोकप्रिय बना लिया। उन्होने वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट को रद्द कर दिया, जिसको अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। इसके अतिरिक्त लार्ड लिटन के शासनकाल के समय की अन्य बुराइयों को दूर करने के लिए भी कदम उठाये। परन्तु उनका अधिकार क्षेत्र सीमित था, जिससे वह आर्थिक दुर्व्यवस्था को दूर करने के लिए विशेष कार्य नहीं कर सके। उन्होनें प्रस्तावित किया था कि राज्य को लगान बढ़ाने का अधिकार तो होना चाहिए, परन्तु वृद्धि जमीन की पैदावार की कीमत बढ़ने के अनुपात में होनी चाहिए। लेकिन उस प्रस्ताव को अंतिम रूप दिये जाने के पूर्व ही उन्होनें त्यागपत्र दे दिया और उनके प्रस्थान के एक मास के पश्चात यह प्रस्ताव त्याग दिया गया। अपने तथाकथित भारतीयों के पक्षपाती विचारों और कार्यों के परिणामस्वरूप उनके देशवासियों तथा सहयोगियों ने उनके जीवन को दूभर बना दिया और वह दुखी मन से स्वदेश वापस लौट गये। यह एक विचित्र विरोधाभास हैकि उन्हीं के कार्यकाल में शिक्षित भारतीयों को यह कटु अनुभव हुआ कि अंग्रेजी शासन में अपना आत्मसम्मान बनाये रखना उनके लिए प्राय: असम्भव है।[16]

---

16. राम गोपाल, हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 38.

(3) वह हिन्दू और मुसलमानों के मध्य मैत्रीभाव की वृद्धि करेगी ।

(4) वह वर्तमान समय के बड़े सार्वजनिक आन्दोलनों में भाग लेने के लिए जनता का आव्हान करेगी ।

एसोसियेशन के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए उसके एक नेता ने कहा था - " अंग्रेजी राज्य के प्रति राजभक्ति और वैधानिक सरकार की स्थापना के लिए आन्दोलन, यह जैसा किहम पहले कह आये हैं हमारे दो मूलभूत सिद्धान्त हैं, जिनका इंडियन एसोसियेशन सदैव प्रतिपादनकरती रही है ।[17]

इन्डियन एसोसियेशन के निर्माण के एक वर्ष के अन्दर ही श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने सिविल सर्विस में प्रविष्ट होने के लिए भारतीयों को समान अवसर दिलाने के लिए एक आन्दोलन आरम्भ कर दिया । उस आन्दोलन के लिए आधार भूमि लार्ड लिटन ने ही तैयार कर दी थी । अपनी अन्य प्रतिक्रिया-वादी नीतियों की भाँति ही लार्ड लिटन ने सन् 1877 में प्रस्तावित किया कि इंडियन सिविल सर्विस में भारतीयों का प्रवेश एकदम बन्द कर उनके लिए एक अलग " नेटिव सर्विस " शुरू की जाय । इनके इस प्रस्ताव के फलस्वरूप भारतीयों को एक अलग दूसरे प्रकार की हानि उठानी पड़ी थी । इंडियन सिविल सर्विस की प्रतियोगात्मक परीक्षा में भाग लेने वाले भारतीयों की संख्या कम करने के लिए उसके उम्मीदवारों की आयु 21 वर्ष से घटाकर 19 वर्ष कर दी गयी । इसी उद्देश्य से आयु कीसीमा घटाकर सन् 1860 में 23 वर्ष से 22 वर्ष और सन् 1866 में 22 वर्ष से घटाकर 21 वर्ष कर दी गई थी ।[18]

---

17. राम गोपाल, हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 38,

18. वही पृष्ठ 39,

अंग्रेजों की इस कुटिल नीति के विरुद्ध इण्डियन एसोसिएशन ने एक राष्ट्रीय आन्दोलन संगठित करने का निश्चय किया और 24 मार्च, सन् 1877 को कलकत्ता में एक सार्वजनिक सभा से उसका आरम्भ हुआ । उस सभा में यह निश्चय किया गया कि भारत के विविध प्रान्तों को एक सामान्य मंच पर लाने का प्रयत्न किया जाये और श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी को विविध प्रान्तों का दौरा करने के लिए विशेष प्रतिनिधि नियुक्त किया गया । उन्होंनें इस कार्य को बड़ी समझदारी और जोश के साथ अपने हाथों में लिया। मेट्रोपोलिटन इन्स्टीट्यूट में, जहाँ वह प्रोफेसर थे, गर्मियो की छुट्टियों होने का लाभ उठाकर उन्होंनें अपना उत्तरी भारत का दौरा आरम्भ किया । उनके साथ नगेन्द्र नाथ चटर्जी भी थे, जो उस समय बाँगला भाषा में धारा-प्रवाह भाषण देने के लिए विख्यात थे । यह सर्वप्रथम आगरा गये जहाँ इन्डियन एसोसिएशन द्वारा सिविल -सर्विस पर अंग्रेजी में तैयार किया ज्ञापन उर्दू में अनुवादित किया गया और जनता में वितरित करने के लिएलीथोग्राफ प्रेस से छपाया गया । सुरेन्द्र नाथ बनर्जी तब लाहौर गये, जहाँ उनका हिन्दू, मुसल्मान और सिक्ख जातियों के लोगों में हार्दिक स्वागत किया । वहाँ एक बहुत बड़ी सार्वजनिक सभा हुई जिसमे कलकत्ता का प्रस्ताव और ज्ञापन दोनों ही स्वीकार कर लिये गये । उन्होंनें अपनी लाहौर यात्रा का उपयोग एसोसिएशन के प्रयोजनों को आगे बढ़ाने में किया और लाहौर इंडियन एसोसिएशन नाम से उसकी एक शाखा वहाँ खोली गई । सुरेन्द्र नाथ बनर्जी का

यह कथन था कि -

" मेरा यह विश्वास है कि वह पंजाब में पहला राजनीतिक संगठन था, जिसने भारतीय समाज के सभी वर्गों के लिए एक सामान्य मंच प्रस्तुत किया । "

सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने अपने तूफानी अभियान में अमृतसर, मेरठ, इलाहाबाद, दिल्ली, कानपुर, लखनऊ , बनारस, सूरत, अहमदाबाद और पूना का दौरा किया । और लोगों में एसोसिएशन के उद्देश्यों के प्रति लोकचेतना जागृत की तथा उन्हे अपने दौरे का तात्कालिक उद्देश्य भी समझाया । वह मद्रास भी गये, परन्तु कई कारणों से वहाँ पर सार्वजनिक सभा नहीं हो सकी । इस प्रकार ब्रिटिश भारत में पहली बार भिन्न-भिन्न प्रान्तों के मध्य एक राजनीतिक कड़ी की स्थापना की गई । [19]

सिविल सर्विस के प्रश्न पर अखिल भारतीय स्तर पर एक ज्ञापन हाउस ऑफ कामन्स को भेजा जाने वाला था और इंग्लैण्ड जाने के लिए भारत के प्रतिनिधि लाल मोहन घोष चुने गये थे । घोष में भाषण देने की अद्भुत क्षमता थी । उनके पहले भाषण की, जो जॉनब्राइट की अध्यक्षता में विलिस रूम में हुआ, सभी ने सराहना की । उस सभा का परिणाम यह हुआ कि 24 घंटों के अन्दर ही विधि-विहित सिविल सर्विस का निर्माण करने के नियम हाउस ऑफ कामन्स की मेज पर रख दिये गये ।

---

19. राम गोपाल, हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 40,

अंग्रेजो में लार्ड रिपन के प्रति जो विरोध भाव उत्पन्न हुआ था उसका कारण कुछ थोड़े से भारतीयों का सिविल सर्विस में प्रवेश था । आयु सीमा का प्रतिबन्ध होते हुए भी प्रतियोगिता परीक्षाओं मे कुछ भारतीय सफल हो गये थे । उनकी नियुक्ति न्याय विभाग में कर दी गई थी, कार्य विभाग में अधिकांश अंग्रेज ही थे । सन् 1833 तक कुछ भारतीय सेवा काल ज्येष्ठता के आधार पर डिस्ट्रिक्ट एन्ड सेसन्स जज के पद पर नियुक्त होने के अधिकारी हो गये थे । उस समय के कानून के अनुसार कोई भारतीय जज या मैजिस्ट्रेट कलकत्ता, बम्बई, मद्रास को छोड़कर अन्य स्थानों के योरोपीय निवासियों के विरूद्ध मुकदमें सुनने का अधिकारी नहीं था । भारतीयों की ओर से यह बहस की गई कि -

यदि यह अधिकार सिविल सर्विस के भारतीय सदस्यों को नहीं दिया जाता तो यह असंगत स्थिति उत्पन्न हो सकती है कि किसी भारतीय डिस्ट्रिक्ट मैजिस्टेट या सेशन्स जज के नीचे कार्य करने वाला योरोपीय ज्वाइन्ट मैजिस्टेट ऐसे मुकदमों की सुनने का अधिकारी हो जायेगा जिसे उसके ऊपर का जज नहीं सुन सकेगा । कलकत्ता, बम्बई, मद्रास के भारतीय प्रेसीडेंसी मैजिस्टेटों को भारतीयों की भाँति योरोपीयनों के मुकदमें भी सुनने का अधिकार था । अतएव इस बात का कोई औचित्य नहीं जान पड़ता था कि सिविल सर्विस के उन भारतीय सदस्यों को जो उन्नति करके डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट या सेशन जज के पद पर पहुँच जायें, सिविल सर्विस के दूसरे सदस्यों की भांति योरोपीयनों

के मुकदमे सुनने के अधिकारी क्यों नही माना जाय ?[20]

लार्ड रिपन की सरकार ने इस असंगति को दूर करने का निश्चय किया और कानून सदस्य सर कोर्टनी इल्बर्ट ने एक बिल का मसविदा तैयार किया, जो उन्हीं के नाम पर इल्बर्ट बिल के नाम से प्रसिद्ध हुआ । इल्बर्ट बिल का उददेश्य न्याय के क्षेत्र में रंगभेद पर आधारित सभी अयोग्यताओं को दूर करना था । । चाय और नील की खेती करने वाले गोरों ने, जो अपने भारतीय मजदूरों पर भाँति-भाँति केअत्याचार करते रहते थे , समझा कि यह बिल उनके विरुद्ध बनाया गया है । उन्होनें भारत में वस्तुत: गुलामी की प्रथा को फिर से प्रविष्ट कर दिया था । वह अपने को कानून से भीऊपर समझते थे । इल्बर्ट बिल का दूसरा उददेश्य विलफ्रिड स्कावेन ब्लण्ट के शब्दों में,-

" विशेषकर चाय और नील की खेती करने वाले उन गैर-सरकारी अंग्रेजों की उददंडता को रोकना था जो अपने भारतीय मजदूरों के साथ दुष्पर्वहार करते थे और कभी-कभी उनकी जान तक ले लेते थे ।[21]

कलकत्ता के अंग्रेज व्यापारियों पर उस बिल का यद्यपि सीधा प्रभाव नहीं पड़ता था तथापि वह उसके उतने ही तीव्र विरोधी थे जितने निलहे गोरे । उन्होनें लार्ड रिपन के द्वारा दी गई दावतों का बहिष्कार करना शुरू कर दिया, यहाँ तक कि वह उनका अपमानकरने से भी नहीं चूकते थे

---

20. जे. एन. गुप्त, लाइफ एन्ड वर्क ऑफ रमेशचन्द्र से उद्धृत, पृष्ठ 99,

21. डब्ल्यू. एस. ब्लण्ट, इन्डिया अन्डर रिपन, पृष्ठ 5,

गोरे लोग इतने आन्दोलित हो उठे कि वह साजिश करने लगे कि " गवर्नमेण्ट हाउस के संतरियों को जबर्दस्ती अपने काबू में करके वाइसराय को, चाँदपाल घाट से स्टीमर पर चढ़ाकर केप टाउन के मार्ग से इंग्लैण्ड भेज दिया जाये । " कलकत्ते के गोरे इस योजना पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहे थे । इल्बर्ट बिल के विरूद्ध एक प्रबल आन्दोलन विरोध स्वरूप शुरू कर दिया गया तथा डिफेन्स एसोसिएशन नामक एक संस्था का निर्माण किया गया । जिसकी शाखाऐं समस्त भारत में थीं और उसका मुख्य कार्यालय कलकत्ता में था । आन्दोलन को जारी रखने के लिए चन्दा किया गया, और एक लाख पचास हजार रूपये से ऊपर इकट्ठा हो गया । कलकत्ता के टाउन हॉल में एक सभा की गई । उसमें दिये गये भाषण " अपनी उग्रता में सौजन्यता की सभी सीमाओं को लाँघ गये थे । इसी प्रकार की सभाऐं समस्त प्रान्त में हुई और ऐंग्लो इन्डियन समाचारपत्र, विशेषत: इंगलिशमैन बेतरह बौखला गये थे । स्वेच्छा से सैन्य सेवा करने वाले स्वयं सेवकों के खुल्लमखुल्ला उकसाया जाता था कि वह सब एक साथ ही सेना से इस्तीफा दे दें तथा कुछ लोग कैन्टीनों में भी कानाफूसी करने लगे - दूसरे शब्दों में सेना को भड़काने की कोशिश की जाने लगीं ।[22]

लार्ड रिपन व्यक्तिगत रूप से इल्बर्ट बिल के लिए जिम्मेदार नहीं थे । मूलरूप से प्रस्ताव बंगाल सरकार की ओर से आया था, दूसरी प्रान्तीय सरकारों ने भी उसका समर्थन किया था । यहाँ तक सेक्रेटरी ऑफ स्टेट तथा उनकी कौंसिल

---

22. लूसियन ऊल्फ, लाइफ ऑफ रिपन, पृष्ठ 128,

ने भी उस पर अपनी स्वीकृति दे दी थी । परन्तु अब लार्ड रिपन पर ही चारों ओर से बौछारें हो रही थी, और वह घबड़ा उठे । उन्होंनें कहा -

" मेरा ख्याल है कि मैं इस मामले में कभी आगे न बढ़ता, यदि मैं समझता कि भारत में अंग्रेजों ने उस समय के बाद से, जब उन्होनें मैकाले को समुद्र में डुबा देने की धमकी दी थी, न कुछ सीखा है, और न कुछ भूले है । "[23]

उन्हें यह खेद था कि उन्होनें अपने आपको इस तूफान में फँसा दिया । अन्त में उन्हें उद्दण्ड अंग्रेजों के सामने झुकना पड़ा । अब उनकी सरकार ने, सेक्रेटरी ऑफ स्टेट की स्वीकृति से, यह प्रस्तावित किया कि-
" अधिकारों में जो वृद्धि की गई है कि वह केवल सेशन्स जज और डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेटों को प्रदान की जाये और हाईकोर्ट को यह अधिकार हो कि वह किसी मुकदमें की सुनवाई को एक अदालत से दूसरी अदालत में करा सकें ।"[24]

इस नवीन प्रस्ताव की घोषणा कौंसिल में की गई, परन्तु उससे आन्दोलनकारी अंग्रेजों को सन्तोष नहीं हुआ । परिणामस्वरूप सरकार को और झुकना पड़ा । सन् 1884 में एक नया बिल पारित हुआ, जिसमें भारतीय डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेटों और सेशन जजों को अधिकार दिया गया था कि वह गोरों के मुकदमों की सुनवाई इस शर्त पर कर सकते हैं कि गोरे अभियुक्तों को यह माँग करने का अधिकार होगा कि उनके मुकदमें की सुनवाई के लिए जिन

---

23. ल्यूसियन अल्फ, लाइफ ऑफ रिपन, पृष्ठ 136
24. उक्त, पृष्ठ 126.

जूरियों को नियुक्त किया जाये उनमें से आधे यूरोपीय या अमरीकी होगें ।

परन्तु ऐग्लों - इन्डियन समाज में जो कटुता उत्पन्न हो गयी थी, वह शान्त नहीं की जा सकी । भारतीयों के प्रति उनमें घृणाभाव अब और अधिक बढ़ गया था। वह भारतीयों को किसी यात्रा में स्वशासन देने के प्रस्ताव का मखौल उड़ाते थे । वह लार्ड रिपन के स्वशासन सम्बन्धी सुधारों को कुविचारपूर्ण और अव्यावहारिक बताकर उनकी हँसी उड़ाते थे । उनका मत था कि भारतीय लोग स्वशासन के योग्य नहीं है । स्वार्थ और जातीय अहंता ने उनके विवेक को नष्ट कर उन्हें इतना अन्धा बना दिया था कि वह उच्च पदों पर चुनाव के लिए किसी खुली प्रतियोगिता तक का विरोध करते थे । वह डरते थे कि इससे "बाबू लोग" जिन्हें वह क्लर्क के रूप में देखना पसन्द करते थे, उनकी बराबरी के पद पर पहुँच जायेगें ।

इल्बर्ट बिल के प्रश्न पर विजयी होने के कारण अंग्रेजों को बड़ी निर्लज्जता के साथ भारतीयों को अपमानित करने की छूट मिल गई । होटल चलाने वाले अंग्रेज, इस डर से कि कहीं उनके ग्राहक टूट न जाये, किसी भारतीय को अपने यहाँ प्रवेश नहीं करने देते थे । ब्लण्ट ने लिखा है -

" बंगाल और उत्तरी भारत में वस्तु स्थिति और भी बुरी है और मेरे विचार में यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यदि कोई भारतीय, चाहे उसका पद, आयु और चरित्र कैसा ही क्यों न हो, ऐसे किसी सार्वजनिक स्थल में जाता है, जहाँ अंग्रेज आते जाते रहते हैं तो उसे दुर्व्यवहार और अपमान

का खतरा मोल लेना पड़ता है । इस सम्बन्ध में रेल यात्रा अत्यधिक खतरनाक है, और प्रायः मेरे सभी परिचित भारतीय अपने साथ सफर करने वाले अंग्रेज यात्रियों से गाली खाने या उनके द्वारा दुर्व्यवहार और धक्का-मुक्की किये जाने की कहानी सुनाया करते हैं ।"[25]

गैरेट लिखते हैं -

" अंग्रेजों द्वारा की गई हत्याओं और बर्बरताओं की एक लम्बी श्रृंखला है, जिसमें उन्हें कोई दन्ड नहीं दिया गया, अथवा समान यूरोपीय समाज की माँग पर उन्हें नगण्य दन्ड दिया गया ।"[26]

दूसरे लेखक मॉरिशन का कथन है - " यह एक अप्रीतिकर तथ्य है जिसे छिपाने की कोई आवश्यकता नहीं कि अंग्रेजो द्वारा भारतीयों की हत्या एक सामान्य घटना है। यूरोपियनों के मुकदमों के लिए जूरी नगरों से बुलाये जाते हैं और यह वही वर्ग है, जिसमें विजयी जाति का अंहकार अत्याधिक मात्रा में पाया जाता है और जिसकी नैतिकता की भावना इस कानूनी सिद्धान्त का समर्थन नहीं करती कि काले व्यक्ति की हत्या कर देने के लिए किसी अंग्रेज को फाँसी चढ़ा देना चाहिए ।"[27]

मॉरिसन के ही अनुसार - " डा० सुरेश चन्द्र की जघन्य हत्या कर देने के लिए तोपखाने के तीन व्यक्ति अपराधी सिद्ध हुए । परन्तु उन्हें

---

25. ब्लण्ट, इंडिया अन्डर रिपन, पृष्ठ 263,
26. गैरेट, एन इन्डियन कमेन्ट्री, पृष्ठ 116-7,
27. मॉरिसन- इम्पीरियल रूल इन इन्डिया, पृष्ठ 27-बी,

केवल सात साल की सख्त कैद की सजा दी गयी । इस अदालती निर्णय की आलोचना संसार के किसी अन्य देश में तोपखाने के यह तीनों आदमी फाँसी की सजा पाते ।"[28]

भारत में गोरे प्रतिदिन भारतीयों को सही स्मरण दिलाते थे कि वह एक अभिशाप हैं और भारतीयों पर अपने प्रभुत्व का वह जो प्रदर्शन करते थे, वह उनके सांस्कृतिक धरातल को ऊँचा उठाने वाला नहीं था । सन् 1857 में ब्रिटिश फौजों की विजय ने भारतीयों के युद्धोत्साह को कुछ काल के लिए शिथिल कर दिया था, और अगले 20 वर्षों में जब उत्साही भारतीयों में लड़ाकू भावना फिर से जागती दिखायी पड़ी तब लार्ड लिटन ने सन् 1878 में "आर्म्स एक्ट" नामक कानून लागू कर दिया जिसके अधीन बिना लाइसेन्स के शस्त्रों को रखना अपराध घोषित कर दिया गया और ऐसे अपराधी को तीन साल की कैदा या जुर्माना अथवा कैद एवं जुर्माना दोनों दण्ड दिये जाने की व्यवस्था कर दी गई थी । अंग्रेजी राज्य की नींव पड़ने से पहले कोई भी व्यक्ति शस्त्र लेकर चल सकता था और सरकार उसमे कोई भी हस्तक्षेप नहीं करती थी । " आर्म्स एक्ट" कानून के द्वारा अंग्रेजी राज्य ने शस्त्रों पर एकाधिकार कायम कर लिया, जिससे उसके विरुद्ध हिंसात्मक क्रांति संगठित किये जाने की सम्भावना कम हो गई । यह कानून अंग्रेजी शासन के आरम्भ से लेकर अन्त तक लागू रहा । जनता अब केवल दो रीतियों से ही अपनी भावनाओं को व्यक्त कर सकती थी - एक कलम से और दूसरी जुबान से । उस काल के इतिहास का

---

28. मॉरिसन- इम्पीरियल रूल इन इन्डिया, पृष्ठ 28.

अध्ययन करने से यह प्रकट होता है कि भारत में संवैधानिक आन्दोलन को महत्व प्रदान करने में जनता की असहाय अवस्था का मुख्य हाथ था । अंग्रेजों को इसी असहाय अवस्था के कारण भारतीयों का अपमान और निरादर करने का प्रोत्साहन मिलता था । संवैधानिक आन्दोलन भी जनता की असहाय अवस्था का ही द्योतक था, क्योंकि उस समय उसे बड़े पैमाने पर चलाने के लिए कोई अखिल भारतीय संगठन तक नहीं था । अब लोगों का मुख्य ध्येय एक अखिल भारतीय संगठन बनाने की ओर केन्द्रित हो गया था ।[29]

ऐसे संगठन का विचार सन् 1877 में लार्ड लिटन के दरबार के समय किया गया था । सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, सरजमशेद जी जीजाभाई, विश्वनाथ माण्डलिक, सर मंगलदास नाथूभाई और नौरोजी फदून जी जैसे व्यक्तियों ने विचार किया कि -

" यदि इस देश के राजा और रईस एक स्वेच्छाचारी वाइसरॉय की शानशौकत के प्रदर्शन के लिए मोहरे बनाये जा सकते हैं तो उस स्वेच्छाचारी शासन पर संवैधानिक रीति से अंकुश लगाने के लिए लोगों को संगठित क्यों नहीं किया जा सकता ।"[30] महाराष्ट्र में समाज सुधार करने और राजनीतिक चेतना उत्पन्न करने के लिए महादेव गोविन्द रानाडे द्वारा 1867 में पूना में सार्वजनिक सभा की स्थापना की गई । यह सभा 19वीं सदी के अन्त तक कार्य करती रही । इसी प्रकार सन् 1881 में मद्रास, में " महाजनसभा " की स्थापना

---

29. राम गोपाल, हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 45.

30. ए०सी० मजूमदार, इन्डियन नेशनल एवोल्यूशन, पृष्ठ 48.

हुई ।[31]

एक के पश्चात एक कारण आते गये कि इल्बर्ट बिल पर आन्दोलन शुरू होने तक लोगों को अखिल भारतीय स्तर पर संगठित नहीं किया जा सका । इल्बर्ट बिल आन्दोलन शुरू होने पर राजनीतिक गतिविधियों में तेजी आयी और सन् 1883 में पहली इंडियन नेशनल कांफ्रेन्स कलकत्ता में हुई । उसमें बहुत से प्रान्तों के प्रतिनिधि उपस्थित थे । अध्यक्ष पद से आनन्दमोहन बोस ने कहा कि यह राष्ट्रीय संसद की स्थापना की ओर पहला कदम है । यह कान्फेन्स बहुत साधारण थी और उसमें कोई उल्लेखनीय प्रस्ताव पास नहीं हुआ । यह सच्चे अर्थों में कोई अखिल भारतीय संगठन नहीं था । सौभाग्य से उसका बीज अन्यत्र अंकुरित हो चुका था । यह बीज एलेन आक्टेवियन ह्यूम के मस्तिष्क में अंकुरित हुआ था । उनके कार्यों की सराहना तभी की जा सकती है, जब हम उस मनुष्य को जान लें । एलेन आक्टेवियन ह्यूम जोसेफ ह्यूम के पुत्र थे, जो एक स्काटिश देशभक्त और सुधारक थे । वह 12 वर्ष तक ईस्ट इन्डिया कम्पनी में नौकरी में रहे और उसके पश्चात पार्लियामेन्ट में प्रविष्ट हुए । एलेन ह्यूम ने भी कम्पनी की नौकरी शुरू की उन्होनें अपने पिता के समस्त गुण उत्तराधिकार में पाये थे । वह उन उदारवादी योरोपीयनों में थे, जो यद्यपि ब्रिटिश शासन को बनाये रखना चाहते थे, तथापि सच्चे हृदय से भारतीयों का कुछ हित करना चाहते थे । उन्होनें सन् 1857 के विद्रोह के 9 वर्ष पहले

---

31. सर हेनरी कॉटन, न्यू इंडिया, पृष्ठ 15-16

बंगाल सिविल सर्विस में प्रवेश किया था वे 26 वर्ष की अवस्था में यू0पी0 के इटावा जिले में चीफ सिविल आफीसर के पद पर नियुक्त किये गये विद्रोह काल में एक जिले के पश्चात् दूसरे जिले का शासन भारतीयों के हाथ में चला गया और इटावा में भी यही हुआ । एलेन आक्टेवियन ह्यूम ने उस जिले से अंग्रेजों को हटाने और बाद में फिर से उस पर अधिकार कर लेने में बड़े साहस और शौर्य का प्रदर्शन किया था ।[31] इटावा के डिस्ट्रिक्ट ऑफिसर की हैसियत से वह जनता की शिक्षा और उसके सामान्य हितों में भारी दिलचस्पी लेते थे । वह आबकारी विभाग से होने वाली आमदनी को पाप की कमाई कहा करते थे । जब जिले की आमदनी साल प्रतिसाल बढ़ती जा रही थी, तब उन्होंनें उच्च अधिकारियों को लिखा -

" आर्थिक दृष्टि से, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि यह बन्दोबस्त किस असाधारण विपन्नावस्था में किया गया था, यह कहा जा सकता है कि उसमें बड़ी सफलता मिली है । परन्तु मेरे लिएआबकारी की आमदनी का निरन्तर बढ़ते जाना बड़े दुख की बात है । मुझे दुख है कि मैं सालों से वर्तमान अन्यायपूर्ण पद्धति का विरोध करता आ रहा हूँ जिसकी अभी तक कोई भी सुनवाई नहीं हुई । वर्तमान पद्धति ने एक ऐसे वर्ग को जन्म दिया और उसकी वृद्धि की है जो अपने ही स्वार्थ से प्रेरित होकर अपने देशवासियों में शराबखोरी की आदत पैदा करता है, जो उन्हें व्यभिचारी और अपराधी बना देता है । यह भी लोग जो मेरी तरह इस देश के लोगों की गिरी हुई दशा का पता लगाने का कष्ट करते हैं, इस बात को समझ सकते हैं

---

31. राम गोपाल , हाऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 46.

कि पिछले बीस सालों में शराबखोरी किस भयंकर सीमा तक पहुँच चुकी है ।"[32]

ह्यूम को अपने इनविचारों का फल भोगना पड़ा । उनकी पदानवति कर दी गई और उनके नीचे काम करने वाले उनके ऊपर चढ़ा दिये गये । परन्तु वह ब्रिटिश सम्राट के प्रति निष्ठावान् बने रहे और उन्होंनें अपने ढंग से अपने देश और भारत की सेवा की । उन्होंनें अंग्रेजी राज्य के लिए संकट देखकर उसका यह निदान निकाला कि संवैधानिक रीति से राजनीतिक चिन्तन को बड़े पैमाने पर बढ़ावा दिया जाय ।[33]

एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम ने अपने स्वप्न को साकार करते हुए एक संगठन की स्थापना की और उसका नाम " इन्डियन नेशनल यूनियन" रक्खा । यूनियन की इकाई के रूप में कार्य करने तथा पहली कान्फ्रेन्स में प्रतिनिधियों को भेजने के लिए इलाहाबाद, अहमदाबाद, करांची, बम्बई, पूना, मद्रास, कलकत्ता, बनारस, लखनऊ, आगरा और लाहौर में प्रवर समितियां बनायी गयीं । यूनियन ने यह दावा नहीं किया कि वह देश को स्वराज्य की ओर ले जायेगा । उसकी प्रारम्भिक रिपोर्ट के अनुसार उसका उद्देश्य था -

" वैधानिक उपायों से उन सभी अधिकारियों का, चाहे वह ऊँचे पद पर हो, या नीचे पद पर, चाहे वह इंग्लैण्ड में हो या यहाँ, विरोध करना, जिनकी कार्यवाहियाँ अथवा भूलें गवर्नमेंन्ट ऑफ इन्डिया के उन सिद्धान्तों को विपरीत हों, जिन्हें समय-समय पर ब्रिटिश पार्लियामेन्ट द्वारा निर्धारित तथा

---

32. वेडरबर्न, पृष्ठ 20,

33. राम गोपाल , हॉऊ इंन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 47,

ब्रिटिश सम्राट द्वारा अनुमोदित किया गया हो । यूनियन का मत है कि इंग्लैण्ड के साथ भारत का सम्बन्ध बनाये रखना, कम से कम उस अवधि तक जिसकी कोई व्यावहारिक राजनीतिक भविष्यवाणी सम्भव नहीं है, हमारे राष्ट्रीयविकास के हित में पूर्णत: आवश्यक है ।[34]

इस यूनियन ने दो वर्षों तक कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं थी, यद्यपि ह्यूम उसके लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहे । वे इंग्लैण्ड गये, वहाँ मित्रों, पार्लियामेंट के सदस्यों और समाचार पत्र के सम्पादकों से मिले और उनसे भारतीय प्रश्नों और आकांक्षाओं को अपना समर्थन प्रदान करनेकी प्रार्थना की इसी बीच एक नये वाइसरॉय लार्ड डफरिन दिसम्बर 1884 में आ गये । वेडरबर्न के अनुसार -

" चूँकि ह्यूम स्वयं अपने सुधार आन्दोलन को सामाजिक क्षेत्र में आरम्भ करने की इच्छा रखते थे, अतएव ऐसा प्रतीत होता है कि लार्ड डफरिन की सलाह से ही उन्होनें राजनीतिक संगठन का कार्य सबसे पहले अपने हाथ में लिया । लार्ड डफरिन ने सम्भवत: उनसे कहा होगा कि सरकार के उच्चतम पद पर होने के कारण उनके लिए जनता की वास्तविक इच्छाओं का ठीक - ठाक पता लगाना बहुत कठिन है, अतएव प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए यह जनहित में होगा कि कोई ऐसा उत्तरदायी संगठन हो, जिसके द्वारा सरकार को सर्वोत्तम भारतीय जनमत की बराबर सूचना मिलती रहे ।"[35]

---

34. वेडरबर्न, पृष्ठ 52.

35. वही पृष्ठ 60.

लार्ड डफरिन ने सुझाव दिया कि भारतीय नेताओं को वर्ष में एक बार आपस में मिलना चाहिए और सरकार को बताना चाहिए कि प्रशासन में कहाँ त्रुटियाँ हैं और उनमें किस प्रकार से सुधार किया जा सकता है । उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि ऐसे सम्मेलन की अध्यक्ष कोई सरकारी अधिकारी नहीं होना चाहिए, क्योंकि हो सकता है कि उसकी उपस्थिति में व्यक्ति अपने मन की बात न कह सकें । लार्ड डफरिन की यह योजना एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम को बहुत जंची और जिन प्रमुख भारतीयों को उन्होंने उस योजना से अवगत कराया उनको भी वह पसन्द आयी ।[36]

मार्च, सन् 1885 में एक परिपत्र सभी स्थानों पर भेजा गया, जिसमें यह सूचित किया गया कि इंडियन नेशनल यूनियन की ओर से एक सम्मेलन पूना में दिनांक 25 से 31 सितम्बर तक होगा तथा उसमें बंगाल, बम्बई और मद्रास प्रान्त के समस्त भागों से अंग्रेजी भाषा जानने वाले प्रमुख राजनीतिज्ञ प्रतिनिधि के रूप में भाग लेगें । उस परिपत्र मे यह कहा गया था कि -

" अप्रत्यक्ष रूप मे यह सम्मेलन राष्ट्रीय संसद की आधारशिला बनेगा, और यदि उसका संचालन उचित रूपसे किया गया, तो कुछ वर्षों में इस आक्षेप का कि भारत अभी किसी प्रकार की प्रतिनिधि संस्था के अयोग्य है, निरूत्तर कर देने वाला जवाब दिया जा सकेगा । "

36.
राम गोपाल, हॉऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 48,

संयोजित समारोह को "कान्फ्रेन्स ऑफ इंडियन नेशनल यूनियन" नाम दिया गया था । परन्तु सम्मेलन की निर्धारित तिथि से कुछ दिन पूर्व उसका नाम बदलकर इंडियन नेशनल कांग्रेस कर दिया गया । इसी कांग्रेस ने आगे चलकर एक सशक्त आन्दोलनकारी संगठन का रूप लिया और अन्ततः स्वराज्य प्राप्त करने में सफल हुई ।[37]

---

37. राम गोपाल, हाऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फॉर फ्रीडम, पृष्ठ 49,

द्वितीय - अध्याय

उदारवादी युग

(1885 - 1905)

भारतीय राष्ट्रीयता उतनी ही प्राचीन है जितनी भारतीय संस्कृति। राष्ट्रीयता की भावना भारतीयों के लिए आधुनिक नहीं, अपितु अत्यन्त पुरातन है। प्राचीन भारतीय साहित्य इस बात का प्रमाण है कि समस्त भारत की राष्ट्रभाषा संस्कृत थी। प्राचीन युग में भारत जाति, भाषा, धर्म, संस्कृति आदि की दृष्टि से एक राष्ट्र था। प्राचीन भारतीय जनसमूह की राष्ट्रीय एकता के प्रमाण वह सूत्र हैं, जिनके अन्तर्गत समूचा भारत एक माना जाता रहा -

गंगा सिन्धु सरस्वती च यमुना गोदावरी नर्मदा।
कावेरी सरयू महेन्द्रज नया चर्मण्वती पेत्रिका ।।

यह ऐसे यन्त्र है, जो समूचे भारत की धार्मिक, जातिगत, भावात्मक एकता के द्योतक है।[1] भारत में राष्ट्रीयता के उदय का उल्लेख "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस" की स्थापना के साथ किये जाने का एक विशेष कारण है। यद्यपि कांग्रेस का इतिहास " डा0 पट्टाभिसीता रमैय्या एवं अन्य लेखकों के अनुसार" कांग्रेस का इतिहास ही भारत की स्वतंत्रता के संघर्ष का इतिहास है।" यह विचार ऐतिहासिक दृष्टि से स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि कांग्रेस की स्थापना के पूर्व एवं पश्चात् दूसरी अनेक शक्तियों के द्वारा इसी उद्देश्य से कार्य किया गया था।[2] लेकिन कांग्रेस ने भारतीय स्वतन्त्रता के संघर्ष में

---

1. डा0 गंगादत्त तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, पृष्ठ 2 एंव 3।

2. डा0 पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इण्डियन कॉन्स्टिट्यूशन, पृष्ठ - 9 ।

सदैव ही केन्द्र का कार्य किया । यह वह धुरी थी, जिसके चारों ओर स्वतंत्रता की महान् गाथा की विविध घटनायें घटित हुई ।[3] भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन का अभिप्राय उस आन्दोलन से है जिसका उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्यशाही की दासता से भारत को मुक्त कराना था । इस आन्दोलन का इतिहास भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (1885 में स्थापित) के समानान्तर ही माना जाता है ।[4]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का जन्मदाता सचमुच कोई भारतीय नहीं अपितु भारतीय सिविल सेवा से अवकाश प्राप्त एक अंग्रेज व्यक्ति था । वह व्यक्ति एलेन आक्टेवियस ह्यूम थे ।[5] ए. ओ. ह्यूम स्कॉटलैन्ड के निवासी थे जो एक आई. सी. एस अधिकारी थे । अपने सेवा काल में उन्होंने जन-शिक्षा, पुलिस में सुधार, मद्य-निषेध, वर्नाक्यूलर प्रेस, किशोर अपराधी सुधार तथा अन्य घरेलू आवश्यकताओं के सम्बन्ध में प्रयत्न किये ।[6]

1885 से लेकर 1905 तक जिन उदार राष्ट्रवादियों के हाथ में कांग्रेस का नेतृत्व रहा, उनके बारे में श्री गुरु मुख निहाल सिंह लिखते हैं - " सम्भवत: गोखले को छोड़कर कांग्रेस के नरम नेताओं मेंस्वतंत्रता के लिए

---

3. आर. सी. मजूमदार, हिस्ट्री ऑफ दि फ्रीडम मूवमेन्ट, पृष्ठ - 11,
4. डी०सी० चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कांस्टिट्यूशनल डेवलेपमेन्ट, पृष्ठ - 12,
5. वही, पृष्ठ-17 ।
6. एविड, इण्डियन गवर्मेन्ट एण्ड पोलिटिक्स, पृष्ठ - 77 ।

व्यक्तिगत बलिदान करने और आपत्तियाँ सहने को कोई भी तैयार नहीं था ।[7]

1885 में स्थापित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अखिल भारतीय स्वरूप का संगठन था । इसका उद्देश्य जाति, धर्म, या वर्णन के किसी भेदभाव के बिना समस्त भारतवासियों का प्रतिनिधित्व करना था । कांग्रेस का राष्ट्रीय स्वरूप इसी से स्पष्ट हो जाता है कि इसके प्रथम अध्यक्ष वोमेश चन्द्र बनर्जी भारतीय ईसाई थे, दूसरे दादा भाई नौरोजी पारसी थे, तृतीय बदरूद्दीन तैयूबजी मुसलमान थे, चतुर्थ एवं पंचम अध्यक्ष जार्ज यूल और सर विलियम वेडरवर्न अंग्रेज थे ।[8]

कांग्रेस ही ऐसी प्रथम संस्था थी जिसके सम्बन्ध में पंडित मदन मोहन मालवीय जी के शब्दों में कहा जा सकता है कि - " भारत ने अपनी आवाज इस महान् संस्था में पायी ।[9] कांग्रेस में प्रवेश करने का प्रथम अवसर ही पंडित मदन मोहन मालवीय की भाषण प्रतिमा एवं सहानुभूति पूर्ण सार्वजनिक दृष्टि का प्रकाशन कर गया ।[10] 1885 का काल निश्चय ही उदार दृष्टिकोण का था, उसी के फलस्वरूप हम पंडित मदन मोहन मालवीय तथा उनके गुरू

---

7. एनी बेसेन्ट, हॉऊ इंडिया राट फॉर फ्रीडम, पृष्ठ - 45

8. डा0पी0आर0 जैन, नेशनल मूवमेन्ट ऑफ इंडिया एण्ड इंडियन कांस्टिट्यूशनल
वही पृष्ठ 21
9. वही, पृष्ठ 22 ।
10. बी0बी0 मजूमदार, इण्डियन पोलिटिकल एसोसिएशन एन्ड रिफार्म ऑफ लेजिस्लेचर, पृष्ठ 20

आदित्यराय भट्टाचार्य को कांग्रेस के द्वितीय अधिवेशन में उपस्थित देखते हैं, यद्यपि यह दोनों ही सरकारी कर्मचारी थे । पंडित मदन मोहन मालवीय सरकारी शिक्षण संस्था के अध्यापक के रूप में एवं आदित्यराम भट्टाचार्य इलाहाबाद के ही म्योर कालेज के आचार्य के रूप में कार्यरत थे ।[11] इस प्रकार हम उनको कांग्रेस के प्रारम्भिक काल से ही उसके अति उत्साही सदस्य के रूप में देखते हैं । वे अप्रैल, 1887 में इलाहाबाद में पंडित अयोध्यानाथ से मिले तथा उनसे कांग्रेस के विषय में विचार-विमर्श किया, पंडित अयोध्यानाथ ने अपने मत से उन्हें अवगत कराया इसके अतिरिक्त आगामी अधिवेशन के लिए इलाहाबाद का प्रतिनिधित्व ग्रहण करने का निमंत्रण भी उन्हें पत्र के माध्यम से दे दिया, अधिवेशन को सफल बनाने का उत्तरदायित्व उन्होंने स्वयं ग्रहण किया । जैसा कि अंग्रेज कवि ने कहा है - " समस्त महापुरूषों का जीवन चरित्र हमें यह स्मरण करता है कि हम अपने जीवन को उदात्त बना सकते हैं, और इस मृत्युलोक से प्रस्थान करते समय अपने पीछे काल की बालू पर अपने चरण चिन्ह छोड़ सकते हैं -

Lives of great men all remind us.
We can make our lives sublime,
And departing leave behind us.
Foot-prints on the sand of time . 12

---

11. पंडित मदन मोहन मालवीय, लाइफ एन्ड स्पीच, पृष्ठ 10.

12. अध्यक्षीय भाषण, कांग्रेस अधिवेशन 1892, पृष्ठ 13

कांग्रेस की स्थापना के पश्चात् उसके विकास, कार्य कलापों, उपलब्धियों का इतिहास ही वास्तव में भारतीय राष्ट्रीय आन्दोन का इतिहास है ।[13] प्रारम्भ में कांग्रेस के तीन अधिवेशनों- बम्बई 1885, कलकत्ता 1886, मद्रास 1887 में वहाँ के गर्वनरो ने कांग्रेस के प्रतिनिधियों का यथोचित सम्मान किया, परन्तु शीघ्र ही ब्रिटिश शासकों ने कांग्रेस के प्रति अपना दृष्टिकोण बदलना शुरू कर दिया । लार्ड डफरिन ने कांग्रेस की स्थापना के सम्बन्ध में पूर्ण प्रोत्साहन देकर उसे राजनीतिक स्वरूप प्रदान किया था ।[14]

12 मार्च, 1866 को पश्चिमोत्तर प्रान्त के लिए उच्च न्यायालय की स्थापना हुई । जब तक इलाहाबाद का भवन बनकर तैयार नहीं हुआ था, न्यायालय आगरा में रहा इलाहाबाद में 1868-69 के अन्त तक आ गया और प्रान्त के कई प्रतिभाशाली व्यक्तियों को यहाँ आकर्षित किया । पंडित अयोध्या नाथ न्यायालय के इलाहाबाद आ जाने के साथ ही इलाहाबाद के निवासी हो गये । इसके साथ ही पंडित मोतीलाल नेहरू कानपुर की जिला अदालत में अपनी प्रतिभा प्रकाशन का पूर्ण अवसर प्राप्त न होता देखकर सन् 1886 में महत्वाकांक्षा की पुकार पर इलाहाबाद आने को विवश हो गये । [15]

प्रारम्भ से ही कांग्रेस का स्वरूप राष्ट्रीय था । यह किसी वर्ग विशेष

---

13. डा० डी०सी० चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कांसटिट्यूशनल डेवलेपमेंट, पृष्ठ 18,
14. वही, पृष्ठ 19 ।
15. मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ 5 ,

या किसी जाति, धर्म, सम्प्रदाय आदि की प्रतिनिधि संस्था मात्र नहीं थी, वरन् इसकी सदस्यता अंग्रेज, हिन्दू, मुसलमान, पारसी आदि सभी वर्गों के व्यक्तियों ने ग्रहण की, जो भारत के विभिन्न क्षेत्रों के रहने वाले तथा भारतीय सामाजिक जीवन के सार्वजनिक सुमान्य नेता थे । इनमें से किसी का भी उद्देश्य मात्र ब्रिटिश साम्राज्यवाद की रक्षा करके अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति करना नहीं था। एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम, वैडरवर्न, फिरोज शाह मेहता, दादाभाई नौरोजी, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, बदरूद्दीन तैयूयब जी, उमेश चन्द्र बनर्जी आदि किसी भी आरम्भिक नेता को राष्ट्रीय न मानकर किसी वर्ग-विशेष या साम्राज्यवाद का प्रतिनिधि नहीं माना जा सकता ।[16]

एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम के अथक प्रयासों से कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन दिसम्बर सन् 1885 में पूना में बुलाने का आयोजन किया गया । परन्तु इस अवधि में पूना में प्लेग फैल जाने के फलस्वरूप अधिवेशन का आयोजन बम्बई में किया जाना निर्धारित हुआ । 28 दिसम्बर, सन् 1885 को बम्बई के गोकुलदास तेजपाल संस्कृत कालेज के भवन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का जन्म तथा प्रथम अधिवेशन सम्पन्न हुआ । यही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस भविष्य में राष्ट्रीय आन्दोलन की संचालक, निर्देशक, तथा सर्वस्व रही ।[17] सन् 1885 में कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए श्री उमेश चन्द्र बनर्जी ने

---

16. डा० डी० सी० चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कांसटिट्यूशनल डेवलेपमेंट , पृष्ठ 19 .

17. डा० गंगादत्त तिवारी ,भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास पृष्ठ - 3।

कांग्रेस के उद्देश्य घोषित किये थे । कांग्रेस का उद्देश्य मुख्यतया अपने संगठन को सुदृढ़ करना तथा उसके सदस्यों में राष्ट्रीय प्रेम, एकता, लगन तथा समाज सेवा की भावना का विकास करना था ।[18] सन् 1885 में कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन में केवल 72 प्रतिनिधियों ने भाग लिया था और इस समय इस बात की आशा नहीं की जाती थी कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस देश की सबसे बड़ी राजनीतिक संस्था का रूप ग्रहण कर लेगी और कालान्तर में ब्रिटिश शासन का स्थान ग्रहण कर लेगी ।[19] यद्यपि सन् 1885 के प्रथम अधिवेशन में केवल 72 प्रतिनिधि उपस्थित थे और वह सही अर्थ में भले ही जनता के प्रतिनिधि नहीं थे, प्रत्युत स्वेच्छापूर्वक देश प्रेम की भावना से प्रेरित होकर आये थे । परन्तु जिन उद्देश्यों, भावनाओं उत्साह को लेकर एक शान्त वातावरण में यह छोटा सा अधिवेशन सम्पन्न हुआ, वह भविष्य में कांग्रेस की महानता तथा उसकी कार्यविधि का सही-सही रूप था ।[20] कांग्रेस के प्रथम चरण में देश के सार्वजनिक जीवन से सम्बद्ध समस्त भारतीय शिक्षित वर्ग तथा जननेता इसके सदस्य रहे । इन लोगों के नि:स्वार्थ त्याग तथा लगन से कार्य करने के कारण कांग्रेस बड़ी तीव्र गति से अत्यन्त लोकप्रिय संस्था बन गयी ।[21] सन् 1885 में 72 प्रतिनिधियों ने कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन में भाग लिया था ।

---

18. डा० डी० सी० चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एंड कांसटिट्यूशनल डेवलेपमेंट- पृष्ठ - 20
19. डा० पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एंड इंडियन पृष्ठ - 23,
20. डा० डी० सी० चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एंड कांसटिट्यूशनल डेवलेपमेंट, पृष्ठ- 20,
21. वही, पृष्ठ - 21

सन् 1886 में प्रतिनिधियों की यह संख्या 406 तथा तृतीय कांग्रेस अधिवेशन में यह संस्था 607, और चतुर्थ कांग्रेस अधिवेशन (सन् 1888) में 1248 तक यह संख्या हो गयी थी । और इसने एक अखिल भारतीय कांग्रेस का रूप धारण कर लिया ।[22]

सन् 1888 से ही ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस को निर्बल बनाने के प्रयत्न आरम्भ कर दिये थे । और इसी उद्देश्य से सर सैयद अहमद खाँ को प्रोत्साहित करते हुए " ऐंग्लो मुस्लिम डिफेन्स एसोसिएशन" की स्थापना करवायी गई, परन्तु कांग्रेस की शक्ति में कमी होने के स्थान पर वृद्धि ही होती गयी, तथा कांग्रेस ने इन्हीं सभी की सफल प्रेरणाओं के फलस्वरूप शीघ्र ही अखिल भारतीय राष्ट्रीय संस्था का रूप ग्रहण कर लिया ।[23] सन् 1888 में उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रान्त के गर्वनर सर आकलैण्ड कालविन ने कांग्रेस का अधिवेशन इलाहाबाद में आयोजित न होने देने के लिए हर सम्भव रूकावट डाली । शासन के कांग्रेस विरोधी दृष्टिकोण के कारण स्थान की समस्या उत्पन्न हुई, लेकिन दरभंगा नरेश ने " लाउदर कैसल हाउस " खरीदकर अधिवेशन के लिए कांग्रेस को दे दिया । सर आकलैण्ड कालविन ने एक आदेश पत्र द्वारा सरकारी कर्मचारियों को कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लेने से रोक दिया ।[24]

---

22. डा० पी० आर, जैन , नेशनल मूवमेंट आफ इंडिया एंड इंडियन कान्स्टीट्यूशनल, पृष्ठ - 23,
23. वही , पृष्ठ - 23,
24. वही, पृष्ठ - 24,

इलाहाबाद में जब सन् 1888 में कांग्रेस का अधिवेशन आयोजित हुआ, तो ब्रिटिश सरकार कांग्रेस को ठौर - भावना की दृष्टि से देखने लग गयी थी। इस दृष्टि से यह मानना उचित प्रतीत नहीं होता है कि कांग्रेस की स्थापना का उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य का पोषण करना था ।[25]

1888 के इलाहाबाद अधिवेशन तक ब्रिटिश सरकार के दृष्टिकोण में परिवर्तन हो चुका था । धीरे-धीरे समाचार पत्रों परभी प्रतिबन्ध लगा दिये तथा सरकार ने कांग्रेस के विरोध में मुसल्मानों को संगठित होने की प्रेरणा दी । सन् 1888 के कांग्रेस अधिवेशन में शेख रजा हुसैन खाँ ने ठीक ही कहा था कि - " ये मुसल्मान नहीं, वरन् उनके सरकारी आका हैं, जो कांग्रेस का विरोध करते हैं । "[26] लार्ड डफरिन ने 1888 में कांग्रेस की निन्दा करते हुए कहा कि - " मुझे उसका भारतीय जनता के प्रतिनिधित्व का दावा बेबुनियाद लगता है । कांग्रेस तो एक ऐसे नगण्य अल्पमत का प्रतिनिधित्व करती है, जिसको एक शानदार और विभिन्न रूपों वाले साम्राज्य के शासन की बागडोर हर्गिज नहीं दी जा सकती ।"[27]

एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम का उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य का पक्ष-पोषण नहीं, वरन् ब्रिटिश शासन के विरूद्ध भारतीय जनता को वैधानिक रूप से संगठित करना था । इसका प्रमाण यह हैकि इन्होनें 1888 के कांग्रेस अधिवेशन में जनता को " एन्टीकार्नलीग" की पद्धति पर ब्रिटिश शासन के विरूद्ध आन्दोलन करने के

---

25. डा० डी०सी० चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एंड कांस्टिट्यूशनल, पृष्ठ-19
26. राम गोपाल, इण्डियन पोलिटिक्स, पृष्ठ - 114.

आह्वान करते हुए यह कहा था कि " हमारे शिक्षित भारतीयों ने पृथक-पृथक रूप से, हमारे समाचार पत्रों ने व्यापक रूप से तथा हमारी राष्ट्रीय महासभा के समस्त प्रतिनिधियों ने एक स्वर से सरकार को समझाने की चेष्टा की है। परन्तु सरकार ने जैसा कि प्रत्येक स्वेच्छाचारी सरकार का रवैया होता है, समझने से इन्कार कर दिया । अब हमारा यह कार्य है कि हम देश में अलख जगायें, ताकि हम भारतवासी, जिसने भारतमाता का दूध पिया है, हमारा साथी, सहयोगी तथा सहायक बन जाये और यदि आवश्यकता पड़े, तो काल्डेन और उसके बहादुर साथियों की भाँति आजादी, न्याय तथा अपने अधिकारों के लिए जो महासंग्राम हम छेड़ने जा रहे हैं, उसकावह सैनिक बन जाये ।[28]

सन् 1885 में तिलक ने एक अवसर पर कहा था, भाट की तरह गुणगान करने से स्वतंत्रता नहीं मिल जायेगी, स्वतंत्रता के लिए शिवाजी और बाजी राव की भाँति साहसिक कार्य करने पड़ेंगे ।[29] इसके विपरीत दादाभाई नौरोजी कहा करते थे कि - " मैं आशा करता हूँ कि वह दिन भी अधिक दूर नहीं है जब कि अंग्रेज स्वेच्छा से भारत से चले जायेंगे ।"[30] लाला लाजपत राय जिन्हें अपनी पुस्तक "यंग इंडिया" में कांग्रेस की स्थापना के अभयदीप सिद्धान्त । Safety Valve Theory । का प्रतिपादन किया है, एलेन

---

28. राम गोपाल, इण्डियन पोलटिक्स, पृष्ठ- 109,
29. वही, पृष्ठ - 134,

ऑक्टेवियन ह्यूम के उच्च आदर्श को स्वीकार करते हुए लिखते हैं कि " ह्यूम स्वतंत्रता के पुजारी थे, और उनका हृदय भारत की निर्धनता तथा दुर्दशा पर रोता था ।[31]

कांग्रेस की प्रगति के सम्बन्ध में यह कहा कि - " जिस प्रकार एक बड़ी नदी का मूल एक छोटे से सोते से होता है, उसी प्रकार महान संस्थाओं का प्रारम्भ भी बहुत साधारण होता है । जीवन के प्रारम्भ में वह अत्यन्त वेग से दौड़ती हैं, परन्तु ज्यों-ज्यों व्यापक होती हैं, त्यों-त्यों उनमें सहायक नदियाँ मिलती जाती हैं तथा वह उसकी अधिकाधिक सम्पन्न बनाती जाती हैं । " वही उदाहरण हमारी कांग्रेस पर भी लागू होता है । [32] ब्रिटिश शासन द्वारा स्थापित भारत की राजनीतिक एकता सामान्य अधीनता की एकता थी, लेकिन उसने सामान्य राष्ट्रीयता की एकता को जन्म दिया । अखण्ड और स्वतंत्र भारत का विचार इसी राजनीतिक एकता का ही परिणाम था ।[33]

सन् 1892 के सुधार अधिनियम की त्रुटियों के कारण परिषदों के माध्यम से राष्ट्रीय उत्थान का कार्य करने की आशा धूमिल हो गयी और सन् 1893 के अधिवेशन में राष्ट्रीय कांग्रेस ने अधिनियम के प्रति असन्तोष व्यक्त किया । अब कांग्रेस में एक ऐसे वर्ग का जन्म हुआ जो क्रमिक सुधार के

---

31. लाला लाजपतराय, यंग इंडिया, पृष्ठ - 133,
32. डा० पट्टाभिसीता रमय्या, द हिस्ट्री ऑफ दि इंडियन नेशनल कांग्रेस, पृष्ठ - 21

स्थान पर आधारभूत परिवर्तनों की दिशा में विचार करने लगा ।[34] सन् 1893 से 1905 के मध्य विदेशों में घटित घटनाओं का भारतीयों पर भी प्रभाव पड़ा, उसी के सम्बन्ध में श्री गुरुमुख निहालसिंह लिखते हैं - " मैजिनी के जीवन और उसकी कृतियों पर भारतीय भाषाओं में पुस्तक लिखी गयीं, अनुवाद किये गये और भारत के राष्ट्रीय नेताओं ने अपने देशवासियों में स्वदेश प्रेम जागृत करने के लिए इटली केउदाहरण से काम लिया ।[35]

ब्रिटिश सरकार का सन् 1892 का भारतीय कौंसिल अधिनियम सरकार की किसी ईमानदारी की भावना से लागू नहीं किया गया था, वरन् कुछ विवशताओं के फलस्वरूप किया गया था । - - इस अधिनियम के द्वारा प्रथम बार भारतीय शासन में व्यवस्थापिका के सम्बन्ध में निर्वाचन के सिद्धान्त को अपनाया गया, इसके साथ ही कार्य- पालिका से प्रश्न पूछने तथा शासन की परिषदों में विस्तार किया गया तथा बजट पर वाद-विवाद करने का भी अवसर प्रदान किया गया । परन्तु गवर्नर जनरल और गवर्नरों को इतने व्यापक अधिकार प्राप्त थे, तथा इन परिषदों में शासन द्वारा नियुक्त तथा नामांकित सदस्यों की संख्या इतनी अधिक थी कि गैर-सरकारी सदस्यों की आवाज को वह प्रभावशून्य समझते थे ।[36] प्रत्युत् ब्रिटिश सरकार का

---

34. एनी बेसेन्ट - हाऊ इन्डिया राट फॉर फ्रीडम , पृष्ठ - 277

35. गुरुमुख निहाल सिंह, लैंडमार्क्स इन इंडियन कॉंस्टिट्यूशनल एण्ड नेशनल डेवलपमेंट, पृष्ठ - 348

36. डा० विनेश चन्द्र चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एण्ड कॉंस्टिट्यूशनल डेवलपमेन्ट, पृष्ठ - 25+26 ,

रवैया प्रतिक्रियावादी सिद्ध होने लगा था । सन् 1892 के भारतीय परिषद अधिनियम के अन्तर्गत भी बहुत रूखाई दर्शायी गयी । नौकरशाही का व्यवहार भी प्रतिगामी होता गया । इसके परिणामस्वरूप भारत के राष्ट्रीय नेतृत्व के अन्तर्गत नयी प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होने लगीं । युवा पीढ़ियों के अनेक नेता कांग्रेस की आवेदनों, प्रार्थनाओं में विश्वास करने की नीति का विरोध करने लगे । - - उनके कार्यकलापों, नीतियों तथा गतिविधियों ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में उस नयी प्रवृत्ति को जन्म दिया, जिसे उग्रवाद (extremism) या उग्र राष्ट्रीयता का नाम दिया जाता है ।

जिन आशाओं तथा विश्वासों को लेकर कांग्रेस का जन्म हुआ था और जिन साधनों के द्वारा कांग्रेस संगठन के आरम्भिक नेता राष्ट्रीय आन्दोलन का संचालन कर रहे थे, उनके प्रति ब्रिटिश शासन का रूख न केवल उदासीनता पूर्ण ही रहा, वरन् प्रतिगामी भी होने लगा । राष्ट्रीय चेतना को दबाना तथा शासन नीतियों में और अधिक कठोरता तथा स्वेच्छाचारिता लाना ब्रिटिश शासकों की नीति का अंग होता गया ।[37]

मुंशी अवध बिहारी लाल सरकारी संरक्षण प्राप्त इस उत्तरोत्तर वृद्धि पाती कुप्रथा की ओर आकृष्ट हुए । 8 अप्रैल, सन् 1892 को एक व्यक्ति ने इलाहाबाद में राजस्व परिषद के एक वरिष्ठ अधिकारी ... रीड0 को यह सूचना दी कि मुंशी अवध बिहारी लाल का सम्बन्ध एक ऐसी

---

37. डा0 दिनेश चन्द्र चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉन्सटिट्यूशनल डेवलपमेन्ट, पृष्ठ - 47,

संस्था से है जिसका उद्देश्य सरकार की चुंगीकर तथा अफीम सम्बन्धी नीति की निन्दा करना है । ऐसा प्रचार सार्वजनिक रूप से इलाहाबाद के चौक तथा अन्य स्थानों में किया जाने लगा, जो कि इस संस्था का प्रमुख कार्य था । कांग्रेस के अस्थाई कार्यकर्ता मुंशी अवध बिहारी लाल जी थे । तथा पंजाब और उसके अन्य प्रान्तों में भी कांग्रेस को लोकप्रियता प्रदान करने के लिए प्रचारार्थ जाने के लिए अवध बिहारी लाल को कांग्रेस से शुल्क भी प्राप्त हुआ था । अप्रैल के महीने ही में प्रान्तीय सरकार तीन नवयुवकों को अल्पकालिक उप-जिलाधीशों के पद पर नियुक्त करती थी । इस पद के लिए मुंशी अवध बिहारी लाल प्रार्थी थे । उनकी नियुक्ति न होने पर इलाहाबाद में यह विचार प्रसारित हो गया कि अवध बिहारी लाल जी के कांग्रेस कार्य तथा शराब-बन्दी के प्रचार में उनके भाषणों ने ही उनकी नियुक्ति में बाधा पहुँचायी है । ब्रिटिश संसद के एक सदस्य डब्ल्यू० एस० केन ने इस बात का आरोप प्रान्तीय सरकार पर लगाया । इस विषय पर भारत सचिव की ओर से जाँच हुई, परन्तु इस आरोप को जे० आर० रीड ने पूर्णत: तथ्यहीन बताया । यह स्वीकार भी कर लिया जाये कि सरकार ने नियुक्ति के सम्बन्ध में मुंशी अवध बिहारी लाल के राजनीतिक एवं शराबबन्दी के कार्य को कोई महत्व न दिया हो, परन्तु इस कार्य को सरकारी पदाधिकारियों ने आपत्तिजनक माना था । स्वयं वह यह स्वीकार करते हैं कि उनकी दृष्टि में मादक द्रव्य के व्यवहार के विरुद्ध प्रचार करना तथा इस सम्बन्ध में सरकारी नीति की निन्दा करना,

---

दो विभिन्न वस्तुऐं थीं । सरकार की नीति का कटु आलोचक सरकारी पदाधिकारी के रूप में हानिकर हो सकता था ।[38]

उदारवादी नेता यद्यपि क्रमिक वैधानिक सुधारों में विश्वास करते थे, लेकिन इन वैधानिक सुधारों का अन्तिम लक्ष्य भारतीयों के लिए स्वशासन की प्राप्ति थी । श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने कांग्रेस के द्वितीय अधिवेशन में यह कहा था कि -

" स्वशासन एक प्राकृतिक देय है, ईश्वरीय शक्ति की कामना है । प्रत्येक राष्ट्र को स्वयं ही अपने भाग्य का निर्णय करना चाहिए । यही प्रकृति का नियम है । "[39]

जुलाई , 1892 में सरकारी न्याय विधान भी समाचार पत्रों में आलोचना का कटु विषय था । " हालात् -ए-हिन्द" इस विषय में अत्यन्त प्रखर था । "हालात्-ए-हिन्द" ने मार्च, 1891 के अपने एक अंक में उन व्यक्तियों की क्षतिपूर्ति करने का प्रस्ताव रक्खा, जिन्हें कि गलती से दण्ड प्राप्त हो जाता था । मुकदमें की प्रतीक्षा करते हुए अभियुक्त के प्रति दुर्व्यवहार की शिकायत भी इसी पत्र ने की ।[40]

---

38. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स-नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली दिसम्बर, सन् 1892, 103-107 ए

39. एनी बेसेन्ट, हाऊ इंडिया राट् फॉर फ्रीडम - पृष्ठ - 26

40. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली जुलाई , 1892, 227-229 बी ,

" हालात-ए-हिन्द" समाचार पत्र के विषय में जिलाधीश का यह मत था कि भाषा की अभिव्यक्ति निश्चित रूप से खराब थी और उसका राजनीति से विशेष सम्बन्ध नहीं था । वह मुख्यत: स्थानीय घटनाओं से, और सरकारी अधिकारियों के चरित्र एवं व्यवहार के लम्बे और घातक लेखों से लिप्त थी ।

Jone definitely bad, does not occupy much with politics, but is chiefly concerned with local events and indulge in long and offensive articles regarding the character and conduct of the government officials.[41]

" हालात्-ए-हिन्द" का अंग्रेजी शासन के विषय में यह विचार था कि जनता इस शासन के असह्य भार के नीचे विकल होती जा रही थी । और अब शासनकर्ता का परिवर्तन आवश्यक हो गया था ।[42]

कांग्रेस के जन्म के 7 वर्ष बाद सन् 1892 के भारतीय परिषद अधिनियम ने भारतवासियों को शासन में भाग लेने का कोई भी विशेष अवसर नहीं दिया । यहाँ तक कि उदारवादी नेता भी ब्रिटिश सरकार की ऐसी नीति से असन्तुष्ट हो गये और वैधानिक साधनों से अपनी मांगें मनवाने के तरीके पर से उनका विश्वास डगमगाने लगा । ब्रिटिश सरकार ने दमन की

---

41. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली जुलाई, 1892, 228-229 बी,

42. वही, 122-124 बी, जून 1893 ।

नीति अपनाना शुरू किया ।[43] भारत को यह सरकार विरासत में मिली, यह कई दृष्टियों से सही है, जब भारत की अधिकांश जनता सरकार के महत्व को समझती थी । यह बात उतनी सामान्य नहीं है, जितनी की लगती है, क्योंकि ऐसे अनेक नये राज्यों को बहुत क्षति उठानी पड़ी, जिनकी आम जनता को सरकार के महत्व का ज्ञान ही नहीं था । यह सत्य है कि भारत के देहात-हजारों बिखरे गाँव जहाँ मिट्टी के मकान है, लोग मिट्टी में ही रहते हैं, जहाँ से दूसरे गांवों और कस्बों में जाने हेतु सिर्फ पगडंडियाँ है - जहाँ के लोगों का ब्रिटिश सरकार के साथ निकट का वास्ता भी नहीं था।[44]

धार्मिक पुर्नजागरण ने भारतीय राष्ट्रीय चेतना की उत्पत्ति में भी महान्, योगदान दिया था, तथापि राष्ट्रीयता के विकास में पाश्चात्य संस्कृति शिक्षा तथा साहित्य का प्रभाव बढ़ने लगा था । - - स्वामी विवेकानन्द ने सन् 1893 से शिकागों के धार्मिक सम्मेलन में हिन्दू धर्म की महानता सिद्ध करके संसार को मोहित कर लिया था ।[45]

सन् 1861 के " इण्डियन कौंसिल एक्ट" के संशोधन हेतु बिल को जनता की बढ़ती हुई निरन्तर माँग के फलस्वरूप प्रस्तुत किया गया था ।

---

43. डा० गंगादत्त तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास पृष्ठ - 61

44. मौरिस जोन्स, द गर्वनरमेंट एण्ड पोलिटिक्स आफ इंडिया, पृष्ठ - 3

45. डा० गंगादत्त तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, पृष्ठ 60

इंण्डियन कौंसिल एक्ट" बिल के अन्तर्गत जो भी निर्णय लिये गये थे, वह किसी को भी सन्तोष प्रदान नहीं कर सके थे । " हिन्दी प्रदीप " का यह अनुभव था कि उन्होंने रोटी माँगी थी, उसके स्थान पर उनको पत्थर दिया गया है । यद्यपि व्यवस्थापिका सभाओं के सदस्यों में वृद्धि अवश्य कर दी गयी थी, परन्तु अभी भी उनको मनोनीत करने का अधिकार ही मात्र प्रदान किया गया गया था । यह सदस्य जनता के सच्चे प्रतिनिधि नहीं हो सकते थे, तथा व्यवस्थापिका सभाएँ तब तक जनता के लिए व्यर्थ ही सिद्ध होगीं जब तक कि उसके सच्चे प्रतिनिधियों को उनमें प्रवेश करनेका अवसर प्रदान नहीं होता है ।[46] लोक सेवा आयोग के निर्णयों से संपादक पूर्णत: सन्तुष्ट नहीं थे । जनता का जो कुछ भी प्राप्य बना था, वह इलाहाबाद के प्रयाग समाचार के अनुसार सरकार की उदारता के परिणाम स्वरूप नहीं था, वरन् वह कांग्रेस आन्दोलन के फलस्वरूप था ।[47] इस प्रकार अपीली अदालतों के द्वारा लगान तथा फौजदारी सम्बन्धी अधिकांश अपीलों को संक्षिप्त रूप से खारिज कर देने के कारण अपील करने वालों को जो असुविधा होती थी, उससे उत्पन्न असन्तोष की ओर पत्र में संकेत किया गया । इसी प्रकार पुलिस की प्रबन्ध भी आलोचना का प्रश्नरहा ।[48]

इलाहाबाद में प्रान्तीय व्यवस्थपिका सभाओं में प्रतिनिधित्व करने के अतिरिक्त, सार्वजनिक सभाओं के माध्यम से जनता की आवाज सरकारी

---

46. होम पब्लिक प्रासीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जून, 1893, 122-124 बी ।
47. वही, जून, 1893 122-124 बी ।
48. वही, जून, 1893, 122-124 बी ।

अधिकारियों तक पहुँचाने का प्रयत्न भी होता रहा । इसी प्रकार की एक सभा 13 अगस्त, 1894 को भारत तथा इंग्लैण्ड में इण्डियन सिविल सर्विस" की माँग के समर्थन हेतु हुई । यह सभा इलाहाबाद के कायस्थ पाठशाला के प्रांगण में आयोजित हुई थी । पंडित बिशम्भरनाथ इस सभा के सदस्य थे । राजा रामपालसिंह द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव में भारत सचिव का था, इंग्लैण्ड में एक साथ परीक्षाओं के विषय पर किये गये निर्णयों पर असंतुष्टि प्रकट की गई थी । द्वितीय प्रस्ताव में यह स्पष्ट किया गया था कि उन दिनों जो प्रातीय सेवाओं को आरम्भ किया गया था वह भारतीय आकांक्षाओं के स्तर की नहीं थी । इलाहाबाद के श्री रोशनलाल ने इस प्रस्ताव को प्रस्तुत किया और मुंशी अवध बिहारी लाल ने इसका समर्थन किया । सभा में भाग लेने वाले अन्य प्रमुख नागरिकों में पंडित लक्ष्मी नारायण व्यास एवं बाबू रतनचन्द्र थे । प्रस्ताव पश्चिमोत्तर प्रान्त के प्रमुख सचिव के पास प्रेषित किए गए । जिनके माध्यम से वह भारत सचिव के सम्मुख उपस्थित हो सकें ।[49]

इलाहाबाद के चौथे अधिवेशन में कांग्रेस को अकथनीय कठिनाईयाँ हुई । उसे पण्डाल तक के लिए जमीन नहीं मिली । श्रीमती एनी बेसेन्ट ने अपनी कांग्रेस सम्बन्धी पुस्तक में एक ऐसे व्यक्ति का उदाहरण दिया है, जो

---

49. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स-नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया-नयी दिल्ली, नवम्बर 1894, 20-25 ।

अपने जिला-अफसर की इच्छा के विरूद्ध मद्रास के अधिवेशन में शामिल हुआ, उससे शांति रक्षा के नाम पर 20,000 की जमानत माँगी गयी थी । स्थिति तेजी से खराब होती जा रही थी ।[50] इलाहाबाद में आयोजित कांग्रेस के चौथे अधिवेशन के प्रतिनिधि ने लार्ड रिपन का यह विचार उद्धत किया था - " महारानी का घोषणपत्र कोई सुलहनामा नहीं है, न वह कोई राजनैतिक लेख ही है । बल्कि वह तो सरकार के सिद्धान्तों का घोषणा पत्र है ।"[51] भारत में ब्रिटिश शासन का इतिहास दमन और सुधार की एक लम्बी कहानी है । जब-जब कुछ सुधार हुआ, उससे पहले दमन भी अवश्य हुआ । जब-जब जनता में कुछ आन्दोलन आरम्भ हुआ, तब-तब जोरों का दमन-चक्र भी चला। और उसमें यह नीति रक्खी गई कि जब तक लाग आन्दोलन करते-करते बिल्कुल थक न जायें, तब तक उनकी माँगों पर कोई ध्यान न दिया जाये ।[52]

इलाहाबाद में होने वाली सन् 1892 की कांग्रेस में मुद्रा-नीति का प्रश्न उठा, तब वाचा ने सन् 1893 में जर्मनी में चाँदी के सिक्कों का प्रचलन बन्द कर दिये जाने का परिणाम, होम चार्जेज का हिन्दुस्तान पर पड़ने वाला असर, 1890 का शेरमैन एक्ट और सुवर्णमान से होने वाले सर्वसाधारण भारतीयों के हितों के सर्वनाश का स्पष्टीकरण किया । भारत की राज्य नियंत्रित वेश्यावृत्ति को 9वें अधिवेशन में आड़े हाथों लिया गया ।[53]

---

50. बी पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 64
51. वही, पृष्ठ - 58,
52. वही, पृष्ठ - 63 ।
53. वही ,पृष्ठ - 84,

कांग्रेस ने अपने प्रारम्भिक काल में ही थोड़े - थोड़े समय के लिए होने वाले जमीन के बन्दोबस्त पर ध्यान दिया, जिसमें सदा लगान वृद्धि होती रहने से रैयत को बड़ी कठिनाई होती है । इलाहाबाद में सन् 1888 होने वाले कांग्रेस के चौथे अधिवेशन में अपनी स्थायी समिति को यह कार्य सौंपा गया कि इस सम्बन्ध में विचार करके सन् 1889 के अधिवेशन में अपनी रिपोर्ट पेश करे । सन् 1889 में बाबू बैकुण्ठ नाथ सेन ने इसका उल्लेख करते हुए बताया कि सन् 1860 में दुर्भिक्ष के कारणों की जाँच के लिए जो कमीशन नियुक्त हुआ था, उसने दायमी बन्दोबस्त की सिफारिश की थी । जिसे भारत मंत्री ने 1892 केअपने खरीते में मंजूर कर लिया था । डा० एनी बेसेन्ट ने अपनी पुस्तक में यह मनोरंजक उदाहरण दिया है - " बर्तन में पानी तो उतना ही है जितना कि पहले था, परन्तु अब उसमें पानी निकलने के छः छेद हो गये है, जबकि पहले सिर्फ एक ही छेद था ।"[54]

सन् 1892 में कांग्रेस ने लगान को निश्चित और स्थायी करने के लिए कहा, " जिससे कि देश की कृषि को उन्नत करने के लिए पूंजीपति और मजदूर मिलकर कार्य कर सकें । " इसके अतिरिक्त कृषि बैकों की स्थापना की सिफारिश की गई ।[55] कांग्रेस के तीसरे और पाँचवे अधिवेशन के सभापति का प्रस्ताव उमेश चन्द्र बनर्जी ने उपस्थित किया था, और श्री उमेश चन्द्र बनर्जी स्वयं

---

54. बी० पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास ,पृष्ठ - 34,

55. वही, पृष्ठ - 35,

इलाहाबाद सन् 1892 के आठवें अधिवेशन में सभापति नियुक्त हुए थे। उमेश चन्द्र बनर्जी ने इलाहाबाद में अपने भाषण में वह कारण बताये थे, जिनसे कांग्रेस ने अपने को सामाजिक प्रश्नों से अलग रक्खा था। राजनैतिक आन्दोलन के सम्बन्ध में उनके भाषण में एक अंश है -

" क्या हमारी आवाज नहीं सुनी जायेगी " और सचमुच वह भी इसलिए कि हमारी आवाज के साथ यूरोपियन लोगों की आवाज नहीं मिली हुई है ? यूरोपियन प्रजाजन जितना कुछ हमारा समर्थन करेगें उसका हम खुले दिल से स्वागत करेगें, जरूर स्वागत करेगें, परन्तु इसके अतिरिक्त भी हमारी आवाज पर क्यों नफरत की जाती है ? आखिर हम ही तो हैं जिन्हें तकलीफ भुगतनी पड़ती है, नुकसान सहना पड़ता है। और जब हम अपने दुखों के लिए पुकार मचाते हैं तो हमसे यह कहा जाता है - हम तुम्हारी आवाज नहीं सुनेगें। तुम्हारा आन्दोलन तो फिजूल है, घृणा और कमीनेपन से भरा हुआ है और इसलिए हम तुम्हारी बातों पर ध्यान नहीं देगें।"[56]

सन् 1896-1897 में दक्षिण भारत में भंयकर अकाल फैला, इसके निवारण हेतु सरकार ने कोई भी अभिरूचि नहीं दिखायी। सन् 1899 सन् 1900 में वर्षा की कमी के कारण पुनः अकाल फैला, सरकार ने इस बार भी वही रवैया अपनाया। सन् 1897 में तिलक को राजद्रोह के अपराध में जेल का दण्ड दिया गया। उन्हें प्रिवीकौंसिल में अपील करने तक की आज्ञा नहीं दी गयी।

56.
बी पट्टाभिसीता रमैय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 9।

तिलक का केवल यही अपराध था, कि उन्होंने बम्बई में प्लेग फैलने पर उसे रोकने में सरकार की ढुलमुल नीति के विरूद्ध "केसरी" पत्रिका में लेख लिखा था । ब्रिटिश सरकार की दमनकारी नीतियाँ सर्वत्र फैल रही थीं, अतः भारतीय नेताओं में असन्तोष बढ़ता गया और उनके आन्दोलन में उग्रता की मात्रा बढ़ती गयी ।[57] सन् 1898 में लार्ड कर्जन को भारत का वाइसराय नियुक्त किया गया, वह एक कुशल प्रशासक अवश्य था, परन्तु जनहित को उपेक्षित रखने वाला कुशल प्रशासन उत्तम शासन नहीं हो सकता । कर्जन भारतीयों से घृणा करता था । लार्ड कर्जन ने अपने शासन काल में अनेक ऐसे कारनामें किये जिन्हें कोई भी स्वाभिमानी देशभक्त सहन नहीं कर सकता था । इसमें उसका प्रथम कार्य था - कलकत्ता कार्पोरेशन एक्ट सन् 1899 जिसके अनुसार कलकत्ता निगम के सदस्यों की संख्या 50 से घटाकर मात्र 25 कर दी गयी थी । इसका उद्देश्य भारतवासियों के स्थानीय स्वायत्त शासन के अधिकार को कम करना था । लार्ड कर्जन का दूसरा कार्य था सन् 1904 का भारतीय विश्वविधालय अधिनियम । जिसके अनुसार भारतीय विश्व-विधालयों की स्वायत्तता कम करके उनके ऊपर सरकारी नियंत्रण की मात्रा बढ़ा दी गयी।[58]

सन् 1897 में " इण्डियन पीनल कोड" भी पास किया गया था जिसमें राजद्रोहात्मक भाषणों तथा कार्यों पर नियन्त्रण रखने के लिए

---

57. डा० डी० सी० चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कांस्टिट्यूशनल पृष्ठ - 48

58. वही, पृष्ठ - 62 ।

संशोधन किये गये थे । ब्रिटिश शासन ने उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रान्त के मुसलमानो को कांग्रेस से अलग रहने के लिए बाध्य ही किया, तथा शिक्षित हिन्दुओं में भी मतभेद उत्पन्न करने के प्रयत्न किए । इसके विपरीत शासन की शत्रुता ने कांग्रेस की लोकप्रियता में वृद्धि ही की ।[59] सन् 1885 से 1905 तक कांग्रेस द्वारा अपने मंच से प्रमुख रूप से निम्न प्रस्ताव पारित किये गये -

[1] भारतीय शासन की जाँच करने के लिए सरकार द्वारा एक रॉयल कमीशन " नियुक्त किया जाये ।

[2] भारत मंत्री तथा भारत परिषद के पद को समाप्त कर दिया जाये ।

[3] केन्द्रीय तथा प्रान्तीय परिषदों का विस्तार तथा सुधार किया। जाये, उनको प्रश्न पूछने , बजट को पास करने तथा बहुमत के आधार पर निर्णय करने की प्रथा को जारी किया जाये ।

[4] नागरिक सेवा प्रतियोगिता परीक्षा भारत तथा इंग्लैण्ड, दोनों ही देशों में एक साथ हो, तथा इसमें भाग लेने वाले परीक्षार्थीओं की आयु को बढ़ा दिया जाये ।

[5] भारत के सैनिक व्यय में कमी की जाये तथा ब्रिटिश सेना की संस्था में कमी की जाये ।

---

59. डा० पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट आफ इंडिया एन्ड इण्डियन कॉंस्टीट्यूशन, पृष्ठ - 24

॥6॥ इंग्लैण्ड से आने वाले कपड़े के आयात कर, जो कि लार्ड लिटन के शासन काल में हटा लिया गया था, उसे पुनः लगा दिया जाये ।[60]

॥7॥ पुराने उद्योगों को पुनर्जीवित किया जाये तथा नये उद्योग कुछ और स्थापित किये जायें, ताकि कृषि पर दबाव कम हो, और बेरोजगारी दूर हो ।

॥8॥ स्थानीय संस्थाओं को और अधिक शक्तियाँ प्रदान की जायें और उन पर सरकारी नियंत्रण कम किया जाये ।

॥9॥ नमक पर लगाया गया कर कम किया जाये ।

॥10॥ ऐसे कानून भी बनाये जायें, जो कि जमींदार किसानों का शोषण न कर सके ।[61]

॥11॥ विदेशों में रहने वाले भारतीयों के हितों की रक्षा भीकी जाये ।

॥12॥ न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग कर दिया जाये ।

॥13॥ प्रेस पर लगाये गये नियंत्रण अथवा प्रतिबन्ध को हटा लिया जाये तथा समाचार पत्रों को अधिक स्वतंत्रता प्रदान की जाये ।

॥14॥ न्यायलयों में जूरी की प्रथा को अपनाया जाये, तथा उनके द्वारा दिये निर्णयों को मान्यता प्रदान की जाये ।

---

60. डा० पी० आर. जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एण्ड इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन , पृष्ठ - 24 ।

61. डा० पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन, पृष्ठ - 24

॥15॥ कृषि बैंकों को खोला जाये , जहाँ से किसानों को कम ब्याज की दर पर ऋण प्राप्त हो सके ।

॥16॥ तृतीय दर्जे के रेल यात्रियों को अधिकाधिक सुविधायें प्रदान की जायें ।

॥17॥ भारत की निर्धनता के कारणों का पता लगाकर उन्हें दूर किया जायें ।

॥18॥ देश में उद्योग सम्बन्धी तथा टेक्नीकल स्कूल तथा कालिज खोले जाये ।

॥19॥ भारत में सैनिक शिक्षा देने के लिए कालिज भी खोले जायें।[62]

सन् 1885 से प्रारम्भिक तीन वर्षों में कांग्रेस के प्रति शासन का दृष्टिकोण सहानुभूतिपूर्ण रहा और इसे सरकार का सहयोग प्राप्त होता रहा । कांग्रेस के द्वितीय अधिवेशन में सम्मिलित प्रतिनिधियों का स्वागत स्वयं लार्ड डफरिन ने किया था और तृतीय अधिवेशन के अवसर पर मद्रास के गर्वनर ने राजभवन में प्रतिनिधियों का सम्मान किया था और समिति की मदद की थी । परन्तु जैसे-जैसे कांग्रेस के प्रति ब्रिटिश सरकार के रूख में परिवर्तन होने लगा। स्वयं लार्ड डफरिन, जिन्होनें कांग्रेस को राजनीतिक रूप प्रदान किया था, इसके कार्यों को शंका की दृष्टि से देखने लगे । [63]

---

62. डा0 पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन, पृष्ठ - 26,

63. वही , पृष्ठ-22 ,

मिस्टर एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापकों में प्रमुख थे । सन् 1885 में उन्होंनें अपने तथा श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी के संयुक्त हस्ताक्षरों से भारत के प्रमुख सार्वजनिक व्यक्तियों का एक सम्मेलन बुलाया, जो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन था। वह कांग्रेस के प्रथम महामंत्री थे । और 1906 तक लगातार उसी पद पर वह प्रतिष्ठित भी बने रहे । कांग्रेस के प्रति श्री एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम की सेवाओं के ही कारण ह्यूम को " भारतीय कांग्रेस के पिता" के नाम से पुकारा जाता है ।[64]

उग्र राष्ट्रीयता का उदय न तो आकस्मिक था, और न ही अन्य परिस्थितियों से अलग एक पृथक परिवर्तन था, वरन् वह तो विभिन्न घटनाओं परिस्थितियों और शक्तियों का स्वाभाविक परिणाम था । सन् 1892 का भारतीय परिषद अधिनियम " स्वयं में अन्तर्निहित कमियों और त्रुटियों के कारण राष्ट्रीय कांग्रेस या सामान्य भारतीयों को सन्तुष्ट नहीं कर सका था । सन् 1896-97 का अकाल सबसे अधिक भीषण दुर्भिक्ष था जिसका प्रभाव 6 करोड आबादी और 70,000 वर्गमील क्षेत्र पर पड़ा । [65] सन् 1898 में लार्ड कर्जन जो उस समय भारत के वाइसराय नियुक्त किये गये थे, उन्होंने यह घोषणा की थी," भारतवासी एक जनसमूह नहीं है, न ही उनकी एक भाषा है, न ही एक जाति, न ही एक धर्म वह एक महाद्वीप या एक साम्राज्य तक नहीं है, एक विश्व तो दूर रहा ।" इसके साथ ही लार्ड कर्जन यूरोपि...

---

64. डा0 पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट आफ इंडिया एन्ड इंडियन कॉस्टीट्यूशन- पृष्ठ - 30 ।

65. वही, पृष्ठ - 39 ,

को भारतवासियों से हर दृष्टि से उच्च मानता था । [66]

जूरी के अधिकार कम करने और न्याय एवं शासन कार्य सम्मिलित रखने के पुराने घाव अभी हरे ही थे - और उनमें सुधार होने के कोई लक्षण दिखाई नहीं दे रहे थे कि सन् 1897 में एक नया घाव और कर दिया गया ।[67] उसके प्रकाश में सन् 1898 का तृतीय रेग्युलेशन । बंगाल। सन् 1919 का दूसरा रेग्युलेशन । मद्रास। सन् 1927 का पच्चीसवां रेग्युलेशन । बम्बई। सामने आये, जिनके मातहत हर किसी को बिना मुकदमा चलाये ही जलावतन किया जा सकता था । सरदार नातू पर इस अस्त्र का प्रयोग किया गया जो सन् 1817 के कांग्रेस अधिवेशन होने के समय 5 महीने से अधिक जेल में थे । कांग्रेस यह देखकर दंग रह गई, क्योंकि गिरफ्तारी से पहले उनको वैसा कोई भी नोटिस नहीं दिया गया था, जो कि इन रेग्युलेशनों के मातहत देना जरूरी था ।

सन् 1897 का साल हर भाँति से प्रतिक्रिया का साक्ष था । लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक को राजद्रोह के अपराध में ऐसे लेख के प्रकाशित करने पर सजा दी गई थी जो कि स्वयं बाल गंगाधर तिलक के लिखे हुए नहीं थे । पूना में भी ताजीरी पुलिस तैनात की गई और कानून की राजद्रोह । दफा 124ए। तथा खतरे की झूठी अफवाहें फैलाने सम्बन्धी । दफा 506। धाराओं में ऐसा

---

66. दिनेश चन्द्र चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एंड कॉन्स्टीट्यूशनल डेवलपमेंट, पृष्ठ - 49.

67. बी० पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 34 ।

संशोधन किया गया जिससे वह और भी अधिक कठोर हो गई । कांग्रेस ने सर्वसाधारण पर किये जाने वाले इस आक्रमण का विधिवत विरोध किया ।[68]

आधुनिक भारत के इतिहास में 19वीं शताब्दी का उत्तरार्ध बहुत ही महत्वपूर्ण युग है । इस युग में भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने अपना पूर्ण राजनीतिक आधिपत्य स्थापित कर लिया था । ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को भारतीय संस्कृति, धर्म , भाषा, परम्पराओं आदि के बनाये रखने में कोई अभिरूचि नहीं थीं, वह भारत के राजनीतिक , आर्थिक तथा सांस्कृतिक शोषण में ही अपना हित समझते रहे थे । [69]

सन् 1898 में जब प्रमुख हिन्दुओं का एक प्रार्थना पत्र हिन्दी के समर्थन में सरकार के सम्मुख प्रस्तुत हुआ तो अलीगढ़ के उस वृद्धनेता ने इलाहाबाद की उर्दू संरक्षण समिति का पुनरोद्धार किया । और उस प्रार्थना-पत्र के विरूद्ध अपनी संस्था के पत्र में छपने के लिए एक लेख प्रेषित किया जो उनकी मृत्यु के कुछ ही पूर्व छपा था ।

उनके उपरान्त भी उनके प्रभाव ने इलाहाबाद के मुसलमानों को दो वर्गों में विभाजित कर दिया । सरकार, ऐंग्लो इण्डियन अधिकारियों एवं पत्रों का यह मुख्य कार्य था कि वह मुसलमानों के विशेष समूह को कांग्रेस आन्दोलन से अलग रखें ।

---

68. बी. पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 34,

69. डी0 सी0 चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉन्स्टीट्यूशनल डेवलेपमेन्ट, पृष्ठ - 28,

इलाहाबाद के " पायनियर " में इस आशय के पत्रों को अवश्य स्थान प्राप्त होता रहा था, जिसमें मुसलमानों के द्वारा कांग्रेस का विरोध किया गया हो । ऐसा ही एक पत्र मौलवी मुश्ताक हुसैन विकास-उल-मुल्क के द्वारा प्रेषित किया हुआ " पॉयनियर" समाचार पत्र में प्रकाशित हुआ, जिसमें मुसलमानों का कांग्रेस से मतभेद इस आधार पर प्रकट किया गया था कि कांग्रेस आन्दोलन अराजभक्ति का सन्देश देता है । उधर मुसलमान किसी भी सरकार के विश्वासी बने रहना चाहते थे । इस पत्र में "इंडियन पीपुल्स" को कांग्रेस के समर्थन में विचार प्रकाशित कर अपनी कटु प्रतिक्रिया व्यक्त करने को बाध्य किया ।[70]

19वीं सदी के धार्मिक एवं सामाजिक सुधार आन्दोलन राष्ट्रीयता के विकास में बहुत सहायक सिद्ध हुए । इस प्रकार के सुधार आन्दोलनों में ब्रह्म-समाज, आर्य-समाज, रामकृष्ण मिशन, थियोसोफिकल सोसायटी का नाम प्रमुख रूप से लिया जा सकता है । धार्मिक एवं सामाजिक सुधारकों में - राजा राममोहन राय, देवेन्द्र नाथ टैगोर के० सी० सेन, पी० सी० सरकार, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर , दयानन्द सरस्वती , श्रीमती एनी बेसेन्ट, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द ने भारतीयों को भारत की महानता को समझने और उसे पुनः प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया ।[71] श्री ए. आर. देसाई ने इस सुधार

---

70. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स नेशनल आरकाइव्स ऑफ इण्डिया- नयी दिल्ली, जून 1904, 7 बी ।

71. पंडित जवाहरलाल नेहरू, आटोबायोग्राफी ,पृष्ठ - 437 ,

आन्दोलनों के सम्बन्ध में यह लिखा है कि - " यह आन्दोलन कम अधिक मात्रा में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक समानता के लिए संघर्ष थे, और इनका चरम लक्ष्य राष्ट्रवाद था ।"[72] प्रारम्भिक कांग्रेस ने राजभक्ति की प्रतिज्ञाओं नरम नीति, आवेदन ही नहीं, अपितु भिक्षावृत्ति के बावजूद भी उन दिनों राष्ट्रीय जागरण , राजनीतिक शिक्षा, भारतीयों को एकता के सूत्र में आबद्ध करने तथा उनमें सामान्य राष्ट्रीयता की भावना का निर्माण करने में कठिन परिश्रम किया था ।[73] भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन 19वीं शताब्दी में ही प्रारम्भ हो गया था, इसलिएइसको भारतीय राजनैतिक आन्दोलन कहना ज्यादा उपयुक्त होगा, क्योंकि यह बात सर्वथा उचित है कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता की स्पष्ट मांग शुरू में बिल्कुल नहीं थी । 19वीं शताब्दी में इससे पूर्व कई सुधार सम्बन्धी और सामाजिक आन्दोलन हुए थे, और कुछ राजनैतिक संस्थायें भी बनी थीं- जैसे कि - बंगाल ब्रिटिश इंडियन सोसायटी और ब्रिटिश इण्डियन एसोसिएशन । वस्तुत: यह संस्थायें प्रेसीडेन्सी की राजधानियों के कुछ-चुने हुए नागरिकों के राजनैतिक क्लब जैसी थीं । जब सन् 1885 में इण्डियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई थी, तब वह भी उनसे कुछ ज्यादा अधिक भिन्न नहीं थी, परन्तु कम से कम उसका दावा तो यह था कि वह एक अखिल भारतीय संस्था है । इस संगठन के लम्बे विकास काल में इसके गठन इसकी कार्यविधि और इसके लक्ष्यों में स्वभावत: बहुत अधिक परिवर्तन हो गया ।

---

72. ए0 आर0 देसाई, सोशल बैकग्राउन्ड ऑफ इंडियन नेशनेलिजम, पृष्ठ - 210 ,

73. गुरुमुख निहाल सिंह, हैंड मार्क्स इन इंडियन कॉन्स्टिटयूशनल एंड नेशनल डेवलेपमेंट, पृष्ठ - 121

यह बात कहीं महत्व की है कि सन् 1947 में इस संस्था को स्थापित हुए 62 वर्ष हो चुके थे और इतने अधिक लम्बे अर्से तक इसका बना रहना ही इसके सदस्यों में लगन, निष्ठा और सुरक्षा व विश्वास की भावना को प्रोत्साहन देने वाला मुख्य तत्व था । [74]

इलाहाबाद में एलेन ऑक्टेवियन ह्यूम द्वारा भाषण दिया जाना स्वयं अपने में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है । वह पश्चिमोत्तर प्रान्त की राजधानी थी और उसका शासक सुधारों का समर्थक था । एलेन आक्टेवियन ह्यूम के भाषण ने सरकारी हृदय को भविष्य से आशंकित कर दिया था ।[75] पंडित मोतीलाल नेहरू जी ने उग्रवादी नेताओं के प्रति आक्रामक शब्दों का प्रयोग किया, वह व्यंग्यात्मक पूर्ण भाषा में कहते हैं -

" They talk of passive resistance that charming expression which means so little and suggests too much".

इन तर्कहीन, असंगत आधारहीन बातों मे असम्भव की सीमा के आगे निकलने की लेशमात्र भी शक्ति नहीं है, इसलिए विश्वास के कारण उन्होनें दृढ़तापूर्वक घोषणा की -

---

74. डब्ल्यू ,एच. मौरिस जोन्स, द गर्वमेन्ट एन्ड पोलिटिक्स ऑफ इंडिया, पृष्ठ - 16,

75. मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ - 24,

" We are constitutional agitators and the reforms we wish to bring out must come through the medium of constitutiomal authority."[76]

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारत को अभूतपूर्व प्रकोपों का सामना करना पड़ा था ।[77] श्री रामगोपाल के अनुसार " प्लेग कमिश्नर रैण्ड के पीछे-पीछे , सेना और पुलिस चलती थी, और वह बीमारीवाले मकानों का जबर्दस्ती गिरा देते थे और मकानों के निवासियों को जबर्दस्ती कैम्पों में भेज दिया जाता था । अनेक स्थानों पर प्लेग के कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए बिस्तर और कपड़े तक जला दिये गये लेकिन उन्हें कीटाणु रहित वस्त्र प्रदान नहीं किये गये । रैण्ड और उनके सैनिक मकान के हर हिस्से में, यहाँ तक कि रसोईघर, घर के अन्दर और स्त्रियों के कमरों में घुस जाते थे, और मनमाना व्यवहार करते थे । सारा काम इस ढंग का था जैसे दुश्मनों द्वारा जीते गये किसी शहर को फूंका जा रहा है ।"[78]

प्रारम्भिक कांग्रेसियों की भीरूता और भिक्षावृत्ति को उपहास की दृष्टि से देखना अति सुगम है परन्तु -

" जिस समय भारत के राजनीतिक क्षेत्र में उन्होंने पदार्पण किया,

---

76. मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ - 32
77. राम गोपाल, इंडियन पोलिटिक्स, पृष्ठ - 136
78. वही, पृष्ठ, - 137,

उस समय वह अकेले थे । उन्होनें जो नीतियाँ अपनायी, हम उनके लिए उनको कोई दोष नहीं दे सकते हैं । किसी भी आधुनिक इमारत की नींव में 6 फुट नीचे जो ईंट, चूना और परस्पर गड़े हैं, क्या उन पर कोई दोष लगाया जा सकता है ? क्योंकि वह तो आधार है जिसके ऊपर सभी इमारत खड़ी हो सकी हैं । सर्वप्रथम, औपनिवेशिक स्वशासन, फिर साम्राज्य के अन्तर्गत होमरूल, उसके बाद स्वराज्य, तथा सबसे शीर्ष स्थान पर पूर्ण स्वाधीनता की मंजिलें एक के बाद एक ही बनी हैं ।[79] एक लोकोक्ति में यह कहा गया है कि -

" स्वाधीनता का मूल्य है हमेशा उसकी चौकसी करना । "

हमारे स्वतंत्रता संस्थापक पूर्व पुरूषों को यह ज्ञात था कि शक्ति से अनुराग मानव स्वभाव का एक अंग है और शक्ति से अनुराग इतना अधिक बलवान है कि सत्तारूढ़ अधिकारी लोगों को उनके स्वतंत्र संस्थाओं की जड़ें हिलाने वाले हस्तक्षेपों से दूर रखने के लिए स्पष्ट और कड़ी रूकावटें और दीवारें खड़ी करनी पड़ी । यह स्वीकारोक्ति है कि लम्बे अर्से से चली आ रही बन्धन की जंजीरों से भी लोगों को आदृत हो जाने से, ममता होजाती है- इस बात को ध्वनित कर रही है कि नई सीखी आदत मानव की मूल प्रकृति से प्रबलत्तर होती है ।[80]

---

79. पट्टाभिसीता रम्मया, द हिस्ट्री ऑफ दि इण्डियन नेशनल कांग्रेस, पृष्ठ - 57,

80. जॉन डयूई, स्वंतत्रता और संस्कृति, पृष्ठ - 7,

उदारवादी नेता इस बात पर विश्वास करते थे कि अँग्रेज स्वभाव से न्यायप्रिय होते हैं यदि उन्हें भारतीय दृष्टिकोण का सही ज्ञान करा दिया जाये, तो वह भारतीय दृष्टिकोण को स्वीकार कर लेंगे । सुरेन्द्र नाथ बनर्जी का कथन था कि -

" अँग्रेजो के न्याय, बुद्धि तथा दया की भावना में हमारा दृढ़ विश्वास है । संसार की महानतम प्रतिनिधि सभा, संसदों की जननी, ब्रिटिश कामन्स सभा के प्रति हमारे हृदय में श्रद्धा है । अँग्रेजों ने सर्वत्र प्रतिनिधियात्मक आदर्श पर ही शासन की रचना की है ।[81]

महाराष्ट्र ने दो महान् राष्ट्रीय नेताओं गोखले और तिलक को जन्म दिया था । सन् 1900-1905 की अवधि में ब्रिटिश शासन की दमनकारी कारनामों से गोखले भी बहुत असंतुष्ट हुए ।[82] श्री रमेश चन्द्र मजूमदार लिखते हैं कि ऐतिहासिक अनुसंधानों की खोज भारतीयों के हृदय में चेतना उत्पन्न करने में असफल सिद्ध नहीं हो सकती थी, जिसके फलस्वरूप भारतीयों के हृदय राष्ट्रीयता एंव देश प्रेम की भक्ति भावना से भर गये थे ।[83] भारतीय समाचार पत्रों ने भी अँग्रेजी पत्रों के भारत विरोधी प्रचार का करारा जवाब दिया और भारतीयों को विदेशी शासन की त्रुटियों से भी परिचित कराया । इन समाचार पत्रों में सम्बाद कौमुदी 1821, बाम्बे समाचार 1882, बंगदूत 1831, रास्त

---

81. पट्टाभिसीता रमय्या, द हिस्ट्री ऑफ दि इण्डियन नेशनल कांग्रेस, पृष्ठ - 102
82. डी० सी० चतुर्वेदी, इंण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कांस्टीट्यूशनल डेवलपमेंट, पृष्ठ - 54,
83. आर०सी० मजूमदार, हिस्ट्री ऑफ दि फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया, पृष्ठ - 327

गुफ्तार, 1851, अमृत बाजार पत्रिका 1868, ट्रिब्यून 1877 प्रमुख हैं । मुनरो कहा करता था कि - " एक स्वतंत्र प्रेस और विदेशी राज एक दूसरे के विरूद्ध हैं और यह दोनों एक साथ नहीं चल सकते हैं । " बंकिमचन्द्र जी ने "आनन्दमठ" तथा " बन्देमातरम्" की रचना की, जिन्होंनें बंगाल में क्रान्तिकारी राष्ट्रवाद की पाठ्य पुस्तक का कार्य किया ।[84]

19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में " बाम्बे एसोसिएशन" की स्थापना की गयी, लेकिन थोड़े ही समय बाद यह संघ निर्जीव हो गया । श्री नौरोजी फरन्दजी द्वारा इसको पुन: सजीव बनाने का प्रयत्न भी सफल नहीं हुआ । अत: फिरोजशाह मेहता और बदरूद्दीन तैय्यब जी ने इसके स्थान पर " बाम्बे प्रेसीडेन्सी एसोसिएशन" की स्थापना की, जिसने कुछ समय के लिए राजनीतिक जागरण की दिशा में प्रंशसनीय कार्य किया ।[85]

श्री ए0 सी0 मजूमदार के अनुसार लार्ड कर्जन हर जगह प्रमुख मुसलमानों से मिले और चटगाँव तथा ढाका में मुसलमानों की बड़ी सभाऐं कर उन्हें समझाया भी था ।[86] लार्ड कर्जन शान शौकत में विश्वास करता था ।[87] सन् 1902 में

---

84. ईश्वरी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इंडिया- मुनरोक्यूटेड फ्राम, पृष्ठ - 327
85. पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट आफ इंडिया एन्ड इंडियन कॉन्स्टिट्यूशनल, पृष्ठ - 17
86. ए0 सी0 मजूमदार, इंडियन नेशनल इवोल्यूशन, पृष्ठ - 222
87. राम गोपाल, इंडियन पोलिटिक्स, पृष्ठ - 141

सियालकोट स्थित घुड़सवार दल के सैनिकों ने एक भारतीय रसोइए को इतना पीटा कि वह मर गया उस रसोइए का अपराध मात्र यह था कि उसने घुड़सवार दल के सैनिकों के लिए देशी स्त्री का प्रबन्ध करने से इन्कार कर दिया था । [88] सन् 1903 में जनवरी में लार्ड कर्जन ने एक विराट सम्मेलन रूपी दरबार में सप्तम एडवर्ड को भारत का सम्राट होने की घोषणा की । इस आलीशान दरबार पर टिप्पणी करते हुए सन् 1903 के मद्रास अधिवेशन के अध्यक्ष लाल मोहन घोष ने यह कहा था कि –

" जहाँ तक जनता का सम्बन्ध है, इससे ज्यादा निर्दय और कठोर क्या हो सकता है कि एक श्रेष्ठ कही जाने वाली सरकार संसार के सबसे गरीब लोगों पर सबसे ज्यादा कर लगाये और इस तरह से एकत्रित धन को व्यर्थ के नाच-तमाशों और आतिशबाजी में फूकें । जबकि जनता भूखों मर रही हो ।" [89] अक्टूबर सन् 1900 में एक पत्र " रोजनामचा-ए-कैसरी," आरम्भ हुआ था । प्रारम्भ से ही यह पत्र सरकारी अधिकारियों की कृपा दृष्टि प्राप्त कर सका । फरवरी, सन् 1902 में जिलाधीश ने यह सूचना दी कि इस वर्ष एक विस्फोटक लेख के आधार पर सरकार ने संपादक को यह चेतावनी देने का निश्चय किया था । अन्ततः, चेतावनी तो नहीं दी गई, वरन् अधिकारियों को यह आशा थी कि संपादक कानून के अन्तर्गत शीघ्र ही आ जायेगा । [90] वाइसराय ल

---

88. पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इंडियन कान्स्टीट्यूशन- पृष्ठ – 39

89. रामगोपाल, इंडियन पोलिटिक्स , पृष्ठ – 141

90. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स –नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जून 1903, 45 बी ।

कर्जन की नीतियाँ उत्तरोत्तर भारतीयों को असंतुष्ट कर रही थीं । वाइसराय लार्ड कर्जन की विदेश नीति " इंडियन पीयूपिल्स" के विचार में मूल्यवान तथा अहितकारी समय बिताने के खेल के समान थी । "रोजनामचा-ए- कुसैरीं पत्र ने यह स्पष्ट लिखा था कि इसका संपादक अभाग्यवश इन व्यक्तियों के समूह में है जो लार्ड कर्जन के शासन से प्रसन्न नहीं है । भारतीय इस बात का तीव्र अनुभव कर रहे थे कि अब सरकारी नीति उल्लेखनीय रूप से भारत-विरोधी होती जा रही थी । उनके नेत्रों में वर्षों से उपस्थित अंग्रेजी न्यायप्रियता का चित्र धीरे-धीरे तिरोहित होता जा रहा था तथा उसका स्थान एक नवीन चित्र धारण कर रहा था जो कि ब्रिटिश राज्य के लिए किसी भी रूप में हितकर नहीं हो सकता था ।[9] ब्रिटिश शासन में भारत-वासियों की जो समस्यायें हैं, उनके खास-खास मुद्दों को कांग्रेस के प्रारम्भिक ने भलीभाँति समझ तो लिया था, परन्तु वह समस्यायें ऐसी थीं, कि उनको हल करने के लिए उन्हें रास्ता हमेशा दिखाई नहीं पड़ता था - - - बम्बई में हुए कांग्रेस के 20वें अधिवेशन ।1904। में मिस्टर आर्थर बालफोर के आयरलैण्ड पर दिये एक भाषण में यह कहा गया कि - " एक के बाद एक हरेक उद्योग का या तो शुरूआत में ही गला घोंट दिया गया, या उसे दूसरों ।विदेशियों। के हाथ में सौंप दिया गया, अथवा इंग्लैण्डवालों के हित में उसे नियंत्रित कर दिया गया , और जब तक कि सम्पत्ति के तमाम स्त्रोतों को सीमेण्ट लगाकर बन्द नहीं कर दिया गया और सारा राष्ट्र खेती के काम करने

9।. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जून 1904, 7 बी ।

के लिए मजबूर न हो गया, तब तक यही क्रम जारी रहा ।[92]

लार्ड कर्जन ने सन् 1904 में भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम पास करके विश्वविद्यालयों की सिंडीकेट तथा सीनेट के सदस्यों की संख्या कम कर दी । इस अधिनियम ने विश्वविद्यालय की आन्तरिक स्वायत्तता को समाप्त कर दिया और उन पर सरकारी अधिकारियों का नियंत्रण स्थापित हो गया । इस अधिनियम से शिक्षित भारतीयों में तीव्र असन्तोष फैला ।[93] जब भारतीय शिक्षित वर्ग ने लार्ड कर्जन के भारतीयों के प्रति इस घृणित कार्य का उत्तर दिया, तब लार्ड कर्जन ने स्पष्टत: कहा कि - " मेरा विश्वास है कि कांग्रेस अपने पतन की ओर जा रही है, और मेरी भी यही आंकाक्षा है कि मैं कांग्रेस की शान्तिपूर्वक मृत्यु के निमित सहायता प्रदान कर सकूं ।[94]

सन् 1904 में पारित हुए नवीन यूनिवर्सिटी एक्ट के आधार पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में सभासदों की नियुक्ति की गई इलाहाबाद निवासियों को नियुक्ति की शैली ने निराश कर दिया, क्योंकि विश्व-विद्यालयों का पूर्ण सरकारीकरण हो गया था । इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने भी वास्तव में विश्वविद्यालय का रूप न रख कर सरकारी राजनैतिक संस्था का रूप ग्रहण कर लिया था । " आफीशियल सीक्रेट्स बिल " को भी पत्रकारों

---

92. बी० पट्टाभिसीता रमय्या , कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 37

93. पी० आर० जैन, नेशनल मूवमेंट आॅफ इंडिया एन्ड इंडियन काॅस्टीट्यूशन पृष्ठ - 42

94. डी० सी० चतुर्वेदी, इंडियन नेशनल मूवमेंट एन्ड काॅस्टिट्यूशनल डेवलपमेंट, पृष्ठ - 47 ।

ने स्वंतत्रता के बलात् छीन लिये जाने का साधन माना । " प्रयाग समाचार" इलाहाबाद ने यह सुझाव दिया कि इस बिल के विरोध में सार्वजनिक सभाएँ की जानी चाहिए ।[95] सन् 1904 में तीसरा कानून सरकारी गोपनीय विषयों सम्बन्धी कानून (Official secrets Act) था । इस एक्ट के अनुसार सरकारी कर्मचारियों के ऊपर सरकारी कार्यकलापों को गोपनीय रखने के सम्बन्ध में अत्यधिक प्रतिबन्ध लगा दिया गया था और इसके अतिरिक्त समाचार पत्रों की स्वतंत्रता को भी मर्यादित कर दिया गया। समाचार पत्रों को सरकार की नीतियों तथा कार्यकलापों की आलोचना करने या उन्हें प्रकाशित करने की छूट प्रदान नहीं की गयी, इसके साथ ही सरकार का विरोध करना राजद्रोह माना गया ।[96]

सन् 1904-1905 में रूस तथा जापान के युद्ध में लघु एशियाई देश जापान की वृहद् योरोपीय शक्ति पर विजय भारतवासियों के लिए एक प्रेरणापूर्ण सन्देश लेकर आयी । " इंडियन पीपुल " ने लिखा कि पाश्चात्य उच्चता की भावना पर जापान की विजय ने कुठाराघात कर दिया है । पाश्चात्य देश अब पूर्व की स्वाभाविक हीनता का अधिक दिन तकप्रचार नहीं कर सकेगें । जापान की विजय के मूल कारणों की ओर भी जनता का ध्यान आकर्षित अथवा अग्रसित करके उसी मार्ग पर चलने का सन्देश दिया जाने लगा।

---

95. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जून 1905, 264-265 बी ।

96. डी0 सी0 चतुर्वेदी ,इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉन्स्टीट्यूशनल डेवलेपमेंट, पृष्ठ संख्या - 49 ।

वास्तव में जापान की विजय ने पाश्चात्य शक्तियों की अजेयता का विश्वास जनमानस से विलीन कर दिया था तथा इन शक्तियों के विरूद्ध सिर उठाने का साहस प्रदान कर दिया था । 14 वर्ष के जवाहर लाल नेहरू तक किस प्रकार इस युद्ध से प्रभावित थे । यह वह स्वयं स्पष्ट करते हैं कि -

" Japanese victories stirred up my enthusiasm and I united eagerly for the papers for fresh news daily ... Nationalistic ideas filled my mind. I used to dream of Indian freedom and asiatic freedom from the thraldom of Europe".[97] लार्ड कर्जन के पंचवर्षीय शासन के सम्बन्ध में उनके द्वारा केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा में दिये गये भाषणा की आलोचना "इंडियन पीपुल" ने की -

% His lordship enlarged on the fairy tales of Indian prosperity , and that the influx of 46 million sterling his administration divided among the entire population of the country. would give no more than Rs. 1-7-7 per head a year, which could hardly justify any inference about the material prosperity of the people."[98]

---

97. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया- जून 1905 264-265 बी ।

98. वही, जून 1905, 264-265 बी ।

धर्म के नाम पर, अरब, तुर्की, फारस, अफगानिस्तान आदि से सम्बन्ध जोड़कर भारतीयता के विनाश की प्रवृत्ति भी " इण्डियन पीपुल " ने हितकर नहीं समझीं । किन्तु इस पत्र की हिन्दू-मुसलमान ऐक्य की नीति भी पहले से ही चली आ रहीथी । पृथक्करण की भावना से मुसलमान जनता को उन्मुक्त नहीं कर सकी । इलाहाबाद के कायस्थ समाचार के संपादक का यह विचार था कि अंग्रेजी शिक्षा ने मुसलमानों को कायर बना कर रख दिया था। उन्होनें लिखा कि कई कारणों से उन्हें यह विश्वास था कि शीघ्र ही मुसलमान यदि कांग्रेस में सम्मिलित नहीं होगे , तब वह अपनी एक पृथक संस्था का अवश्य ही निर्माण करेगें ।

इसमें तनिक सा भी सन्देह नहीं है कि तात्कालिक मुसलमानों की मनोवृत्ति के आधार पर इलाहाबाद के "कायस्थ समाचार " के संपादक का यह निष्कर्ष निकट भविष्य में अक्षरशः सत्य ही सिद्ध हो गया ।

इस प्रकार सन् 1905 के प्रारम्भ तक इलाहाबाद के निवासियों की राष्ट्रीय भावना को नयी दृष्टि प्राप्त हो चुकी थी । निरन्तर चोट सहन करके, आत्मसम्मान घायल होकर जनमानस को विद्रोह के पथ पर चलने को आतुर कर रहा था । एक अन्तिम आघात की प्रतीक्षा थी ।[99]

5 मई सन् 1905 को घोषित किया गया बंग-विच्छेद ब्रिटिश सरकार

---

99. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स- नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया- नयी दिल्ली जून 1904, 7 बी ।

की " फूट डालो और शासन करो । Divided Rule & Policy । की नीति का सबसे प्रथम सक्रिया कदम था । बंग विच्छेद कानून लार्ड कर्जन के शासनकाल की सबसे अधिक महत्वपूर्ण घटना थी । इसने न केवल भारत के राष्ट्रीय नेतृत्व को ही घोर असन्तुष्ट किया, अपितु अनेक ब्रिटिश अधिकारी भी इससे असन्तुष्ट थे ।[100] सन् 1905 के बंगाल विभाजन के सम्बन्ध में लार्ड कर्जन ने यह कहा कि - " बंगाल विभाजन में मेरा उद्देश्य प्रशासकीय सुविधा भर देखना नहीं हैं, मैं एक मुस्लिम प्रान्त बनाना चाहता हूँ, जहाँ इस्लाम के अनुनायियों का बोलबाला होगा । विभाजन से पूर्वी बंगाल के मुसलमानों को वह एकता प्राप्त होगी , जो मुसलमान बादशाहों और सूबेदारों के राज्य के बाद उन्हें कभी नसीब नहीं हुई थी ।[101]

सन् 1905 का बंगाल का विभाजन लार्ड कर्जन का सबसे अधिक मूर्खतापूर्ण कार्य था । यद्यपि, बंगाल के विभाजन में लार्ड कर्जन का उद्देश्य बंगाल में बढ़ती हुई राष्ट्रीयता की भावना को कुचल देना था, लेकिन व्यवहार में इस कार्य के परिणामस्वरूप न केवल बंगाल, वरन् सम्पूर्ण भारत में राष्ट्रीयता की अभूतपूर्व भावना को जन्म मिला । बंगाल विभाजन के विरोध में अकेले बंगाल में ही 1,000 सभायें की गई । देश के प्रत्येक कोने से ब्रिटिश सरकार के पास इस आशय के स्मृति पत्र भेजे कि विभाजन योजना को लागू न किया जाये । लार्ड कर्जन ने इस आन्दोलन को बनावटी तथा कुछ स्वार्थी लोगों

---

100. डी0 सी0 चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉन्स्टिट्यूशनल डेवलेपमेंट, पृष्ठ - 51,

101. ए0सी0 मजूमदार, इण्डियन नेशनल इवोल्यूशन, पृष्ठ - 222

के दिमाग की उपज बताया और 16 अक्टूबर , 1905 को विभाजन योजना क्रियान्वित कर दी गई । फलत: 16 अक्टूबर, 1905 का दिन " राष्ट्रीय शोक दिवस" के रूप में मनाया गया और बंगाल के एकीकरण के लिए प्रयत्न बराबर करने का प्रण किया गया ।[102] वाइसराय लार्ड कर्जन के लगभग समस्त कार्य भारतीयों की असंतुष्टि का कारण बने थे, परन्तु जिस कार्य ने इतिहास की धारा को प्रवाहित कर परिवर्तित दिशा की ओर कर दिया वह था - बंगाल प्रान्त का दो भागों में विभाजन । बंगाल विभाजन यद्यपि प्रशासकीय सुविधा के तथाकथित आधार पर किया गया था, परन्तु बंगालियों तथा उन्हीं के साथ अन्य प्रान्तों के निवासियों का यह दृढ़ निश्चय था कि बंगालियों की एकता में विभाजन ही इस शासकीय विभाजन का मुख्य उद्देश्य था । जब से इस योजना के सम्बन्ध में सरकार का विचार जनता के निकट स्पष्ट हुए, तभी से जनभावना योजना के विरूद्ध थी । " सिटिजन" का यह विचार था कि विभाजन ब्रिटिश सरकार की अनैक्य के आधार पर राज्य करने की नीति का परिचायक था ।[103]

---

102. पी० आर० जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इण्डियन कॉन्स्टीट्यूशन, पृष्ठ - 45,

103. होम पब्लिक प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जून 1905, 264-265 बी

तृतीय - अध्याय

बंगाल विभाजन के पश्चात्

। 1906 - 1915 ।

सन् 1857 के विद्रोह के दमन के उपरान्त लार्ड कैनिंग की अध्यक्षता में इलाहाबाद के मिन्टो पार्क में एक महत्वपूर्ण दरबार हुआ, जिसने शासन में क्रांतिकारी परिवर्तनों की घोषणा की । भारत के प्रथम वाइसराय लार्ड कैनिंग ने तत्कालीन महारानी विक्टोरिया का घोषणापत्र जो सन् 1858 में पास हुआ था, उस घोषणापत्र को पढ़ा । इसमें सर्वसाधारण को यह सूचना दी गयी थी कि उस दिन से महारानी विक्टोरिया ने भारत के शासन को स्वयं अपने हाथ में ले लिया है । इसी घोषणापत्र ने भारतीयों के सम्बन्ध में शासकों के परिवर्तित दृष्टिकोण एवं शासन की मूलनीतियों को स्पष्ट किया । भारतीय जनता की दृष्टि में यह घोषणापत्र एक महान एवं उदार शासकीय परम्परा के प्रादुर्भाव का परिचायक था । भविष्य में भी कांग्रेस के प्रारम्भिक नेता इस घोषणापत्र को अंग्रेजी शासकों के मूल प्रगतिशील उद्देश्यों का ही प्रमाण मानते रहे । महारानी विक्टोरिया घोषणापत्र के कुछ ही दिनों के बाद प्रान्त की राजधानी पुनः इलाहाबाद स्थानान्तरित कर दी गयी । एक बार पुनः शासकों ने शासन सुधार की ओर दृष्टिपात किया, यह निश्चि किया गया कि न्याय के शासन के सुधार करने के लिए सदर दीवानी तथा सदर निजामत अदालतों को समाप्त कर दिया जायें और उनके स्थान पर ए उच्च न्यायालय की स्थापना की जाये ।[1]

---

1. पॉयनियर समाचार पत्र, जून 1905 ।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में अग्रवादी नेताओं की त्रयी में बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय , विपिन-चन्द्र पाल, का नाम प्रसिद्ध है । ब्रिटिश शासकों की प्रतिगामी तथा अत्याचारपूर्ण शासन नीतियों के विरोध में इस वर्ग के राष्ट्रीय नेताओं का उदारवादियों की " राजनीतिक भिक्षावृत्ति " तथा आवेदनों और प्रार्थनाओं द्वारा वैधानिक तरीकों से राष्ट्रीय मांगों को पूर्ण कराने की नीति पर से विश्वास हट गया ...- लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने राष्ट्रीय आन्दोलन को अपना यह चिरस्मणीय नारा प्रदान किया -

" स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं उसे लेकर रहूँगा ।[2]

अतः राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रमुख लक्ष्य विदेशी शासन को किसी भी तरीके से बाहर निकाल करना होना चाहिए । इस साध्य की प्राप्ति के निमित्त स्वदेशी बहिष्कार तथा राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन के साधन के रूप में हैं । - - - उग्रवादी नेताओं ने स्थान-स्थान पर राष्ट्रीय शिक्षालय खुलवाये और उनमें शिक्षा को राष्ट्रीय स्वरूप को बनाने का प्रयास किया । इनका आन्दोलन प्रारम्भिक उदारवादी आन्दोलन से पूर्णतया भिन्न प्रवृत्ति का था। - सन् 1905 के उपरान्त राष्ट्रीय आन्दोलन में एक पूर्णतया नवीन प्रवृत्ति आ गई, जो स्वतंत्रता प्राप्ति के समय तक बनी रही । इस उग्रवाद ने कांग्रेस की गति-विधियों को भी नया स्वरूप प्रदान किया ।[3]

---

2. गंगादत्त तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, पृष्ठ - 64,

3. वही, पृष्ठ - 65 ।

भारतीय राजनीति में उग्रवाद के उदय से कांग्रेस संगठन का प्रभावित होना नितान्त आवश्यक था । सन् 1905 के बनारस अधिवेशन में लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के नेतृत्व में राष्ट्रवादियों के एक वर्ग ने उदारवादियों की राजनीतिक भिक्षावृत्ति " की तीव्र निन्दा की और इस बात का प्रतिपादन किया कि संगठित निष्क्रिय प्रतिरोध के मार्ग को अपनाकार ही भारत के राष्ट्रीय जीवन पर विदेशी नौकरशाही के प्रमुत्वका अन्त किया जा सकता है ।[4]

उग्रवादी राष्ट्रीय आन्दोलन की गतिविधियों कोतीन भागों में विभक्त किया जा सकता है - बंगाल, महाराष्ट्र और समग्र रूप में भारत । उदारवादी नेता सुरेन्द्रनाथ बनर्जी तक ने लार्ड कर्जन की नीति की घोर निन्दा की । एन0 एम0 समर्थ का यह मत था कि -

" आज बर्क तथा शेरिडन जीवित होते तो लार्ड कर्जन की नीतियों के कारण उसके ऊपर भी महाभियोग लगाते ।"[5]

सन् 1905 तक की अवधि में ब्रिटिश शासन के दमनकारी कारनामों से गोखले भी बहुत अधिक असन्तुष्ट हो गये थे । यद्यपि उन्होनें उग्रवाद का अनुसरण नहीं किया, तथापि ब्रिटिश शासन की नीतियों की उन्होने भी भर्त्सना की । लोकमान्य बालगंगाधर तिलक उग्रवादी राष्ट्रीयता के सबसे महान् प्रवर्तक थे । सच्चे अर्थों में उनको उग्रवाद का जनक कहा जाना चाहिए । उनका

---

4. डा0 पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड कॉन्स्टीट्यूशन, पृष्ठ-46
5. डा0 जी0 डी0 तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आंदोलन एवं संवैधानिक विकास, पृष्ठ - 65 ।

लक्ष्य औपनिवेशिक ढंग का स्वराज्य प्राप्त करना नहीं था, बल्कि पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना था, जिसे वह प्रत्येक भारतवासी का जन्मसिद्ध अधिकार मानते थे ।[6]

कांग्रेस का कलकत्ता अधिवेशन (सन् 1906) में "स्वराज्य" शब्द का प्रयोग स्पष्ट रूप से भारत का अन्तिम राजनीतिक लक्ष्य घोषित किया । " कांग्रेस अधिवेशन में इस प्रकार का प्रस्ताव पास होना वस्तुतः उग्र दल की ही विजय थी" ।[7] सन् 1906 के कलकत्ता अधिवेशन में कांग्रेस के मंच से "स्वराज्य" के लक्ष्य की घोषणा की गयी थी, लेकिन कांग्रेस का उदारवादी पक्ष स्वराज्य प्राप्ति के लिए किसी भी प्रकार का आन्दोलन करने को तैयार नहीं था । श्रीमती एनी बेसेन्ट ने सत्य ही कहा है कि -

" The Surat episode was the saddest episode in the history of the Congress."[8]

सन् 1906 में उग्रवादी इस बात के लिए प्रयत्नशील थे कि तिलक को कलकत्ता कांग्रेस का अध्यक्ष बनाकर उग्रवादी दल के कार्यक्रम को राष्ट्रीय कांग्रेस के कार्यक्रम के रूप में स्वीकार करना लिया जाये लेकिन उदारवादी किसी भी स्थिति में इसे स्वीकारने के लिए तैयार नहीं थे ।[9] लोकमान्य

---

6. डा० जी०डी०तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आंदोलन एवं संवैधानिक विकास पृष्ठ - 66।
7. आर०सी०मजूमदार, हिस्ट्री ऑफ दि फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया, पृष्ठ - 28 ।
8. एनी बेसेन्ट, हाऊ इंडिया रॉट फॉर फ्रीडम, पृष्ठ - 465 ।
9. पुख राज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इंडियन कॉस्टीट्यूशन, पृष्ठ - 46 ।

बालगंगाधर तिलक ने इस बात पर अफसोस जाहिर किया कि विदेशी माल की सबसे ज्यादा खपत मध्यम श्रेणी वालों में ही है । उन्होनें कहा कि -

" हमारे अन्दर स्वालम्बन, दृढ़ निश्चय, और त्याग की भावना होनी चाहिए । "

स्वदेशी की भावना उत्पन्न होने पर और सन् 1906 तथा उसके बाद के वर्षों में बहिष्कार आन्दोलन से उसको प्रोत्साहन मिलने के फलस्वरूप भारतवर्ष का ध्यान, भारतीय उद्योग-धन्धों के पुनर्जीवन की ओर खिंचा ।[10] उदार राष्ट्रवादियों द्वारा प्रार्थनाओं, स्मृतिपत्रों और प्रतिनिधि मण्डलों की जिस पद्धति को पिछले 20 वर्षों में अपनाया गया था, उसके परिणाम निराशा जनक थे । लाला लाजपत राय के अनुसार -

" शिकायतें दूर करने और रियायतें प्राप्त करने के बीस वर्षों से किये गये अधिक प्रयत्नों के परिणामस्वरूप उन्हें रोटी के स्थान पर पत्थर ही प्राप्त हुए थे ।[11]

उदारवादी और उग्रवादी राष्ट्रीय आन्दोलन में अन्तर बताते हुए लाला लाजपत राय ने यह लिखा है कि -

" भारतीय कांग्रेस के जन्मदाताओं ने अपना आन्दोलन शासन की प्रेरणा से और उच्च पदों की छाया में, या उच्च पद ग्रहण करने की आंकाक्षा

---

10. बी० पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस की इतिहास, पृष्ठ - 38 ।

11. लाला लाजपत राय, यंग इंडिया, पृष्ठ - 158 ।

से प्रारम्भ किया । लेकिन राष्ट्रीय आन्दोलन के संचालकों ने अपना प्रचार शासन और शासकीय कृपा के बहिष्कार से प्रारम्भ किया । पूर्ववर्ती नेता ब्रिटिश शासन और ब्रिटिश राष्ट्र से अपील करते थे, जबकि ये उग्रवादी नेता अपने देशवासियों और ईश्वर से अपील करते थे ।"

" Lala Lajpat Rai said- " The Lathi, blows that are hurled on me will one day prove as nails in the coffin of the British Empire."[12]

गोखले नरम दल के थे तथा तिलक गरम दल के थे । गोखले चाहते थे कि तत्कालीन विधान में सुधार कर दिया जाये, परन्तु तिलक सम्पूर्ण विधान का ही फिर से निर्माण करना चाहते थे । गोखले को नौकरशाही के साथ कार्य करना पड़ता था, तो तिलक की शाही से भिड़न्त रहती थी । गोखले यह कहते थे कि जहाँ तक सम्भव हो, सहयोग करो, जहाँ आवश्यक हो विरोध करो, लेकिन तिलक का झुकाव अंडगा नीति" की ओर था । गोखले जहाँ शासन तथा उसके सुधार की ओर प्रमुख रूप से ध्यान देते थे, वहाँ तिलक राष्ट्र तथा उसके निर्माण को प्रमुख समझते थे । गोखले का आदर्श था - प्रेम तथा सेवा, तिलक का आदर्श था - सेवा तथा कष्ट सहना । गोखले विदेशियों को जीतने का उपाय करते थे तिलक उन्हें हटाना चाहते थे । गोखले दूसरों की सहायता पर विश्वास

---

12. लाला लाजपत राय क्यूटेड बॉय एच. डब्ल्यू नेविनशन पृष्ठ- 73+74 ।

करते थे, तिलक स्वावलम्बन पर । गोखले उच्च वर्ग तथा बुद्धिजीवियों की ओर देखते थे, परन्तु तिलक सर्वसाधारण तथा करोड़ों की ओर । गोखले का अखाड़ा था कौंसिल भवन तो तिलक की अदालत थी - गाँव की चौपाल । गोखले अंग्रेजी में लिखते थे तो तिलक मराठी में । गोखले का उद्देश्य स्वशासन, जिसे योग्य व्यक्ति अपने को अंग्रेजों की कसौटी पर कसकर प्राप्त करें । परन्तु तिलक का उद्देश्य था कि स्वराज्य जो कि प्रत्येक भारतवासी का जन्म सिद्ध अधिकार है तथा जिसे वह विदेशियों की सहायता से या बाधा की परवाह न करते हुए प्राप्त करना चाहते थे । गोखले अपने समय के साथ तथा उपयुक्त थे, तिलक अपने समय से काफी आगे थे ।[13]

सन् 1906 के बादजो नवीन जागृति और नया तेज देश में इस छोर से उस छोर तक फैल गया था, उसका मूल कारण बंग-भंग था । यद्यपि लार्ड कर्जन के प्रतिगामी शासन के कारण वह जागृति इस बंग-भंग की घटना के पहले से भी भीतर गर्भ में बढ़ रही थी ।[14] सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के सम्बन्ध में यह कहा- " 44 वर्ष से उठी उनकी ऊँची आवाज सभ्य संसार के दूर-दूर के कोने तक पहुँचती थी । भाषा, प्रभुत्व , रचना नैपुण्य, कल्पना, प्रवणता, उच्च भावुकता, और वीरोचित हुंकार, इन गुणों में उनकी वक्तृत्व कला को पराजित करना कठिन था। आज भी कोई उनकी समता तो अलग, निकट भी नहीं पहुँच सकता । उनके भाषण का मसाला होता था, उनकी राजभक्ति की दुहाई । उन्होंनें इसे एक कला की

---

13. बी. पट्टाभिसीता रमय्या, द हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन नेशनल कांग्रेस, पृष्ठ - 166

14. बी. पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 40 ।

तक पहुँचा दिया था । " [15]

उत्तर प्रदेश में क्रान्तिकारी आन्दोलन का आरम्भ 1907 से हुआ जबकि इलाहाबाद से "स्वराज्य" नामक पत्रिका निकली ।[16]

सन् 1907 मे सरदार अजीत सिंह , भाई परमानन्द, तथा लाला हरदयाल ने क्रान्तिकारियों का संगठन किया और सरकार की भूमि सम्बन्धी नीति के कारण लाहौर तथा रावलपिन्डी में कुछ उपद्रव भी हुए । परन्तु सन् 1909 में सरकार के द्वारा अपनी भूमि सम्बन्धी नीति में जनता की इच्छानुसार परिवर्तन कर दिये जाने पर शान्ति छा गई, और क्रातिकारी कार्य एक प्रकार से बन्द हो गये ।[17]

जनवरी 1907 में दल की एक सभा इलाहाबाद के आनन्द भवन में सम्पन्न हुई, जिसका उद्देश्य युक्तप्रान्तीय कांफ्रेन्स के सम्बन्ध में विचार विमर्श करना था । इस सभा ने यह निश्चय किया कि कान्फ्रेन्स का सभापतित्व पंडित मोतीलाल नेहरू करें, परन्तु विद्यार्थियों के रूख को देखते हुए उनको अपने सभापतित्व की सफलता में सन्देह था क्योंकि उनके विचार इलाहाबाद के तात्कालिक नम्र नेताओं से भी अधिक नम्र थे ।

कांफ्रेन्स को दक्षिणपंथी नेताओं ने पूर्णत: अपने अधीकृत रखने का निश्चय लिया था । उनके इस निश्चय पर हर सम्भव बाधा डालने का प्रयास विपरीत

---

15. पट्टाभिसीता रमय्या, द हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन नेशनल कांग्रेस, पृष्ठ - 167 ,
16. डी० सी० चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एवं कांस्टीट्यूशनल डेवलपमेंट ,पृष्ठ - 7।
17. पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एण्ड इंडियन कांस्टीट्यूशन, पृष्ठ -

वर्ग ने किया । पंडित मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में कान्फ्रेन्स के लिए प्रतिनिधि निर्वाचित करने के लिए सभा हुई । जब बाबू ईश्वर शरन बोलने के लिए खड़े हुए, सम्पूर्ण विद्यार्थी समाज विरोध स्वरूप उठकर बाहर आ गया । इस प्रकार की स्थिति से यह स्पष्ट हो गया था कि कान्फ्रेन्स के कार्यक्रम में बाधाऐं उपस्थित करने, नम्र विचारों के सभापति पंडित मोतीलाल नेहरू का अपमान करने में विद्यार्थी समाज किसी भी प्रकार हिचकिचाएगा नहीं ।[18] यद्यपि कान्फ्रेन्स निर्विघ्न समाप्त हो गई, परन्तु इलाहाबाद में भविष्य के कुछ वर्षों में समाप्त देश के समान दक्षिणपंथ के नेताओं द्वारा विरोधी दल को किसी भी प्रकार अपने विचारों के प्रकाशन तथा प्रचार का अवसर प्रदान न करने के प्रयास की परम्परा का सूत्रपात इलाहाबाद की इस कान्फ्रेन्स द्वारा हो गया । इलाहाबाद के लिए यह प्रथम अवसर था जबकि दो विरोधी वर्ग सार्वजनिक रूप से एक दूसरे पर खुला आक्रमण कर सकते थे, परन्तु अनुभवी नेताओं की सशंक दूरदर्शिता एवं सूझबूझ ने यह अवसर आने ही नहीं दिया ।[19]

सन् 1907 की यवनिका के उठते हीउग्रवादी दल के प्रमुख नेता बालगंगाधर तिलक को हम इलाहाबाद में देखते हैं । उनका सन्देश विदेशी वस्त्र केबहिष्कार के विषय में था । वे इलाहाबाद के निवासियों को प्रेरित करने में

---

18. गोपाल कृष्ण गोखले - पेपर्स, नेशनल आरकाॅइव्स आॅफ इण्डिया- नयी दिल्ली दिनांक 15 मार्च, 1907 ।

19. गोपाल कृष्ण गोखले-पेपर्स, नेशनल आरकाॅइव्स आॅफ इंडिया, नयी दिल्ली दिनांक 10 अप्रैल, 1908 ।

किसी भी मात्रा में सफल हो सके थे, इसका अनुभव पंडित मोतीलाल नेहरू के पत्र से प्रकट होता है । मोतीलाल नेहरू जी लिखते हैं -

" Tilak was here the other day specially to address the students-- we succeeded to such an extent that the students of the Muir College specially those of the Hindu Boarding house have assumed an attitude of open defiance to the more moderate leaders of those provinces."[20]

" स्वदेशी" तथा विद्यार्थियों से कुछ शब्द पर गोपाल कृष्ण गोखले की वाणी जनमानस को प्रभावित करने में सफल हुई । गोपाल कृष्ण गोखले की इन वक्तृताओं का मूल कारण इलाहाबाद के कुछ व्यक्तियों के विचारों के अनुसार बाल गंगाधर तिलक की उपस्थिति से उत्पन्न हुए विषय से जनता को मुक्त करना था । [21]

श्री गोपाल कृष्ण गोखले के समान विचारधारा इलाहाबाद में अलोकप्रिय होती जा रही थी । इसका स्पष्ट संकेत "हिन्दुस्तान रिव्यू की इस स्वीकारोक्ति में हैं -

"Mr. Gokhale spoke as a statesman and a leader who knew the situation well, could give powerful expression of his opinion and had the courage to stand up for unpopular views."

---

20. मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ - 5 ।

21. मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ - 50 ।

जिस समय नम्र विचारों के प्रचार का असफल प्रयत्न हो रहा था उस समय विपिन चन्द्र पाल भी इलाहाबाद में उपस्थित थे । मार्च के आरम्भ में साहाल नाम के एक व्यक्ति को हम इलाहाबाद की जनता के सम्मुख उग्र विचार प्रस्तुत करते हुए देखते हैं । इलाहाबाद के चौक तथा अन्य कई स्थानों पर उन्होनें सरकार के विरूद्ध विद्रोह उत्पन्न कराने का स्पष्ट प्रयास किया था । अधिकारियों का यह अनुमान था कि सम्भवत: उनकी उग्रवादी का प्रभाव शीघ्र ही तिरोहित हो जायेगा । फिर भी उनके भाषण अधिकारियों के लिए असाध्य रूप सेतीव्र होते जा रहे थे । जुलाई में इलाहाबाद के ही चौक में दिये गये भाषण में उन्होने आंतकवाद की प्रवृत्ति भी प्रदर्शित कर दी । मार्च के मध्य में दिल्ली के सैय्यद हैदर रज़ा इलाहाबाद में थे तथा 27 तथा 28 मार्च को लाला लाजपत राय भी अपनी घोषणा करने आ पहुँचे थे ।[22]

क्रान्तिकारी भावना ने धीरे-धीरे शान्त युक्त-प्रान्त के सैनिकों को भी स्पर्श करना आरम्भ कर दिया था । पुलिस की गुप्त शाखा की एक सूचना ने प्रथम बार स्वदेशी आन्दोलन के सम्बन्ध में सैनिको के विचारों का वर्णन किया । उसने यह सूचना दी कि नवीं भोपाल पैदल सेना के हवल्दार सरदार गुलाबसिंह 15 फरवरी , 1907 को इलाहाबाद में इस विषय पर भाषण दे रहे थे । इसके कुछ ही दिनों पूर्व अब्दुल्ला कफूर जो कि चौथी घुड़सवार सेना की इलाहाबाद की

---

22. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली । जुलाई 1907, 1-2 ए

रेजीमेन्ट में कार्य कर रहे थे, लाहौर से लौटते हुए इलाहाबाद तथा आगरा के बीच गाड़ी में कुछ व्यक्तियों से कह रहे थे कि आवश्यकता पड़ने पर उनकी रेजीमेन्ट युद्ध के लिए तैयार है किन्तु वह अपने देशवासियों के विरूद्ध अस्त्र शस्त्र नहीं उठायेंगे ।[23]

जुलाई, 1908 में सी• आई• डी• विभाग ने यह सूचना दी कि नौ तथा 10 जुलाई , 1908 को 1857 के विद्रोह के स्मरण में उत्सव मनाने का इलाहाबाद में निश्चय किया गया था । यह भी कहा गया था कि एक ताबूत शोक के प्रतीक के रूप में निकाला जायेगा, परन्तु लेफ्टीनेंट गर्वनर ने उस पर विश्वास नहीं किया । वास्तव में भी किसी प्रकार का कोई प्रदर्शन नहीं हुआ । परन्तु सूचना प्राप्त हो जाने के कारण इलाहाबाद की अभारतीय जनता में कुछ आंतक फैल गया । इस प्रकार की अफवाह का प्रसार करने वाला कौन था ? इसके विषय में सरकार अनभिज्ञ ही रही ।[24]

कांग्रेस के दो वर्गों में प्रसारित होता विरोध सन् 1907 की सूरत कांग्रेस में विस्फोट की सीमा तक पहुँच गया था । अधिवेशन के आरम्भ होते ही अवश्यम्भावी घटित हुआ । सैद्धान्तिक विरोध इतना अधिक दृढ़ एवं स्पष्ट था कि ऐक्य का प्रयास भी असम्भव था । दक्षिण पंथी नेता किसी भी मूल्य पर कांग्रेस को नवीन विचारों के व्यक्तियों को हंस्तातिरत करने के पक्ष में नहीं थे ।

---

23. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स- नेशनल आरकॉइव्स ऑफ इण्डिया नयी दिल्ली, जुलाई 1907, 24 डिपोसिट ।

24. वही, जुलाई 1907, 1-2 ए ,

अत: अपना साम्राज्य निर्विवाद रूप से अडिग रखने के उद्देश्य से कांग्रेस के संविधान में परिवर्तन कर नवीन वर्ग को कांग्रेस में प्रवेश करने से असमर्थ बनाने का कार्य उन्होंनें इलाहाबाद में किया । 27, दिसम्बर को कांग्रेस अधिवेशन में बाधा पड़ने के बाद कुछ नम्रदलीय नेता उसी सन्ध्या को एकत्रित हुए । और दूसरे ही दिन एक कन्वेंशन का आयोजन करने का निश्चय किया । इस कन्वेंशन में केवल उन्हीं व्यक्तियों से सम्मिलित होने केलिए प्रार्थना की गई थी, जो कि नम्रदलीय नीतियों से सहमत हों । इसी सभा में श्री गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा प्रस्तुत किये गए प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस के संविधान में मनोनुकूल परिवर्तन करने के उद्देश्य से एक समिति को संगठित किया गया जिसकी बैठक इलाहाबाद में हुई । कन्वेशंन में सम्मिलित होने के लिए तेजबहादुर सप्रू ने युक्त प्रान्त के समस्त प्रमुख दक्षिणपंथियों को नियंत्रण दिया ।[25]

इलाहाबाद से पंडित सुन्दरलाल, सतीश चन्द्र बनर्जी आदि उल्लेखनीय व्यक्तियों के सम्मिलित होने की आशा एवं सम्भावना थी । इलाहाबाद के निवासियों को इन नेताओं के कार्य का संकेत जैसे ही मिला, विरोधी वर्ग ने उसके विरूद्ध अपना प्रचार कार्य आरम्भ कर दिया । 4 अप्रैल 1908 के पत्र में तेजबहादुर सप्रू ने श्री गोपाल कृष्ण गोखले को यह सूचना दी कि "सिटिजन" कन्वेंशन के विरूद्ध लेख लिख रहा था । उनको यह भी आशंका थी कि

---

25. गोपाल कृष्ण गोखले - पेपर्स , नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, दिनांक 10 अप्रैल, 1908 ।

कन्वेंशन के कार्य कलाप में बाधा उपस्थित करने तथा उसके विरूद्ध प्रचार करने के लिए बाहर के उग्रपंथी नेता भी इलाहाबाद में अवश्य ही उपस्थित होगें ।[26]

" सिटिजन" के विरोध का वातावरण इलाहाबाद की सार्वजनिक सभाओं के द्वारा निरन्तर प्रकट होता रहा । सन् 1906 के पूर्वार्ध में ही स्वदेशी के प्रचारार्थ वक्तृता दी जाने लगी थीं । उनमें से अधिकतर वक्तृता के संयम की सीमा के अन्तर्गत ही रहतीथीं , परन्तु विद्यार्थी समुदाय का रोष इस प्रकार से सीमित होने का अभ्यासी नहीं था । विदेशी वस्त्रों के विरूद्ध अभियान को सफल करने के लिए उन्हें अग्नि समर्पित करने का विचार उनके मष्तिक में घर करता जा रहा था ।[27]

18-19 अप्रैल, 1908 को हुए कन्वेन्शन में भाग लेने वाले व्यक्तियों में युक्तप्रान्त से पंडित मोतीलाल नेहरू, पंडित मदन मोहन मालवीय, गंगा प्रसाद वर्मा, तेजबहादुर सप्रू उपस्थित थे । इस कन्वेंशन द्वारा यह निश्चित कर दिया गया था कि कांग्रेस का उद्देश्य भारत-वासियों के लिए उस प्रकार की शासन प्रणाली को प्राप्त करना है जिस प्रकार की शासन प्रणाली ब्रिटिश साम्राज्य के स्वशासन प्राप्त उपनिवेशों में प्रचलित है । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए नियमबद्ध उपाय प्रयोग में लाये जायेगें । यह उपाय थे - वर्तमान शासन प्रणाली में दृढ़ता के साथ सुधार करना । जनता की नैतिक तथा मानसिक प्रगति करना, इत्यादि ।

---

26. गोपाल कृष्ण गोखले - पेपर्स, नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, दिनांक 6 अप्रैल, 1908 ।

27. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स, नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली। जुलाई 1967, 1-2 ।

जो व्यक्ति कांग्रेस के इस उद्देश्य तथा कार्यक्रम का समर्थक होने की प्रतिज्ञा करेंगें, केवल वही कांग्रेस के प्रतिनिधि हो सकेंगें । यह भी नियम बना दिया गया कि जो व्यक्ति कांग्रेस का सभापति चुना जायेगा, उसका नाम नियमानुसार प्रस्तुत किया जायेगा, परन्तु उसका विरोध करने का अधिकार किसी भी व्यक्ति को नहीं होगा । स्वागत समिति ऐसे दल का संगठन करेगी जिसका मुख्य कार्य अधिवेशन के समय शान्ति तथा सुव्यवस्था बनाये रखना होगा ।[28]

कांग्रेस विधान में जो नया परिवर्तन हुआ, वह वस्तुत: युग प्रवर्तक था । सूरत के झगड़े के कारण जिन नेताओं ने इलाहाबाद में "कन्वेंशन" खड़ा किया, उन्होंने बहुत ही सख्त विधान का निर्माण किया । सर्वप्रथम यह घोषणा की गई कि बाकायदा निर्वाचित सभापति बदला नहीं जा सकेगा क्योंकि सूरत में डा० रासबिहारी घोष के चुनाव पर ही बड़ा झगड़ा हुआ था । इसके बाद लोगों के विचार का वास्तविक विषय था कांग्रेस का क्रीड या ध्येय । सूरत कांग्रेस के भंग होने के एक दिन बाद 28 दिसम्बर को एक विचार रखने वाले लोगों ने मिलकर यह प्रस्ताव पास किया - " कांग्रेस का उद्देश्य है कि ब्रिटिश साम्राज्य के अन्य स्वशासित राष्ट्रों में जो शासन प्रणाली प्रचलित है । उसी तरह की शासन प्रणाली भारत के लोगों के लिए भी प्राप्त करना, और उन राष्ट्रों के साथ बराबरी के नाते साम्राज्य के अधिकारों और जिम्मेवारियों में सम्मिलित होना । "[29]

---

28. अभ्युदय - समाचार पत्र, 24 अप्रैल, 1908 ।

29. बी पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 5।

साधारण जनता को वैधानिक आन्दोलन की मृगमरीचिका से उन्मुक्त करने का प्रयास विद्यार्थी निरन्तर कर रहे थे । लाला लाजपत राय को राजद्रोह के अपराध हेतु जो निष्कासन दिया गया था, वह केवल किशोर समूह के लिए ही नहीं वरन् वरिष्ठ राजनीतिज्ञों के लिए भी धिक्कार का विषय था । परन्तु धिक्कार की मात्रा का अन्तर भी इस अवसर पर छुप नहीं सका । 21 मई 1907 को इसका विरोध प्रकट करने के लिए विद्यार्थियों ने एक सार्वजनिक सभा कीघोषणा की । यह सभा मुख्यतः विद्यार्थियों ने ही की थी, लेकिन कुछ बंगाली व्यक्ति भी इसमें सम्मिलित थे । सरकारी दृष्टिकोण से यह सभामहत्वपूर्ण नहीं थी । सम्भव है कि गण्मान्य व्यक्तियों का इस सभा में अनुपस्थित होना इस निष्कर्ष का कारण था । उस दृष्टि से महत्वपूर्ण सभा 28 मई की सन्ध्या को आयोजित हुई थी जिसमें लगभग 200 नम्र अथवा उदार विचारों के हिन्दू नेता उपस्थित थे । पंडित मदन मोहन मालवीय सभापति के पद पर आसीन थे । लाला लाजपत राय के निर्वासन के विरोध में जो प्रस्ताव पारित हुए उन्हें सरकार के सम्मुख प्रार्थना पत्र के रूप में भेजने का कुछ विद्यार्थियों एंव बंगालियों ने विरोध किया। अब उनमें अपनी शक्ति के आधार पर स्वाधिकार प्राप्त करने की आकांक्षा जागृत हो उठी थी । इधर नम्रदलीय नेता यद्यपि लाला लाजपत राय से सहानुभूति रखते थे , परन्तु पंजाब की हलचल की निन्दा किये बिना वे रह न सके ।[30] सुन्दरलाल हिन्दू छात्रावास के छात्रों ने उस कार्य का विरोध किया । इलाहाबाद के आयुक्त

---

30. होम पोलिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, अगस्त 1907, 39-177बी ।

एफ. डब्ल्यू. ब्राउनिंग ने 18 मई, 1907 को समाप्त होने वाली 15 दिनों की एक रिपोर्ट में यह सूचना दी कि -

"..... opinion of those interested in politics seems to be hostile to the strong measures taken by the Government."[31]

उग्रवादी क्रान्तिकारियों में प्रमुख- वरीन्द्र कुमार घोष, भूपेन्द्र नाथ, श्याम जी कृष्ण वर्मा, सावरकर बन्धु, लाला हरदयाल, मैडम कामा, मदनलाल धींगड़ा आदि थे । बंगाल में सन् 1907 से ही वातावरण आंतकपूर्ण हो गया था। और अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र आन्दोलन आरम्भ हो गया था । 6 दिसम्बर, 1907 को मिदनापुर के निकट उप गर्वनर की रेलगाड़ी को बम से उड़ा देने का प्रयत्न किया गया । इसी वर्ष 23 दिसम्बर को ढाका के जिला मजिस्ट्रेट को गोली से उड़ा देने का प्रयत्न भी किया गया था। 30 अप्रैल को किंग्सफोर्ड के बंगले की ओर से आती गाड़ी में किंग्सफोर्ड को उसमें बैठा हुआ समझकर एक बम भी फेंका गया था, परन्तु उस गाड़ी में दो अंग्रेज महिलाएं थीं - जिनकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई थी । " अलीपुरकेस" में 39 क्रांतिकारी पकड़े गये जिसमें अरविन्द घोष भी सम्मिलित थे ।[32]

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की " स्वराज्य" की आंकाक्षा ने सरकारी दमन चक्र को क्रियाशील कर दिया सरकार ने प्रहारों को स्वराज्य को शीघ्र

---

31. होम पोलिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स -नेश्नल आँरकाइव्स आँफ इंडिया, नयी दिल्ली, अगस्त 1907, 4 डिपोसिट ।

32. पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट आँफ इंडिया एन्ड इंडियन काँस्टीट्यूशन, पृष्ठ - 63 ,

ही सहन करना पड़ा । 29 जनवरी , 1908 के एक अंक में प्रकाशित "अकाल तथा उसका अन्तिम निराकरण " लेख सीमा का अतिक्रमण करता हुआ सा प्रतीत हुआ, तब सरकार ने भविष्य के लिए संपादक को चेतावनी देना उचित एवं आवश्यक समझा । किन्तु क्रांतिकारिता से आप्लावित पंक्तियाँ पत्र में पूर्ववत् स्थान प्राप्त करती ही रहीं । 23 मई 1908 के एक अंक में खुदीराम बोस द्वारा फेंके गये बम की घटना के सम्बन्ध में भी विचार प्रकट किये गये थे ।

" बम क्यों फेंका गया " शीर्षक इस लेखके पश्चात् 30 मार्च, 1908 को एक अन्य लेख " सच्ची तथा झूठी सहानुभूति " भी प्रकाशित हुआ । प्रथम लेख ने ऐंग्लो इण्डियन वर्ग के इस आरोप का खण्डन किया कि समस्त भारतीय राजद्रोही हो गये थे , परन्तु इसके साथ यह भी चेतावनी दे दी गई थी कि जिसे अभी तक असम्भव और आधारहीन समझा जाता रहा है, कहीं भविष्य में वही सत्य सिद्ध न हो जाये । खुदीराम बोस द्वारा फेंके गये बम काण्ड के उपरान्त लगभग समस्त वरिष्ठ भारतीय नेताओं के दुर्घटनाग्रस्त व्यक्तियों से सहानुभूति प्रकट की थी तथा उसके लिए उत्तरदायी समस्त नवयुवकों के कार्य की घोर निन्दा भी की थी । परन्तु इतने पर भी ऐंग्लो इण्डियन समाज ने उन पर आरोप लगाने में किञ्चित मात्र भी हिचकिचाहट महसूस नहीं की । इसवर्ग के प्रतिनिधि पत्र के रूप में इलाहाबाद के " पॉयनियर" समाचार पत्र के अभियोग विशेष उत्तेजक थे । "स्वराज्य" में प्रकाशित एक लेख ने "पॉयनियर" समाचार पत्र द्वारा बम काण्ड के लिए नवयुवकों को उत्तरदायी मानने का खण्डन

करते हुए स्वयं लार्ड कर्जन को इस परिस्थिति के लिए उत्तरदायी माना । परन्तु केवल यहीं तक भूल नहीं हुई ।

प्रथम - क्रांतिकारी भावना को सरकार ने जन्मदेने का कार्य किया था तथा फिर नवयुवकों की क्षणिक अस्थिर भावनाओं को अनावश्यक महत्व प्रदान करके उसको स्वयं प्रसारित होने का निमन्त्रण दिया ।

द्वितीय- लेख ने उन नवयुवकों को प्रति सहानुभूति प्रकट की जो कि अपने ही कृत्य के परिणामस्वरूप मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे थे । संपादक का विचार था कि यद्यपि कृत्य की निन्दा करना प्रत्येक दृष्टि से उचित सिद्ध हो सकता है, परन्तु इन नवयुवकों ने जो भी कुछ किया था वह उन्होनें अपने विचारों के अनुसार देशहित समझकर किया था । फिर भी उन्हीं केकृत्य से निरपराधी व्यक्तियों की अकाल मृत्यु ने क्या उनको स्वयं दुखित नहीं किया होगा ? उनकी किशोरावस्था, उनके माता पिता तथा अन्य प्रिय सम्बन्धी का अवर्णनीय शोक मन में क्रोध तथा प्रतिहिंसा नहीं, वरन् सहानुभूति उत्पन्न करता है । जो व्यक्ति इस समय उन किशोर नवयुवकों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित न करके केवल मृतकों के प्रति शोकभावना प्रकट करने में अपनी समग्र शक्ति का व्यय करता है, वह अपनी चापलूसी पूर्ण भावना को झूठी सहानुभूति के आवरण में रखकर अंग्रेजी सरकार को धोखा नहीं दे सकता । यह कारण भी स्पष्ट करते हुए संपादक ने कहा कि भारतवासी यदि धोखा देने की कला में कुशल हैं तो अंग्रेज इस कला में उनके गुरू

है और अद्वितीय हैं । फिर भी इस अवस्था में यह अनुभाव भी करना कि ऐसा चतुर शासन भ्रम-ग्रस्त हो जायेगा, एक दुराशा मात्र है ।

यद्यपि इसमें भी कोई सन्देह नहीं है कि इतने सशक्त, स्पष्ट तथा तीक्ष्ण उद्गार सरकार पर भ्रमातक चोट करने में सफल रहे । इलाहाबाद के जिलाधीश ने संपादक को प्रथम लेख पर 18 महीनों का सश्रम छात्रावास तथा 500 रूपये जुर्माने का दंड दिया । तथा इसी तरह द्वितीय लेख पर 2 साल का सश्रम कारावास तथा 500 रूपयों के जुर्माने के दण्ड तथा प्रत्येक दण्ड में जुर्माना न अदा करने पर तीन महीनों के अतिरिक्त कारावास का दण्ड दिया ।[33]

इसके उपरान्त दो संपादक शीघ्र ही परिवर्तित हुए तथा उसके पश्चात् बाबू रामहरि ने अपने संपादकत्व में " स्वराज्य" के 4 अंक प्रकाशित किये । " स्वराज्य" के 22 अगस्त 1908 के अंक में बम तथा बहिष्कार के सम्बन्ध में एक लेख भी प्रकाशित हुआ । 19 सितम्बर, 1908 के एक अंक में "जालिम" शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ तथा 26 सितम्बर , 1908 के एक अंक में " एक राजनैतिक कविता " प्रकाशित हुई जिसके रचनाकार इलाहाबाद के ही सज्जाद हसन थे । यह रचनाऐं सरकार के दृष्टिकोण से संपादक पर अभियोग लगाने के लिए पर्याप्त थीं । न्यायाधीश श्री रूस्तम जी ने अभियोग की सत्यता को सिद्ध करते हुए उपयुक्त रचनाओं से उद्धरण प्रस्तुत किये । " बम या बहिष्कार शीर्षक लेख में लेखक

---

33. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली । जुलाई 1908, 51-54 ए ।

यह कहता है कि युद्ध किये बिना सरकार से किसी भी प्रकार का समझौता सम्भव नहीं है । और सत्यता तो यह है कि युद्ध तो आरम्भ हो ही गया है, रक्तपात भी प्रतिक्षण बढ़ता ही जा रहा है, यह रक्तपात तब तक समाप्त नहीं होगा, जब तक कि देवताओं के शत्रु विनष्ट अथवा समाप्त नहीं हो जायेंगे । परन्तु यदि युद्ध में विजय प्राप्त ही करनी हो तो भारतीयों को यह सिद्ध करना होगा कि उनके अस्त्र अंग्रेजों से कहीं अधिक श्रेष्ठ हैं । इस दृष्टिकोण से बम योजनाएं अधिक सफल प्रतीत नहीं होती । "पॉयनियर" समाचार पत्र के संपादक का यह भी विचार था कि यद्यपि बम क्षणिक उत्तेजना ही उत्पन्न कर सकता है तथापि देश के स्वतंत्रता संग्राम के उपयुक्त अस्त्रों का निर्माण नहीं कर सकता । यदि एक विदेशी को कालग्रस्त करने के लिए 10 मूल्यवान देशी प्राणों का बलिदान करना पड़े तो उसका लाभ ही क्या है । अतः बम से अधिक अन्य अस्त्रों को अपनाने का निमंत्रण दिया गया । द्वितीय लेख "जालिम" में उसके रचयिता ने जनता को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि कितनी भी विशाल शक्ति हो, यदि वह आतताई रूप ग्रहण कर लेती है तो उसका विनाश अवश्यम्भावी है । राजनैतिक कविता" कीभी कुछ पंक्तियाँ इसी प्रकार के विचारों से ओत प्रोत थीं । राजनैतिक कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है --

" वो फिराक में हैं इसकी कि हम सबको मिटा दें,
हमको भी चैन नहीं है बिना उनको निकाले,
हमको तो मयस्सर नहीं गुदड़ी भी फटी सी,
वो ओढ़ते हैं चैन से अब शाल दुशाले । "

इसी प्रकार से बंग वासियों के उत्साह के सम्बन्ध में भी कवि कहता है -

" जो कौम थी मशहूर कि है बुजुदिली बोदी,
अब आज उन्हीं से हैं पड़े जान के लाले । "

इसके साथ ही ब्रिटिश साम्राज्य को भी इस प्रकार चित्रित किया है -

"मुंसिफ हो अगर कोई तो इन्साफ भी चाहे । "

उसी अंक में इस प्रकार की सात अन्य रचनाएं भी थीं जो कि न्यायधीश के विचार में प्रस्तुत पंक्तियों से भी अधिक आपत्तिजनक थीं ।"इण्डियन पीनल कोड " की धारा 124 ए के अन्तर्गत संपादक बाबू रामहरि को प्रत्येक अपराध पर 7 वर्ष के निष्कासन का दण्ड दिया गया । तीनों दण्ड एक साथ ही समाप्त होने थे ।[34]

सन् 1908 के सितम्बर माह में भारती भवन पुस्तकालय में टाइप की हुई सूचनाएं प्राप्त हुई, जिनका शीर्षक था - " यूज ऑफ द ऐक्सप्लोसिव शैल्स " । पंडित मदन मोहन मालवीय के एक पुत्र ने कुछ ही दिनों के उपरान्त यह सूचना दी कि क्रांतिकारी पत्र"युगान्तर" की कुछ प्रतियां उनके पुस्तकालय की मेज पर ही प्राप्त हुई थीं । पुलिस के हाथ में टाइप की हुई वह सूचनाएं आ चुकी थीं,

---

34. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया नयी दिल्ली, दिसम्बर 1908, 124-128 ।

सम्भवतः दूसरी सूचना स्वयं देकर पंडित मदन मोहन मालवीय के पुत्र ने पुलिस के सन्देह से मुक्त होने का प्रयास किया था ।[35]

सन् 1909 की ग्रीष्म ऋतु भावी सुधार योजना के कारण उत्तेजना तथा आकांक्षा से उद्वेलित थी । पंडित मोतीलाल नेहरू इलाहाबाद की स्थिति के सम्बन्ध में लिखते हैं :-

" We simply live for half the day in expectation of the 'Pioneer' and spend the other half in discussing the news which it brings."[36]

सन् 1909 में कांग्रेस ने यह अनुभव किया कि उसके सारे अनुरोध विनय आदि का कोई परिणाम निकला नहीं था । इस वर्ष की कांग्रेस में श्री गोखले ने प्रस्ताव पेश करते हुए " अधिकारियों के विश्वासघात और महात्मा गांधी के नेतृत्व में भारतीयों के लम्बे और शान्त संग्राम का वर्णन किया । अब प्रभावकारी आन्दोलन का समय आ चुका था और निष्क्रिय प्रतिरोध । सत्याग्रह । का महान् संग्राम प्रारम्भ हुआ । 12,000 रूपये की चन्दा भी एकत्रित हो गया । इसके अतिरिक्त सर जमशेद जी टाटा के दूसरे पुत्र श्री रतन टाटा ने प्रवासी भारतीयों के कष्ट निवारण के लिए 25,000/ दिये । कांग्रेस ने 24वें अधिवेशन ।लाहौर । में इस उदारता के लिए श्री रतन जे० टाटा को धन्यवाद दिया । कांग्रेस के आगामी अधिवेशन ।इलाहाबाद। तक निष्क्रिय प्रतिरोध का संग्राम अपनी चरम् सीमा पर

---

35. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आॅरकाइव्स आॅफ इंडिया, नयी दिल्ली, अक्टूबर 1908, 1-8 ।

36. मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ - 65 ,

चुका था । कांग्रेस ने ट्रान्सवाल के उन सभी भारतीयों के उत्कृष्ट देश प्रेम, साहस और त्याग की प्रशंसा की, जो अपने देश के लिए वीरतापूर्वक कैद भोगते हुए अनेक कठिनाइयों के रहते हुए भी अपने प्रारम्भिक नागरिक अधिकारों के लिए शान्तिपूर्ण और स्वार्थहीन लड़ाई लड़ रहे थे ।[37]

भारत में शासन व्यवस्था के सुधार के निमित्त ब्रिटिश संसद ने सन् 1909 में जिस कानून को पास किया था उसे "इण्डियन कौंसिल एक्ट 1909 " कहा गया है । सामान्यत: इसे मार्ले मिन्टो सुधार " इसलिए कहा जाता है, क्योंकि इस कानून का अधिनियमन करते समय मिस्टर मार्ले भारत-मन्त्री और लार्ड मिन्टो भारत केवाइसरॉय थे । इन्हीं दोनों व्यक्तियों का इस कानून को पास कराने में प्रमुख हाथ था । - - - इस कानून का मुख्य उद्देश्य विधान परिषदों की सदस्य संख्या का विस्तार करके उनमें भारतीयों को और अधिक भाग लेने का अवसर देना था । अत: केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान परिषदों में सदस्यों की संख्या बढ़ाई गई । परन्तु वास्तव में सन् 1909 का सुधार अधिनियम ब्रिटिश शासकों की किसी भी नेक नीयती का परिणाम नहीं माना जा सकता है क्योंकि न तो इसके पीछे कोई सदभावना ही थी, और न ही इसकी कोई सौद्देश्यता ही थी । वरन् भारतीय असन्तोष की

---

37. बी० पट्टाभिसीतारमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 45

प्रतिक्रिया के फलस्वरूप विवश होकर उन्हें यह कानून पास करना पड़ा था। सन् 1909 के शासन सुधार अधिनियम ने कांग्रेस के स्वराज्य की मांग पर पानी फेर दिया था।[38]

सितम्बर, सन् 1910 में अग्नि में आहुति देने का कार्य युवक लाद्दाराम ने सम्भाला। लाद्दाराम "स्वराज्य" समाचार पत्र के संपादक थे। लाद्दाराम को भी ब्रिटिश सरकार ने अतिशीघ्र ही पुरस्कृत किया। जिन तीन लेखों के आधार पर कानूनी कार्यवाही उनके विरूद्ध की गई, वह थे - "वफादारी", "मुशायरा" तथा " बहार और हम"। प्रथम दो लेख 5 फरवरी, 1910 के एक अंक में प्रकाशित हुए। उसमें अकबर को एक महिला द्वारा सच्चा स्वदेशी शासक बनाने की काल्पनिक कहानी द्वारा प्रत्यक्ष रूप में मार्ग से विचलित ब्रिटिश सरकार को बलपूर्वक सही मार्ग का ज्ञान कराने का आमन्त्रण जनता को दे दिया गया था। परन्तु तीसरा लेख न्यायधीश की दृष्टि में सर्वाधिक आपत्तिजनक था। इस लेख में भारत की तुलना एक सुन्दर उपवन से की गई थी, जिसको अंग्रेजी सरकार एक अत्याचारी माली के समान नष्ट भ्रष्ट कर रही थी। 23 वर्षीय लाद्दाराम को सम्मिलित रूप से 10 वर्षों का निष्कासन दिया गया।[39]

सन् 1910 के प्रेस एक्ट नेलाद्दाराम के पुनर्जीवन का प्रत्येक मार्ग अवरूद्ध कर दिया था। इस पत्र के सम्बन्ध में सरकार का यह विचार था कि -

---

38. जी0डी0 तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, पृष्ठ - 82 वही, पृष्ठ 84।

39. होम पोलिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स -नेशनल ऑरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, सितम्बर 1910, 11-18ए।

" Swarazya was probably the boldest and most persistently seditions journal in the country."[40]

युक्तप्रान्त के सन्न 1910 में प्रकाशित भारतीय पत्रों पर प्रस्तुत किये गये ज्ञापन ने सन्तोष प्रकट किया -

"In these provinces at any rate it may be fairly claimed that the Indian Press Act has fulfilled its for which it was enactod." [41]

"स्वराज्य" के दंडित संपादक लाढ़ाराम सभा के भी सदस्य थे । उनकी निजी डायरी के चतुर्थ पृष्ठ में इसी सभा के अधिनायक को प्रेषित किये जाने उनके एक पत्र की प्रतिलिपि है पत्र की पंक्तियाँ निम्न हैं -

"My lord, after working some period in the public gathering as an army, a notice to the Government should be given that if he will not stop the cow killing a war will be held with the Government."

1 नवम्बर, 1909 को लिखे गये पृष्ठ से यह ज्ञात होता है कि इस प्रचार हेतु लाढ़ाराम पश्चिमोत्तर भाग के अधिनायक चुने गये थे । जब "स्वराज्य" के संपादक के रूप में निशंक रूप से इलाहाबाद आने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ तो

---

40. होम पोलिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जुलाई 1911, 68 बी,

41. वही, जुलाई 1911, 68-69 बी ।

वह इलाहाबाद आ गये, परन्तु उनका मुख्य उद्देश्य प्रचार ही था । जब तक जमानत की मांग हुई तब तक लाढ़ाराम ने एक अन्य व्यक्ति को इस कार्य के लिए तैयार कर लिया था ।[42]

चाहे सम्पूर्ण घटना पूर्णतः आधारहीन हो, परन्तु इलाहाबाद की तनावपूर्ण स्थिति तथा अधिकारियों की सशंक प्रवृत्ति तो इससे मुखर हो ही उठती है । इसी प्रकार 12-13 नवम्बर, 1910 की रामलीला में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई से सम्बन्धित दृश्य प्रस्तुत किये गये थे । जिले के पुलिस अधीक्षक ने इसमें कोई आपत्ति जनक चिन्ह लक्षित नहीं किया, परन्तु क्रिमिनल इन्टेलीजेन्स विभाग का मत था कि इसके पिछले वर्ष जब बान्दा में प्रदर्शन किया गया था, तब उसे नवीन तथा आपत्तिजनक लक्षण माना गया था ।[43]

सन् 1910 के अधिवेशन के साथ ही एक अन्य संस्था का भी जन्म हुआ । यह संस्था " हिन्दू महासभा" थी । मुसलमानों को शान्त करने की कांग्रेसी नीति से कुछ हिन्दू अप्रसन्न थे । पंजाब के लाला लाजचन्द्र ने सन् 1907 में लाहौर में एक हिन्दू सम्मेलन का आयोजन किया, जिसमें बनाने का निमंत्रण दिया । इसी के परिणामस्वरूप सन् 1910 में पंडित मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में

---

42. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, सितम्बर 1910, 11-18ए

43. वही, दिसम्बर 1910- 1 बी ।

अखिल भारतीय हिन्दू महासभा का प्रथम अधिवेशन इलाहाबाद में हुआ । उत्तर भारतीय नेताओं के प्रबल समर्थन के कारण इसकी स्थापना हो सकी थी यद्यपि पंडित मोतीलाल नेहरू के समान धर्म निरपेक्ष नेता इसके विरुद्ध थे । उनका यह मत था कि हिन्दू महासभा की नियुक्ति से साम्प्रदायिक समझौते में बाधा उत्पन्न होगी । स्वयं कांग्रेस की दृढ़ता के लिए भी हिन्दू महासभा हानिकारक सिद्ध होगी ।[44] हिन्दु और मुसलमानों के विरोधों का लाभ जिस प्रकार से अंग्रेज अधिकारी प्राप्त कर रहे थे, उससे निराश होकर पंडित मोतीलाल नेहरू ने पंडित जवाहरलाल नेहरू को लिखा -

" An open rupture between the leaders of the two communities is imminent. Nothing short of a miracle can save it."[46]

2 जनवरी, 1911 को " पॉयनियर" के सम्पादक को लिखे एक पत्र में एफ्टन फ्रन्ट नामक व्यक्ति ने घोषणा की -

" And I predict that as the congress has conspicuously failed in uniting even the veried Hindu races so like-wise will the conference fail to bring about unity between the Mohammadan and the Hindus."

---

44. नेहरू पेपर्स- मोतीलाल नेहरू सीरिज, नेहरू मेमोरियल एन्ड म्यूजियम लाइब्रेरी ,तीन मूर्ति , नयी दिल्ली, दिनांक 6 जनवरी, 1911 ।

45 मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ - 65

लेखक का यह तो मत था कि -

" The real regeneration of India rests on a racial basis. Each race should work out its own salvation separately."[47]

सन् 1911 में लार्ड हार्डिंग ने सम्राट जार्ज पंचम तथा महारानी मेरी को भारत बुलाया और दिल्ली में एक बड़े भारी दरबार का आयोजन किया। इस दरबार में ब्रिटिश सम्राट ने यह घोषणा की, कि बंगाल का विभाजन समाप्त करके इसको दुबारा एक किया जाता है। इसके पश्चात् भारत की राजधानी कलकत्ता के स्थान पर दिल्ली होगी। सम्पूर्ण भारत ने इस घोषणा का स्वागत किया।[47] सन् 1913 में करांची अधिवेशन हुआ, जिसमें श्रीयुत वाचा ने कहा था -

" कांग्रेस नये शुभजीवन में प्रवेश कर रही है और उसके ग्रह भी मंगल ही दिखाई देते हैं। इससे हमें विश्वास है कि हम अवश्य ही नवीन सफलताऐं प्राप्त करेगें। "

परन्तु यह सब होने पर भी जातिगत प्रतिनिधित्व ज्यों का त्यों ही बना रहा।[48] सन् 1913 के कांग्रेस अधिवेशन में यह माँग रक्खी गई कि केन्द्रीय विधान परिषद मे गैर-सरकारी सदस्यों का बहुमत होना चाहिए और प्रान्तीय

---

46. पॉयनियर-समाचार पत्र, 2जनवरी, 1977
47. पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इन्डिया एन्ड इण्डिया कॉन्स्टीट्यूशन, पृष्ठ-70
48. बी पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 43,

परिषदों में निर्वाचित सदस्यों का बहुमत होना चाहिए ब्रिटिश सरकार ने अभी तक उत्तरदायी शासन की दिशा में कोई कदम नहीं उठाया था । अतः स्पष्टतया अब कांग्रेस का नया मोर्चा इस माँग के समर्थन में खोला जाना था । सन् 1914 के कांग्रेस अधिवेशन में यह माँग रक्खी गयी थी कि भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वायत्तशासी सरकार निर्मित्त की जानी चाहिए ।

सन् 1914 में कांग्रेस के नेतृत्व में परिवर्तन होने लगा। श्रीमती एनी बेसेन्ट जो एक आयरिश महिला थी, थियोसोफिकल सोसायटी का संचालन करती थीं । भारत आने पर उन्हें भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा उत्पन्नहुई । साथ ही भारतीय जनता के कष्टों से वह बहुत चिन्तित भी हुई । श्रीमती एनी बेसेन्ट को यह लगा कि यह सब भारत की राजनीतिक पराधीनता के कारण है । अतः उन्होनें थियोसोफी का कार्य छोड़कर राजनीति में प्रवेश किया और आयरलैण्ड के नमूने पर भारत में भी होमरूल आन्दोलन छेड़ने का प्रण कर लिया ।[49] इलाहाबाद में 20 और 21 अप्रैल 1914 को महासमिति की एक बैठक हुई । जिसमें सरकार ने गांधी जी को दिल्ली और पंजाब से देश-निकाले का जो हुक्म दिया था, उसका विरोध किया और पंजाब में किये गये अत्याचार की जाँच कराने पर जोर दिया गया । 8 जून, 1914 को महासमिति की दूसरी बैठक इलाहाबाद में हुई । इस बैठक में यह तथा अन्य मामलों पर भी विचार हुआ कि देश के समस्त प्रमुख पत्रों के सम्पादकों ने, श्रीमती एनी बेसेन्ट तथा सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने, एण्डरूज साहब से

---

49. डी०सी० चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कान्स्टीट्यूशनल डेवलपमेंट, पृष्ठ - 85.

यह अनुरोध किया था कि वह पंजाब जाकर दुर्घटना और उपद्रव के सम्बन्ध में स्वतंत्र रूप से जाँच करें कि सर माइकल ओडायर के शासन में फौज के लिए रंगरूट भर्ती करने में किन हथकन्डों और ठगों को काम में लाया गया था। किस प्रकार " लेबर कोर " में आदमियों को भर्ती किया गया था, किस प्रकार लड़ाई के लिए कर्ज लिया गया और फौजी कानून के दिनों में किस प्रकार का शासन किया गया था।[50]

सन् 1914 में प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ हो गया था। ब्रिटिश सरकार ने यह घोषणा की कि ब्रिटेन और अन्य प्रजातंत्रात्मक देशों द्वारा यह युद्ध जर्मनी के निरकुंश शासकों के विरूद्ध लोकतन्त्र की रक्षा के लिए लड़ा जा रहा है। लोकतन्त्र की रक्षा के लिए भारतीय जनता से भी सहायता की माँग की गयी। इस समय भारतीय जनता के प्रति लार्ड हार्डिंग का दृष्टिकोण बहुत अधिक सहानुभूतिपूर्ण था। अतः राष्ट्रीय नेताओं के द्वारा युद्ध के प्रयत्नों में ब्रिटने को पूर्ण रूप से सहयोग देने का आश्वासन दिया गया और भारतीय जनता को इस प्रकार का सहयोग देने की प्रेरणा दी गयी। भारतीय नवयुवकों ने विभिन्न क्षेत्रो में लड़ाई में अपूर्व शौर्य का परिचय दिया।[51] भारतीय नेताओं ने यह माँग भी की थी कि सरकार यह घोषणा करें कि प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् भारत में वैसी ही सरकार को स्थापित कर दिया जायेगा, जैसी कि उपनिवेशों में विधमान

---

50. बी0 पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 162
51. पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन , पृष्ठ - 7

है । लेकिन ब्रिटिश सरकार इस सम्बन्ध में चुप ही रही । अत: विवश होकर भारतीय नेताओं, मिसेज एनी बेसेन्ट, और लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने होमरूल आन्दोलन चलाया ।[52] श्रीमती एनी बेसेन्ट एक आयरिश महिला और भारत में थियोसॉफिकल सोसायटी की संचालिका थीं । इस समय आयरलैण्ड में आयरिश नेता रेडमाण्ड के नेतृत्व में "होमरूल लीग" की स्थापना हुई थी, जो कि वैधानिक और शान्तिमय उपायों से आयरलैण्ड के लिए होमरूल या स्वशासन प्राप्त करना चाहती थी । श्रीमती एनी बेसेन्ट यही चाहती थीं कि भारत में भी आयरलैण्ड की भाँति, "होमरूल आन्दोलन चलाया जाय । इसी हेतु श्रीमती एनी बेसेन्ट कांग्रेस में सम्मिलित हुई, और उदारवादियों तथा उग्रवादियों को एकताबद्ध करके होमरूल आन्दोलन चलाया । भारत में होमरूल आन्दोलन का नेतृत्व लोकमान्य बालगंगाधर तिलक तथा श्रीमती एनी बेसेन्ट द्वारा किया गया ।[53] भारत के राजनैतिक इतिहास में सन् 1915 का वर्ष एक नये युग का श्रीगणेश करता है, यह वह काल है जिसके राजनैतिक इतिहास का वर्णन श्रीमती एनी बेसेन्ट की "भारतवर्ष ने स्वाधीनता के लिए क्या किया ?" नामक पुस्तक में किया गया है, जो कि सन् 1885 से सन् 1914 तक चलता है ।[54]

प्रथम विश्वयुद्ध के सम्बन्ध में इलाहाबाद के हिन्दू नेता एकमत नहीं थे । नम्रदलीय नेताओं का मित्र राष्ट्रों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार एवं सहानुभूति प्रकट करना स्वाभाविक ही था । परन्तु इन्हीं दिनो "अभ्युदय" समाचार पत्र ने

---

52. पुखराज जैन, नेशनल मूवमेन्ट ऑफ इंडिया, पृष्ठ - 71
53. वही, पृष्ठ - 72,
54. बी0 पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 115,

यह लिखा कि अंग्रेज अधिकारियों का व्यवहार भारतीय सैनिकों के साथ दासों के समान था। अतः इस अवस्था में युद्ध के लिए धन को एकत्र करना आत्मसम्मान के विरुद्ध ही था ।[55] प्रथम विश्वयुद्ध ने हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे के समीप आने का अवसर प्रदान किया । अंग्रेजों के व्यवहार से पीड़ित होकर मुसलमानों ने अपने देशवासियों की ओर आशामय दृष्टि से देखा । हिन्दुओं की ओर से कांग्रेस भी अवसर का लाभ उठाकर एकता का कार्य सम्पन्न कर लेना श्रेयष्कर समझती थी । फलतः सन् 1916 की 22 एवं 23 तथा 24 अप्रैल को अखिल भारतीय कांग्रेस की समिति की एक बैठक ने इलाहाबाद में एक सुधार योजना के सम्बन्ध में विचार विमर्श किया । यह बैठक पंडित मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में हुई थी ।[56]

सन् 1915 के आरम्भ मे यह प्रतीत हुआ कि हिन्दू तथा मुसलमान एक दूसरे के निकट आते जा रहे थे । इसका कारण यह था युक्त प्रान्त में एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल के लिए प्रारम्भ हुए आन्दोलन में कुछ विशिष्ट मुसलमानों का सहयोग दिया जाना । यह माँग कांग्रेस की विषय समिति तथा अधिवेशन में प्रारम्भ से ही प्रधान रही थी । युक्त प्रान्त के गर्वनर हीवेट इसके मुख्य विरोधी थे । गर्वनर हीवेट के शासनकाल के पश्चात् सर जेम्स मेस्टन की नियुक्ति ने यह आशा उत्पन्न कर दी थी कि इस बार जनता की इच्छापूर्ति हो जायेगी । भारत सरकार ने भी अब

---

55. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स- नेशनल आरकाइव्स ऑफ इण्डिया, नयी दिल्ली, अगस्त 1915, 28 डिपोसिट ।

56. वही, अप्रैल 1916, 19 डिपोसिट ।

इस सुधार के लिए अपनी सम्मति दे दी थी । ब्रिटिश संसद में इस आशय का बिल भी प्रस्तुत किया गया । लार्ड कर्जन , लार्ड मैकडोनल्ड, हीवेट आदि का यह निर्णय था कि प्रदेश अभी एग्जीक्यूटिव कौंसिल के उपयुक्त नहीं हुआ था । उनका यह कहना था कि सम्पूर्ण जनता की इच्छा इस माँग में सम्मिलित नहीं है । दूसरा कारण उपस्थित किया गया कि जमींदार तथा ताल्लुकेदार इसके विरोधी थे । हिन्दुओं और मुसलमानों का परस्पर मतभेद तृतीय कारण के रूप में प्रस्तुत किया गया ।[57] भारतीय जनता और भारत की सरकार की अवहेलना इलाहाबाद की जनता को अरुचिकर लगी । अतः अप्रैल सन् 1915 को इलाहाबाद में पंडित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक सभा हुई । इसमें अब्दुल रजफ ने एक मुख्य प्रस्ताव को प्रस्तुत किया जो कि इस प्रकार से था -

" That the meeting of the citizens of Allahabad expresses its keen disappointment and strongly protests against the action of house of lords in opposing the oreation of an executive council in those provinces and this meeting is strongly of opinion that a Governor-in-Council should be appointed ~~that~~ under the provisions of the charter Act of 1833 to administer these provinces so as to put them on an equal footing with the presidencies of Bengal, Madras and, Bombay."[59]

---

57. लीडर, समाचार पत्र, 31 मार्च, 1915,

58. लीडर, समाचार पत्र, 31 मार्च, सन् 1915 ,

इसी कार्य के लिए कुछ ही दिनों के उपरान्त युक्त प्रान्तीय कान्फ्रेन्स का विशेष अधिवेशन हुआ । किसी कारण विशेष पर सम्मिलित सार्वजनिक सभा के बृहत् आयोजन का यह प्रथम अवसर था । हिन्दू, मुसलमान, ताल्लुकेदार ,जमींदार चिकित्सक , कांग्रेस के विभिन्न वर्ग, सभी ने इस अवसर पर उपस्थित होकर एग्जीक्यूटिव कौंसिल के लिए किये गये आन्दोलन को एकता का आधार बताया । इसके अध्यक्ष महमूदाबाद के राजा ने सम्मेलन की इसी विशिष्टता की ओर अपना संकेत भी किया था -

" The representative character of this meeting attended as it is by such a large number of delegated of all classes and creeds is an index that on this question as fortunately on many more there is no cleavage in the opinion of the two great communities Hindus and Musalmans that inhibit these provinces.".

उनके अनुसार युक्त प्रान्त अब उस सीमा को पार कर चुका है, जब एक व्यक्ति का शासन उसे सन्तुष्ट कर सके । यदि ऐसे गर्वनर की नियुक्ति की जायेगी जो ब्रिटिश परम्पराओं तथा आदर्शों को वहन करता हो, तभी वह इस प्रान्त के अधिकारियों के पारस्परिक दृष्टिकोण में वह परिवर्तन कर सकेगा। प्रथम प्रस्ताव प्रताप बहादुर सिंह ने प्रस्तुत किया, जिसमें हाउस ऑफ लाईस के अन्यायी निर्णय पर विरोध प्रकट किया गया था । प्रस्ताव का समर्थन करते हुए

नवाब अब्दुल मजीद ने यह कहा कि हिन्दू और मुसलमानों के पारस्परिक विरोधों के आधार पर इस प्रान्त को एग्जीक्यूटिव कौंसिल से वंचित रखा जाना तर्कसंगत नहीं है । क्या जिन प्रान्तों में एग्जीक्यूटिव कौंसिल है उनमें इन मतभेदों का पूर्ण अभाव है ? कब तक यह छोटी-छोटी बातें प्रगति के मार्ग को रोकने का प्रयास कर सकेगीं ।[59] सैयद अब्दुल रऊफ ने तृतीय प्रस्ताव उपस्थित किया, जिसके द्वारा उन सभी तर्कों का खण्डन किया गया था जिसके आधार पर जनता की माँग को अस्वीकृत किया गया था । इस प्रस्ताव के समर्थन में सर तेजबहादुर सपू का कथन था कि यदि यह कहा जाता है कि यह माँग केवल शिक्षित वर्ग तक ही सीमित है तो यह अनुचित भी नहीं है । शिक्षित वर्ग को प्रतिनिधित्व करने का पूर्ण अधिकार है । यह तर्क कि भारतीयों की सभी उचित माँगों की पूर्ति की जा चुकी है पूर्णत: सत्य नहीं हैं । वह कहते हैं कि -

"T heir aspiration could not be fulfilled until they obtained the colonial form of self-government."

श्री सतीश चन्द्र बनर्जी ने भी तृतीय प्रस्ताव प्रस्तावित किया, जिसमें यह कहा गया था कि युक्त प्रान्त का हित इसी में निहित है कि उसे एग्जीक्यूटिव कौंसिल की सुविधा प्रदान करके अन्य प्रान्तों के समकक्ष कर दिया जाये । समर्थनकर्ता

---

59. लीडर -समाचार पत्र , 30 मई, सन् 1915,

श्री सी0 वाई, चिन्तामणि का अनुभव था कि युक्त प्रान्त के पिछड़ेपन का यही कारण है कि उसे उदारता तथा सहृदयता से शासित नहीं किया गया था । सन् 1911 की जनगणना की रिपोर्ट द्वारा भी यही पाया गया था कि जहाँ अन्य स्थानों में जनसंख्या की वृद्धि हुई थी, युक्त प्रान्त में कमी हुई थी । जनहित कार्यों से अधिक पुलिस के प्रबन्ध करने में खर्च होता था । [60]

पंडित मदनमोहन मालवीय का मत था कि एक व्यक्ति का शासन स्वयं साम्प्रदायकि तनाव के कारण था । लेफ्टीनेन्ट गर्वनर कभी मुसल्मानों के प्रति पक्षपात करता था, तो कभी वह हिन्दुओं के साथ पक्षपात करता था । अतः निष्पक्ष व्यवहार के निर्वाह के लिए भी एग्जीक्यूटिव कौंसिल की आवश्यकता थी । इस आन्दोलन के प्रचार के लिए की गई स्थानीय सभाओं के सम्बन्ध में इलाहाबाद के आयुक्त की रिपोर्ट थी कि वह कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के आग्रह पर ही आयोजित हो पायी थी ।[61] इसी प्रकार की निश्चिंतता वह 30 मई, सन् 1915 की कान्फ्रेंस के सम्बन्ध में प्रकट नहीं कर पाये । अतः रिपोर्ट का यह निष्कर्ष था कि -

" The meeting held at Allahabad on May 30th regarding an Executive council for the U.P. was enthusiastic and well organized one." [63]

---

60. लीडर- समाचार पत्र, 30 मई, सन् 1915 ।
61. होम पोलिटिक्स डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जून 1915, 20 डिपोसिट।
62. वही, जुलाई 1915, 9 डिपोसिट ।

इस आन्दोलन में वैसे भी तो मुसलमानों का एक वर्ग भाग नहीं ले रहा था, परन्तु एक विशाल वर्ग तो सहानुभूति पूर्ण का था ही । परन्तु इन्हीं दिनों प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभा में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के मुसलमानों की भावना पर कुछ आघात अवश्य किया था ।[63]

हिन्दू और मुसलमानों के विरोधों का लाभ उठाकर जिस प्रकार अंग्रेज अधिकारी कार्य कर रहे थे, उससे निराश होकर पंडित मोतीलाल नेहरू ने पंडित जवाहर लाल नेहरू को लिखा कि -

"An open rupture between the leaders of the two communities is imminent, Nothing short of a miracle can save it."[65]

यद्यपि मुसलमानों में कुछ असन्तोष व्याप्त था । परन्तु धीरे-धीरे वह नवीन रूख ग्रहण कर रहा था । कुछ मुसलमानों ने तुर्की के प्रति अंग्रेजों के व्यवहार के कारण स्वयं अंग्रेजों के विरूद्ध प्रचार करना आरम्भ कर दिया था । इसी कारण मुसलमानों के माननीय नेता मौलाना मुहम्मद अली को नजरबन्द कर दिया गया । अब उनकी मुक्ति के लिए आन्दोलन शुरू हो गया । इलाहाबाद में भी मौलाना मुहम्मद अली से सहानुभूति रखने वाले व्यक्ति विद्यमान थे । सन् 1915 के अक्टूबर माह में इलाहाबाद में एक शिया कान्फ्रेंस आयोजित की गई,

---

63. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाईव्स ऑफ इण्डिया, नयी दिल्ली, अगस्त 1915, 2 डिपोसिट ।

64. मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ - 65 ,

जिसके सचिव मौलाना मुहम्मद अली के समर्थक थे, जो कि इलाहाबाद के ही थे। इलाहाबाद के जिलाधीश ने कान्फ्रेंस के पूर्व ही उनको चेतावनी दी थी कि वह कान्फ्रेंस में किसी भी प्रकार की राजनैतिक चर्चा का समावेश न करें।[65]

इलाहाबाद के नेताओं का आकर्षण एक ओर तो साम्प्रदायिक समस्या को सुलझाने की ओर रहा तो दूसरी तरफ इलाहाबाद की राजनीति उदारवादी दल की भावनाओं के बन्धन से मुक्त होने का प्रयास कर रही थी। सन् 1915 के अन्तिम महीनों में श्रीमती एनी बेसेन्ट के राजनीतिक विचारों से इलाहाबाद परिचित हुआ। श्रीमती एनी बेसेन्ट अपनी होमरूल लीग के समर्थन में वातावरण तैयार करने के लिए इलाहाबाद आयी थीं। उन्होंने इलाहाबाद के स्नातकों के सम्मुख वक्तृता दी।[66]

सन् 1915 के वर्ष की एक बड़ी दिलचस्प घटना यह है कि महात्मा गाँधी विषय समिति के सदस्य नहीं चुने जा सके। इसलिए सभापति ने इनको अपने अधिकार से इस समिति में नामजद किया था।

बम्बई कांग्रेस की एक सफलता यह भी थी कि उसने कांग्रेस के विधान में ऐसा महत्त्वपूर्ण संशोधन कर दिया था, जिसके द्वारा राष्ट्रीय दल के लोग भी कांग्रेस के प्रतिनिधि चुने जा सकते थे। 120 बम्बई कांग्रेस के फलस्वरूप एक सम्मिलित कमेटी भी बनायी गई, जिसके सुपुर्द यह कार्य किया गया कि वह एक

---

65. होम पोलिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स-नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, नवम्बर 1915, 9 डिपोसिट।

66. वही, जनवरी 1916, 35 डिपोसिट।

योजना को तैयार करे और साम्राज्य के अन्तर्गत स्वराज्य पाने के उद्देश्य को शीघ्र ही फलीभूत करने के अन्य सारे आवश्यक प्रबन्ध करें । यह भी तय हुआ था कि इस कमेटी द्वारा तैयार किया गया स्वराज्य का मसविदा, लखनऊ में कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों मिलकर पास करें । इसी सम्बन्ध में इलाहाबाद में पंडित मोतीलाल नेहरू के निवास स्थान पर महासमिति की बैठक में खूब वाद-विवाद हुआ था ।[67]

श्रीमती एनी बेसेन्ट ने यह कहा था -

" भारत के राजभक्ति के बदले में पुरस्कार की बात बहुत हो रही है, लेकिन भारत कुछ स्वतंत्रता या अधिकारों के लिए अपने पुत्रों के रक्त और पुत्रियों के आँसुओं से सौदेबाजी नहीं कर रहा है । भारत राष्ट्र के रूप में अपना न्याय अधिकार ब्रिटिश साम्राज्य से माँगता है । भारत इसको युद्ध के पूर्व माँगता था, युद्ध के बीच में माँग रहा है और युद्ध के बाद माँगेगा, परन्तु वह इस न्याय को एक पुरस्कार के रूप में नहीं, बल्कि अधिकार के रूपमें माँगता है इसके बारे में कोई गलत धारण नहीं होनी चाहिए ।[68]

---

67. बी0 पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 120
वही ,पृष्ठ - 192

68. एनी बेसेंट, हॉऊ इंडिया रॉट फॉर फ्रीडम, पृष्ठ - 575,

चतुर्थ - अध्याय

होमरूल और असहयोग आन्दोलन

का युग

। 1916 - 1925 ।

सन् 1915 का कांग्रेस का बम्बई अधिवेशन सत्येन्द्र प्रसाद सिन्हा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ । इस अधिवेशन में राष्ट्रीय नेताओं ने पर्याप्त उत्साह के साथ बहुत बड़ी संख्या में भाग लिया था । इस अधिवेशन में कांग्रेस संविधान के अन्तर्गत एक संशोधन द्वारा यह प्राविधान किया गया कि "कोई भी व्यक्ति इस शर्त पर कांग्रेस का प्रतिनिधि चुना जा सकता है कि 31 दिसम्बर सन् 1915 को वह लगातार 2 वर्ष की अवधि तक किसी ऐसे संगठन में चुना गया हो जिसका की उद्देश्य वैधानिक तरीकों से ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वायत्त शासन प्राप्त करना रहा हो ।" इस संशोधन ने राष्ट्रवादी नेताओं के कांग्रेस में प्रवेश के द्वार खोल दिये ।[1] प्रथम विश्वयुद्ध के सम्बन्ध में इलाहाबाद के हिन्दू नेता एकमत नहीं थे । नम्रदलीय नेताओं का मित्रराष्ट्रों के प्रति सहानुभूति प्रकट करना स्वाभाविक ही था ।[2] प्रथम विश्वयुद्ध में हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे के समीप आने का अवसर प्रदान किया । फलतः सन् 1916 की 22, 23, 24 अप्रैल को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की एक बैठक ने इलाहाबाद में एक सुधार योजना के सम्बन्ध में विचार विमर्श किया । यह बैठक पंडित मदनमोहन मालवीय की अध्यक्षता मेंहुई थी यह निश्चित हुआ था कि बैठक के निर्णय अन्तिम निर्णय नहीं होगें, वरन अगस्त में लीग तथा कांग्रेस की सम्मिलित बैठक के निष्कर्षों के आधार पर ही सुधार योजना का स्वरूप निश्चित किया जायेगा । इस प्रकार बैठक में भावी कांग्रेस लीग योजना का बीज आरोपित

---

1. जी0डी0तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, पृष्ठ - 89 ।
2. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स, नेशनल आरकॉइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, अगस्त 1915, 28 डिपोजिट ।

कर दिया गया, जिसके द्वारा कांग्रेस ने पृथक निर्वाचन के सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया । इस पृथक निर्वान्चन के सम्बन्ध में भी इलाहाबाद के कांग्रेसी नेताओं में मतभेद था । इलाहाबाद की बैठक के पूर्व ही नगर महापालिका में पृथक निर्वाचन को लेकर एक आन्दोलन आरम्भ हो चुका था । युक्तप्रांत की व्यवस्थापिका सभा द्वारा पारित हुआ, नगरमहापालिका बिल इस आन्दोलन का कारण था । प्रारम्भ से ही हिन्दू इसके विरोधी थे । मार्च, सन् 1916 में ही "लीडर" समाचार पत्र ने बिल का विरोध किया था । श्री सी. वाई. चिन्तामणि तथा पंडित मदन मोहन मालवीय प्रमुख व्यक्ति थे जिनके द्वारा आन्दोलन प्रारम्भ किया गया था ।[3] इस आन्दोलन के विरोध के प्रकटीकरण के उद्देश्य से नगर महापालिका के हिन्दू सदस्यों ने त्यागपत्र दे दिये ।[4] तथा सितम्बर 1916 में हो रहे इलाहाबाद मे नगर महापालिका के चुनावों को रोकने का भी प्रयत्न किया गया ।[5] परन्तु नगर महापालिका में चुनावों । मई, 1917। के समाप्त होने पर चुने गये हिन्दू सदस्यों ने तुरन्त त्यागपत्र दे दिये । इस प्रकार बहिष्कार की भावना इलाहाबाद में अन्य नगरों की उपेक्षा कहीं अधिक प्रखर थी ।[6]

15 जून सन् 1916 को इलाहाबाद में हुई जिला कांग्रेस समिति की एक बैठक में भी बिल के विरूद्ध प्रस्ताव पारित किया गया । प्रस्ताव में वाइसराय

---

3. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स-नेशनल आरकॉइव्स ऑफ इण्डिया, नयी दिल्ली, अप्रैल, 1916, 19 डिपोजिट ।
4. वही, अगस्त 1916, 25 डिपोजिट ।
5. वही, अक्टूबर 1917, 29 डिपोजिट ।
6. वही, मई 1917, 69 डिपोजिट ।

से यह प्रार्थना की गई थी कि वह इस बिल को अपनी सम्मति प्रदान न करें । जून 1916 के उत्तरार्ध में ही वाइसराय की सम्मति की सूचना पाते ही इलाहाबाद में उत्तेजना उत्पन्न हो गई । 23 जुलाई सन् 1916 को पंडित मदनमोहन मालवीय की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा हुई ।[7]

अगस्त सन् 1916 को श्रीमती एनी बेसेन्ट के ऐजेन्ट के रूप में अरून्डेल इलाहाबाद मे आये थे तथा उन्होंने भी होमरूल लीग के सम्बन्ध में प्रचारात्मक भाषण दिये । दिसम्बर सन् 1916 के उत्तरार्ध तक इलाहाबाद में होमरूल लीग की एक शाखा भी स्थापित हो गयी ।[8] इलाहाबाद के सम्बन्ध में श्रीमती एनी बेसेन्ट बड़े उत्साहपूर्वक कहती हैं कि -

" And when one comes to Allahabad, one is only confirmed in the conviction that India is awakened today and the awakening has not merely kindled the heart of the young generation but the heart of the older generation has got rekindled from the immortal chords that we call the fire of patriotism."

होमरूल लीग अपना कार्य निरन्तर कर रही थी । फरवरी, सन् 1917

---

7. लीडर, समाचार पत्र, 18 जून, 1916 ।
8. होम पोलिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स, -नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जनवरी 1917, 30 डिपोजिट ।

के पूर्वार्द्ध की सरकारी रिपोर्ट सूचित करती है कि यह कार्य अविकल रूप से जारी था। समाचार पत्रों ने भी इसमें उल्लेखनीय रूप से भाग लिया था। विशेष रूप से "मर्यादा" पत्र की इस आन्दोलन से विशेष सहानुभूति थी।[9] होमरूल की बढ़ती हुई लोकप्रियता से सरकार विचलित हो गई थी। अतः सरकार ने एनी बेसेन्ट को उनके साथियों सहित नजर बन्द कर लिया। श्रीमती एनी बेसेंट की नजरबन्दी के पूर्व इलाहाबाद के दो प्रमुख नेताओं ने प्रेस को वैधानिक आन्दोलन के सम्बन्ध में पत्र भेजे थे। परन्तु मद्रास सरकार का यह कार्य तत्काल उस प्रवृत्ति के लिए प्रमाण स्वरूप मानलिया गया था कि सरकार की आकाँक्षा सुधार करने की नहीं थी।[10] जनवरी सन् 1917 में इलाहाबाद में पंडित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में श्रीमती सरोजनी नायडू की वक्तृता इलाहाबाद तथा युक्त प्रांत में हो रहे परिवर्तनों का स्पष्ट चित्र अंकित करती है -

" One thing that has struck me as it must strike every student of national awakening, is now real is the awakening in your midst, in the every heart of what your critics have called the sleeping, dreaming province of India."

इलाहाबाद के सम्बन्ध में श्रीमती एनी बेसेन्ट अत्यन्त उत्साह भी भी रखती थीं।[11]

---

9. होमपोलिटिक्स डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स-नेशल आरकॉइव्स ऑफ इन्डिया, नयी दिल्ली, मार्च 1917, 32 डिपोजिट।
10. वही, जुलाई 1917, 35 डिपोजिट।

सन् 1917 में होमरूल की बढ़ती हुई लोकप्रियता से सरकार विचलित हो उठी थी। इलाहाबाद ने सरकार का विरोध करने में लेशमात्र भी विलम्ब नहीं किया। पंडित मोतीलाल नेहरू के सभापतित्त्व में 22 जून, सन् 1917 को प्रयाग वासियों की एक महती सभा हुई जिसमें आन्दोलन को दृढ़तापूर्वक अग्रसित करने का निश्चय किया गया। जो कार्य अभी तक श्रीमती एनी बेसेन्ट के प्रयत्न नहीं कर सके थे, वह मद्रास सरकार के इस कार्य ने कर दिया था।[12]

16 जुलाई सन् 1917 की सन्ध्या को होमरूल लीग के कार्यक्रम में तेजबहादुर सप्रू की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा पुनः आयोजित हुई। इस सभा में यह निश्चित हुआ था कि होमरूल के समर्थन तथा नज़रबन्दी के विरोध में प्रतिमास सभाएं की जायें। इस कार्यक्रम के अनुसार यह प्रथम संस्था थी। इस सभा में डाक्टर रणजीत सिंह की नजरबन्दी के विरोध में प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया तथा सैयद रज़ावली ने उसका समर्थन किया। इलाहाबाद से प्रचार कार्य के लिए आयोग भी भेजे जा रहे थे।[13]

होमरूल आन्दोलन के प्रणेताओं के दंडित होने के बाद भी आन्दोलन चलता रहा। इस सम्बन्ध में निर्णय युक्त प्रान्तीय कांग्रेस समिति तथा खिलाफत समिति की 20 तथा 21 मई सन् 1917 की बैठकों ने किया। इसी के साथ नगर महापालिका तथा स्थानीय संस्थाओं में निर्वाचित होने की ओर प्रयत्नशील

---

12. अभ्युदय- समाचार पत्र, 29 जून, सन् 1917।
13. वही, 20 जुलाई सन् 1917।

होने का निश्चय सभा ने किया । पंडित मोतीलाल नेहरू की मुक्ति के साथ ही राजनैतिक अवस्था परिवर्तित हो गई । पुनर्मूल्यांकन भी आवश्यक था, क्योंकि कारागर से मुक्त हुए नेता जनता की मनःस्थिति से अपरिचित थे । फलतः सविनय अवज्ञा आन्दोलन जाँच समिति द्वारा परिस्थिति का स्वरूप नष्ट करने का प्रयत्न किया जाने लगा । पंडित मोतीलाल नेहरू युक्तप्रान्त के प्रमुख नेता थे जिन्हें परिवर्तन आवश्यक अनुभव हो रहा था।

इस प्रकार जनयुद्ध का यह प्रथम चरण इलाहाबाद की जनता को नवीन साहसपूर्ण चेतना देकर समाप्त हुआ । अब देश के सम्मुख रचनात्मक कार्यक्रम शेष रह गया थाजो कि स्पष्टतः राजनैतिक नहीं था । इस अवस्थामें पंडित मोतीलाल नेहरू के साथ देशबन्धु चित्तरंजनदास का व्यवस्थापिका सभाओं में प्रवेश का प्रस्ताव देश की राजनैतिक भावनाओं को निश्चित दिशा प्रदान करने में सफल हुआ ।

कांग्रेस के इस सशस्त्र जन आन्दोलन को विस्तृत करने में कार्य प्रधान जनता की प्रथम बार सहायक सिद्ध हुई । कृषि प्रधान जनता के कष्टों के प्रति कांग्रेस के नेता सदैव से ही सहानुभूतिपूर्ण थे; परन्तु मूलतः किसानों की समस्या को कांग्रेस आन्दोलन में प्राधान्य देने की कल्पना नहीं की गयी थी । इस परम्परा को प्रारम्भ करने का श्रेय श्री इन्द्रनारायण द्विवेदी को है, जिस समय भारत- सचिव भारत आये, लगभग समस्त वर्गों के प्रतिनिधि उनके समक्ष उपस्थित

हुए । उस समय इन्द्र नारायण द्विवेदी उनके निवास बुद्धिपुरी में थे । उन्होनें किसानों की समस्या का इन सभी राजनैतिक चर्चाओं में लेशमात्र भी स्थान न देखकर पंडित मदन मोहन मालवीय को पत्र द्वारा इस समस्या पर ध्यान देने का आग्रह किया । पत्र के उत्तर में पंडित मदनमोहन मालवीय ने उन्हें इलाहाबाद आने के लिए आमंत्रित किया । उनके आगमन पर किसानों की समस्याओं का एक आवेदन पत्र में समावेश करने के उद्देश्य से तीन व्यक्तियों- ठाकुर कामता सिंह, शिवकुमार सिंह, स्वंय इन्द्र नारायण द्विवेदी की एक समिति बनाई गई । आवेदन का अंग्रेजी अनुवाद पुरूषोत्तम दास टंडन ने किया । इसके पश्चात् आवेदन पत्र को छपवाकर अधिकाधिक किसानों से उस पर हस्ताक्षर करवाने के बाद उसको भारत सचिव को प्रेषित करने की योजना बनी । इस कार्य की सिद्धि के लिए युक्त प्रान्तीय किसान बन्धुओं को एक विराट् सम्मेलन की सूचना दी गई । फरवरी में, सम्पन्न हुए इस सम्मेलन में पंडित मदनमोहन मालवीय, गौरी शंकर मिश्र, कृष्णाकान्त मालवीय तथा सभापति रायबरेली के केदारनाथ वकील उपस्थित थे । सम्मेलन ने आवेदन पत्र को स्वीकार कर लिया, जिस पर लगभग ग्यारह सहस्त्र किसानों के हस्ताक्षर थे । दूसरे दिन का कार्यक्रम गौरीशंकर मिश्र के सभापतित्व में आयोजित हुआ एक समिति गठित हुई जिसमें पुरूषोत्तम दास टंडन सभापति, इन्द्रनारायण द्विवेदी मुख्य सचिव तथा गौरीशंकर मिश्र उपसभापति नियुक्त हुए । इसी समय "किसान" पत्र को प्रकाशित करने की भी योजना बनायी गयी ।[14]

---

14. अभ्युदय -समाचार पत्र, 27 अगस्त, 1917

इलाहाबाद में सार्वजनिक सभाओं के माध्यम से जनता में प्रचार कार्य किया जा रहा था । जून सन् 1917 के पूर्वार्द्ध में इलाहाबाद के आयुक्त ने कुछ गण्यमान्य व्यक्तियों से भेंट की । मुलाकात से उनका सामान्य निष्कर्ष यही था कि अभी युक्त प्रान्त की भावना अन्य प्रान्तों के समान तीव्र नहीं थी । परन्तु नम्रदल के पुराने नेता भी सरकार द्वारा अपनी नीति के स्पष्टीकरण के इच्छुक नहीं थे । फरवरी, सन् 1917 को हुई पंडित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक सभा में इलाहाबाद के निवासियों की आकांक्षाऐं एवं आशाऐं खुले एवं प्रत्यक्ष रूप से सामने आयी । सभा का प्रथम प्रस्ताव ही इसबात का सूचक था कि अब वह युद्ध के पश्चात् ही शासन में उल्लेखनीय परिवर्तनों के आकाँक्षी थे ।[15]

पंडित मोतीलाल नेहरू अपने अन्य साथियों के साथ तुरन्त ही होमरूल लीग में सम्मिलित हो गये । इस परिवर्तन ने तात्कालीक लेफ्टीनेन्ट गर्वनर को चिन्तित कर दिया । लेफ्टीनेन्ट गर्वनर ने नेताओं के साथ भेंट करके तर्क द्वारा उन्हे आन्दोलनात्मक मार्ग से विमुख करने का निश्चय एवं आयोजन किया । उन्होनें अपना सन्देश इलाहाबाद के आयुक्त के माध्यम से भेजा । उनकी रिपोर्ट मे यह निश्चित कर दिया था कि यह विरोध केवल नज़रबन्दी का नहीं था, वरन् कुछ अनुदार सरकारी अधिकारियों के वक्तृव्य भी इसका कारण थे । इलाहाबाद के लगभग सभी राजनीतिज्ञ सरकार से नीति के स्पष्टीकरण की अपेक्षा रखते थे । पंडित मोतीलाल नेहरू तथा तेज बहादुर सप्रू जो अभी तक युद्ध के लिए

---

15. लीडर - समाचार पत्र, 11फरवरी, सन् 1917 ।

सैनिकों की भर्ती के लिए प्रयत्न कर रहे थे, अब इस कार्य से पृथक हो गये।[16] होमरूल लीग के कार्यकर्त्ताओं के उद्देश्यों को एक घोषणापत्र में प्रकट किया गया था। इस घोषणापत्र में यह कहा गया था कि -

" The time has come when England should definitely accept and recognize our claims... and adopt a policy which may secure to India responsible Government at an early date .".

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जिस प्रकार का आन्दोलन किया जा रहा था, वह पूर्णरूप से वैधानिक एवं उचित था। यह कहने का साहस भी घोषणापत्र के रचनाकारो में था कि इस विषय पर हिन्दू - मुसलमान दोनों में मतैक्य है।[17]

16 जुलाई, सन् 1917 की सन्ध्या को होमरूल लीग के कार्यालय में तेज बहादुर सप्रू की अध्यक्षता में पुनः एक सार्वजनिक सभा हुई। इस सार्वजनिक सभा में यह निश्चित हुआ था कि होमरूल के समर्थन तथा नज़रबन्दी के विरोध में प्रतिमास सभाऐं की जायें। इस कार्यक्रम के अनुसार यह प्रथम सभा थी। इस सार्वजनिक सभा में डॉक्टर रणजीतसिंह ने नज़रबन्दी के विरोध में प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया सैयद रज़ावली ने उस प्रस्ताव का समर्थन किया।[18]

---

16. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाईव्स आफ इंडिया दिल्ली, जुलाई 1917, 35 डिपोजिट।
17. लीडर- समाचार पत्र, 10 अगस्त, 1917।
18. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, जुलाई 1917, 426-430 बी।

20 अगस्त सन् 1917 को भारतमंत्री मिस्टर मान्टेग्यू ने भारत में ब्रिटिश सरकार की उत्तरदायी शासन स्थापित करने की नीति को संसद में घोषित किया । घोषणा के पश्चात् मिस्टर माण्टेग्यू भारत आये और भारतीय नेताओं के साथ भविष्य में भारतीय संवैधानिक सुधारों के सम्बन्ध में विचार-विनिमय किया ।[19]

इलाहाबाद से भी प्रचार कार्य के लिए आयोग भी भेजे जा रहे थे । इलाहाबाद होमरूल लीग युक्तप्रान्त की केन्द्र थी । अधिकारियों ने भी स्वयं उसकी प्रशंसा Energetic Control Organization कहकर की थी । अभी तक के आन्दोलन को तीव्रतर बनाने की आकांक्षा कुछ क्षेत्रों में अब प्रकट होने लगी थी, परन्तु नम्रदल के अधिकांश नेता सत्याग्रह से भयभीत थे । यह आन्दोलन वैसे तो जारी ही था । आन्दोलन के प्राण पंडित मदनमोहन मालवीय थे जिनके प्रयत्नों के ही कारण उन स्थानों में भी सार्वजनिक सभाएँ आयोजित होने लगी थीं, जहाँ पर अभी तक कोई भी राजनैतिक गतिविधि नहीं हुई थी ।

8 अगस्त, सन् 1917 को पंडित मदनमोहन मालवीय ने विद्यार्थी समाज के सम्मुख दिये हुए अपने भाषण में यह कहा कि भारतीयों की सबसे बड़ी भूल अभी तक नहीं हुई है कि उन्होंने उचित मात्रा में आन्दोलन किया ही नहीं था । पंडित मदन मोहन मालवीय ने यह सुझाव दिया कि घर-घर और गली-गली में इस आन्दोलन का प्रचार किया जाना चाहिए, तथा प्रत्येक व्यक्ति इस कार्य

---

19. जी०डी० तिवारी, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, पृष्ठ- 95

के लिए अपना समय निश्चित व्यय करें । वास्तव में यह केवल एक प्रस्ताव मात्र ही नहीं था । इलाहाबाद जिले के गाँवों में भी इस प्रकार का प्रचार कार्य प्रारम्भ हो चुका था ।[20]

16 अगस्त सन् 1917 की मासिक सार्वजनिक सभा पंडित मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में ही सम्पन्न हुई । ग्रामों में कार्य करने का समर्थन इलाहाबाद को महात्मा गाँधी के द्वारा भी प्राप्त हुआ था । पंडित मदनमोहन मालवीय तथा महात्मा गांधी के समर्थन से इलाहाबाद का एक वर्ग अत्यन्त उत्साहित था । कायस्थ पाठशाला इलाहाबाद के तत्कालिक प्रधानाचार्य श्री संजीव राव इसी प्रकार के व्यक्तियों में से एक थे । उन्होनें कई विद्यार्थियों को सैनिक सेवा की आकांक्षा से विमुख कर दिया था ।[21] एक तरफ जहाँ उत्साही व्यक्ति आन्दोलन को विस्तृत करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील थे, तो दूसरी ओर नम्र दलीय नेता इस सीमा तक जाना भी नहीं चाहते थे । होमरूल लीग के सत्याग्रही स्वरूप को लेकर प्रमुख व्यक्तियों मे कुछ मतभेद भी उत्पन्न हो गया । 26 अगस्त, सन् 1917 को युक्त प्रान्तीय कांग्रेस समिति की एक बैठक में इस कार्यक्रम का विरोध भी किया गया । सितम्बर सन् 1917 में श्रीमती एनी बेसेन्ट तथा उनके साथियों की मुक्ति के साथ ही आन्दोलन का एक प्रधान कारण भी समाप्त हो गया था । अत: यह भी स्वाभाविक ही था कि जिन्होने सहानुभूति के वशीभूत होकर

---

20. होम पोलिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स- नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, सितम्बर 1917, 5 डिपोजिट ।

21. वही, नवम्बर 1917, 6 डिपोजिट ।

इस आन्दोलन में भाग लिया था अब और बढ़ने से वह इन्कार कर देगें । एक कारण परिवर्तन का यह भी था कि भारत सचिव माण्टेग्यू का आगामी कुछ महीनों में भारतयात्रा का कार्यक्रम था । इलाहाबाद के कुछ नेताओं का यह विचार था कि सरकार की नीति परिवर्तन की चेष्टा आन्दोलन के कारण व्यर्थ हो जायेगी, अत: श्री सी० वाई० चिन्तामणि, पंडित मदनमोहन मालवीय तेजबहादुर सप्रू आदि ने श्रीमती एनी बेसेन्ट को अध्यक्ष चुनने का विरोध भी किया था ।[22]

6 अक्टूबर 1917 को सत्याग्रह के विवादास्पद विषय के सम्बन्ध में भी नीति- निर्धारण करने के उद्देश्य से कांग्रेस की महासमिति तथा लीग की एक सम्मिलित बैठक आयोजित की गई । 5 अक्टूबर 1917 को इलाहाबाद में श्रीमती एनी बेसेन्ट आयी । बाल गंगाधर तिलक तथा श्रीमती सरोजनी नायडू इत्यादि भी इस अवसर पर उपस्थित थे । 5 अक्टूबर 1917 को मुस्लिम लीग की कौंसिल की भी एक बैठक हुई थी, जिसमें कि लगभग 10 स्थानीय मुसलमान शामिल हुए थे । इस बैठक में सत्याग्रह का समर्थन नहीं किया गया था ।[23] सम्मिलित बैठक में ऊपरी ऐक्य के आवरण के भीतर विरोध की भावना सदैव से ही परिलक्षित होती रही । एक ओर तो मुहम्मद अली जिन्ना, मजहर उल हक, सैयद रज़ावली तथा दूसरी ओर पंडित मदनमोहन मालवीय, श्री सी. वाई. चिन्तामणि तथा श्री तेजबहादुर सप्रू में तीव्र मतभेद प्रकट हुआ । इस विवाद का

---

22. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स-नेशनल आरकाईव्स आफ इण्डिया, नयी दिल्ली, सितम्बर 1917, 239-243 बी ।

23. वही, नवम्बर 1917, 29 डिपोजिट ।

विषय था अली भाइयों की मुक्ति तथा युक्तप्रान्त, बिहार आदि में साम्प्रदायिक झगड़े । श्रीमती एनी बेसेन्ट के ही प्रयत्नों से कृत्रिम एकता बनी रही, अन्यथा कांग्रेस लीग योजना का अन्त इलाहाबाद में ही हो गया होता ।[24]

इन्हीं गतिविधियों के फलस्वरूप होमरूल आन्दोलन का क्षेत्र विस्तृत नहीं हो सका । कुछ राष्ट्रीय कार्यक्रम निश्चित कर दिये गये थे । इनमें अली भाइयों की स्वतंत्रता के लिए हिन्दू-मुसलमानों की सार्वजनिक सभाएँ, माण्टेग्यू के समक्ष कांग्रेस लीग सुधार योजना के समर्थन में प्रस्तुत किये जाने वाले आवेदन पत्र के लिए अधिकाधिक मत एकत्र करना, सरकार के दमनकारी कार्यों का विरोध करना, अभी तक होमरूल आन्दोलन के जो प्रान्त अछूते रह गये थे, उनमें आन्दोलन का प्रसार करना, कांग्रेस लीग सुधार योजना को माण्टेग्यू के सम्मुख अति आवश्यक सिद्ध करना आदि प्रमुख थे । इन कार्यक्रमों को कार्यरूप में परिणित करने के लिए आवश्यक धन भी आन्दोलनकारियों के पास था ।[25] इन निर्धारित किये गये समस्त कार्यों को अविलम्ब प्रारम्भ कर दिया गया । प्रचार कार्य के लिए जनपद इलाहाबाद में होमरूल क्या है ? शीर्षक सम्बन्धी पुस्तिकाओं को जनता के मध्य वितरित किया गया । आवेदन पत्र के लिए हस्ताक्षर भी किये जाने लगे ।[26]

इलाहाबाद में क्रान्ति का यह प्रथम प्रयास मन्थर गति से चलने लगा । पत्रकार श्री दामोदर स्वरूप को कुल मिलाकर 7 वर्षों के कारावास का दण्ड प्राप्त

24. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाइव्स ऑफ इन्डिया, नयी दिल्ली । नवम्बर 1917, 471-475 बी ।
25. वही, नवम्बर 1917, 43-45 बी ।
26. वही, जनवरी 1918, 2 डिपोजिट ।

हुआ, परन्तु विद्यार्थियों का कार्य अविरल गति से चलता रहा । 16 अप्रैल, 1917 की सरकार की रिपोर्ट यह सूचित करती है कि इलाहाबाद के स्कूलों तथा उच्च शिक्षण संस्थाओं से क्रान्तिकारी पत्र " लिबर्टी" की प्रतियाँ प्राप्त हुई थीं ।[27]

रासबिहारी बोस ने बांकीपुर मे अपनी क्रान्तिकारी समिति की एक शाखा स्थापित कर ली थी । उसका सक सदस्य रघुबीर सिंह प्रचार के उद्देश्य से इलाहाबाद आ गया था । रघुबीर सिंह ने 13वीं पैदल रेजीमेंट में नौकरी प्राप्त कर ली । इसी के साथ दो अन्य बंगाली व्यक्ति भी गिरफ्तार हुए थे । एक तीसरा व्यक्ति भी बन्दी बनाया गया था जो कि बाद में प्रसिद्ध क्रांतिकारी सिद्ध हुआ ।[28]

सन् 1918 के आरम्भ होते ही हम इलाहाबाद के कांग्रेसी नेताओं को निर्वाचनीय विच्छेद की ओर अग्रसित होता हुआ देखते हैं । एक विवादास्पद विषय था - ग्रामों में प्रचार कार्य करना । दक्षिण पंथ के नेता ग्रामों में प्रचार कार्य करने के विरूद्ध थे ।[29]

अप्रैल, सन् 1918 में यह विरोध इस सीमा तकपहुँच गया कि तेजबहादुर सप्रू और सी. वाई. चिन्तामणि आदि ने होमरूल लीग से त्यागपत्र दे दिया ।

---

27. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, मई 1916, 7 डिपाजिट ।
28. वही, सितम्बर 1916, 17 डिपोजिट ।
29. वही, मई 1918, 21 डिपोजिट ।

इन व्यक्तियों के त्यागपत्र का प्रमुख कारण यह था कि होमरूल लीग के अध्यक्ष पंडित मोतीलाल नेहरू उग्रवादी विद्यार्थियों के समर्थक थे । दोनों दलों के मध्य समझौता कराने का हर प्रयास असफल रहा ।[30]

13 दिसम्बर, 1918 को किसान सभा के मंत्री तथा अन्य सदस्य पंडित मोतीलाल नेहरू से कांग्रेस अधिवेशन में किसानों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में विचार विमर्श करने आये । उन्होंने पंडित मोतीलाल नेहरू को बताया कि केन्द्रीय किसान सभा की लगभग 100 तहसील समितियाँ अब तक स्थापित हो चुकी थीं । कुछ दिनों पूर्व कांग्रेस के अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए लगभग 200 प्रार्थना पत्र उनके पास आ चुके थे । उनका कथन था कि उनको जागृत करने का कार्य कांग्रेसी नेताओं द्वारा किया गया है तब अपनी भावनाओं के प्रकाशन का अवसर भी उन्हें प्राप्त होना चाहिए । पंडित मोतीलाल नेहरू की उन प्रतिनिधियों के प्रति प्रशंसात्मक अभिव्यक्ति इस प्रकार से :-

"They are in right earnest and the work they have done and are doing is simply admirable and affords striking contrast to the methods of the so-called intelligentsia."

इस प्रकार विचार विमर्श द्वारा यह तय हुआ कि निम्नतम संख्या

---

30. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकॉइव्स आफ इंडिया, नयी दिल्ली, मई 1918, 65 डिपोजिट ।

में किसानों के लगभग 500 प्रतिनिधि अधिवेशन में सम्मिलित होगें। किसी भी प्रकार का पक्षपातपूर्ण व्यवहार उन्हें असह्य होगा स्वागत समिति की सुरक्षा के विचार से वह 18 तथा 19 तारीख तक अपने कुछ स्वयं सेवकों को प्रबन्ध करने के लिए भेज देगें। यदि कांग्रेस उन्हें प्रतिनिधित्व की फीस देने की छूट नहीं देती तो वह फीस भी देगें। विषय समिति में भी उनके तीन प्रतिनिधियों को सम्मिलित करना होगा।[31]

6 जनवरी 1916 को पंडित जवाहर लाल नहरू को लिखे गये पत्र में पंडित मोतीलाल नेहरू ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लिखा -

"They called each other brother 'Cousins'. A comittee of eight Hindus and eight Mohammadans with Gokhale as the 17th member was nominated by Aga Khan. It is certain that the committee will never meet or come to no cdnditions what soever."[32]

पंडित मोतीलाल नेहरू प्रतिनिधि के रूप में थे, वह इस प्रकार के आन्दोलन को साम्प्रदयिक मैत्री में विघ्न स्वरूप मानते थे, उनका मत थाकि आन्दोलन के समर्थन में जो लेख प्रकाशित हुए थे, वह एकपक्षीय तथा पूर्वाग्रहों से अनुप्राणित थे। आन्दोलन में पंडित मदनमोहन मालवीय के समान कट्टर हिन्दुओं अनुदार आर्यसमाजियों तथा निम्नस्तरीय अवसरवादियों के भाग लिया था।

---

31. नेहरू पेपर्स - मोतीलाल नेहरू से जवाहरलाल नेहरू को पत्र, दिनांक 13-12-1918।

वाइसराय की सहमति से वह प्रसन्न नहीं थे ।[33]

इलाहाबाद के नम्रदल के नेता अपने निर्धारित मार्ग पर अपना अंग-प्रत्यंग बचाये चल रहे थे । उन्होंने अपने को कांग्रेस से पूर्णतः पृथक कर लिया था । उन्हें आन्दोलन की विरोधी संस्था की आवश्यकता भी अनुभव हो रही थी । अतः 23 मार्च, 1919 को तेजबाहादुर सपू की अध्यक्षता में एक सभा हुई । इस सभा में 1919 की सुधार योजना को स्वीकार किया गया, उन्होंने सत्याग्रह की कटु आलोचना की । अन्तः में एक नम्रदलीय संस्था की स्थापना हुई, जिसका नाम" युक्त प्रान्तीय एसोसिएशन " रखा गया ।[34]

26 जनवरी, सन् 1918 के आवेदन पत्र में कांग्रेस-लीग योजना का समर्थन करने केही साथ किसानों से सम्बन्धित कई माँगें भी सम्मिलित की गयी थीं, जिनमें मुख्य माँगे निम्न थीं -

(1) लगान देने वाले किसान की मालगुजारी देने वाले जमींदारों तथा आयकर देने वाले अन्य लोगों के समान वोट देने आदि के अधिकारी हों ।

(2) स्थानीय जिला बोर्ड, वाइसरॉय तथा गवर्नर जनरल की कौंसिल तथा उन सभी स्थानों में जहाँ जनता की ओर से चुने हुए अथवा सरकार की ओर से नियुक्त किये गये सदस्य हों, उन सभी स्थानों में किसानों के प्रतिनिधि उचित संख्या में रखे जायें ।

---

33. नेहरू पेपर्स- मोतीलाल नेहरू, नेहरू मेमोरियल एन्ड म्यूजियम लाइब्रेरी, तीन मूर्ति नयी दिल्ली, मोतीलाल से जवाहरलाल को पत्र, दिनांक 24-6-1916 ।

34. इन्डिपेन्डेन्ट - समाचार पत्र, 26 मार्च, 1919 ।

।3। सामान्य रूप से प्राय: स्वार्थ भिन्नता के कारण जमींदार तथा सरकारी अधिकारी किसानों के हित की रक्षा नहीं कर सकते, अत: किसानों के प्रतिनिधि उस वर्ग से न चुने जायें ।

।4। प्रत्येक जिले में जहाँ स्थायी बन्दोबस्त न हो, तुरन्त लागू कर देना चाहिए । खेतों को बेदखल होने से बचाने केलिए ऐसा कानून होना चाहिए । जिससे दखीलकारी की रक्षा हो सके । दखीलकारी के लिए अधिकाधिक सात वर्ष की मियाद होनी चाहिए तथा दखीलदारी पर किसानों का पूर्ण स्वामित्व होना चाहिए ।

।5। ग्रामों में शीघ्र ही ग्राम पंचायतों की स्थापना की जाये । उन पंचायतों में जमींदार न हों तथा उनमें किसानों की जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधि हों ।

।6। वर्तमान समय मे लगान, विशेषकर, दखीलदारी काश्त का लगान अत्यन्त अधिक हो रहा है । अतएव दखीलदारी और गैर दखीलदारी में यथासम्भव लगान कम कर देना चाहिए ।[35]

किसान सभा का कार्य बहादुरगंज के एक किराये के मकान में प्रारम्भ हुआ । इस सभा का कार्य करने के लिए कार्यकर्ता भी नियुक्त किये गये ।[36]

---

35. अभ्युदय-समाचार पत्र, 26 जनवरी, 1918 ।

36. वही, 29 जनवरी, 1918,

ब्रिटिश राज्याधीन भारत के इतिहास में 1909 से सन् 1919 तक का युग सबसे छोटा है परन्तु उसका महत्व उसके वर्षों की संख्या के आधार पर नहीं आंका जा सकता । वस्तुतः यह युग अत्यन्त महत्त्व की घटनाओं से परिपूर्ण है ।[37]

फरवरी सन् 1919 में जनता के सम्मुख पंडित मोतीलाल नेहरू का इंन्डिपेन्डेन्ट " समाचार पत्र भी आ गया । इसके साथ ही सुन्दरलाल ने भविष्य का प्रकाशन किया । "अभ्युदय" भी अबाध गति से पाठकों के समक्ष आ रहा था । इलाहाबाद के पाठकोंको इस प्रकार से उग्रवादी साहित्य सामग्री यथेष्ट मात्रा में प्राप्त हो रही थी । इस साहित्य ने इलाहाबाद के राजनीतिक निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

" इन्डिपेन्डेन्ट" प्रथक अंक से ही सरकारी नीति की आलोचना प्रारम्भ की । रौलट कमेटी के निष्कर्षों के आधार पर केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा में रौल्ट बिल प्रस्तुत किया गया था। इस सूचना ने उग्रपंथी विचारकों को ही नहीं वरन् नम्रदलीय नेताओं को भी विद्युत तरंग के समान झकझोर दिया । होमरूल लीग के मैदान में पंडित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में इलाहाबाद के वरिष्ठ नागरिकों की एक सार्वजनिक सभा इस अप्रिय घटना के विरोध में हुई । बिल के धिक्कार मय उल्लेख के उपरान्त अध्यक्ष ने यह आव्हान किया -

---

37. गुरु मुख निहाल सिंह, लैंडमार्क्स इन इंडियन कॉन्स्टीट्यूशनल एन्ड नेशनल डेवलेपमेंट - पृष्ठ - 217

"I call upon you to organize an agitation the like of which was never known in the country to oppose these cruel bills."

रौलट बिल के विरोध में इलाहाबाद के उच्च न्यायालय के वकीलों की संख्या की थी एक सभा हुई, जिसमें रौलट बिल के विभिन्न भागों की कटु आलोचना की गई। इसके साथ सरकार से यह भी प्रार्थना कीगई कि बिल को पारित न किया जाय।[39]

रौलट बिल की आलोचना, सत्याग्रह आन्दोलन का समर्थन तथा आन्दोलन के गोलीकान्ड के विषय में " भविष्य " ने यह लिखा कि -

" In the world history of the attainment of liberty such occasions have often arrived when short-sighted official thourgh excessive injustice have infused a.. spirit in to the inert people and made them ready for their inevitable struggle. Indeed, it is on such occasions that the vitality of a nationality is tested and the droping but patriotic heart of India is highly elated at the present time to see that she has come out successful in the trial.[40]

---

38. इन्डिपेन्डेन्ट- समाचार पत्र, 5 फरवरी, 1919,
39. वही, 14 फरवरी 1919,
40. होम पोलिटिक्स डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स-नेशनल आरकाईव्स ऑफ इण्डिया, नयी दिल्ली। जुलाई 1919, 80-83 बी।

जनवरी, सन् 1919 में श्रीमती एनी बेसेन्ट तथा बालगंगाधर तिलक के समर्थकों में विवाद के साथ-साथ इलाहाबाद की होमरूल लीग का बाल गंगाधर तिलक की ओर स्पष्ट झुकाव परिलक्षित हुआ । परन्तु नम्रदलीय नेताओं के ही समान आन्दोलन के औचित्य तथा सफलता के प्रश्न पर इलाहाबाद के उग्रदलीय राजनीतिज्ञों में भी मतभेद था । यद्यपि विद्यार्थी समाज महात्मा गाँधी के उद्गारों से प्रभावित था, अनुभवी नेता अभी तक निशंकित नहीं हो पाये थे । पंडित मोतीलाल नेहरू स्वयं विरोध की इस सीमा के समर्थक नहीं थे । परन्तु यह सब होते हुए भी महात्मा गाँधी का कार्यक्रम जारी रहा ।[41] फरवरी, सन् 1919 में जनभावना को आन्दोलनात्मक स्वरूप प्रदान करने के उद्देश्य से सभा के द्वितीय प्रस्ताव द्वारा एक समिति का गठन हुआ, जिसके सदस्यों में पंडित मदनमोहन मालवीय, पंडित जवाहर लाल नेहरू, पंडित मोतीलाल नेहरू, तेज बहादुर सप्रू सी. वाई. चिन्तामणि, सैयद हुसैन रज़ावली आदि प्रमुख थे । सी. वाई. चिन्तामणि द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रथम प्रस्ताव की घोषणा यह थी -

" The people of the country... can never accept or assert to lagislation of this character which involves a departure from sound principles relating to the evidence and

---

41. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली । फरवरी 1919 42 डिपोजिट ।

procedure in the administration of criminal justice which are essential for the ascertainment and proof of guilt and for the protection and safe guarding of the innocents...."[42]

2 मार्च सन् 1919 को प्रान्तीय कांग्रेस समिति की एक बैठक हुई । इसी समय महात्मा गाँधी ने रौलट बिल के विरूद्ध सत्याग्रह आयोजित करने के उद्देश्य से एक प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर एकत्र करने का कार्य प्रारम्भ कर दिया था । प्रान्तीय कांग्रेस समिति की ओर से आयोजित सभा के अध्यक्ष पंडित मोतीलाल नेहरू ने प्रतिज्ञा के प्रति अपनी सहमति प्रकट की थी । उसी अवसर पर अनेक व्यक्ति भी प्रतिज्ञाबद्ध हुए ।[43]

11 मार्च, सन् 1919 को महात्मा गाँधी इलाहाबाद आये । 11 मार्च सन् 1919 को ही रौलट बिल का विरोध सत्याग्रह के रूप में करने में योजना के विचारार्थ एक सार्वजनिक सभा हुई । सैयद हुसैन इस सभा के अध्यक्ष थे । महात्मा गाँधी ने इलाहाबाद के निवासियों के समक्ष रौलट बिल का आपत्तिजनक स्वरूप उपस्थित करते हुए सत्याग्रह की आवश्यकता को सिद्ध किया ।[44]

---

42. लीडर- समाचार पत्र, 5 फरवरी सन् 1919,
43. इन्डिपेन्डेन्ट- समाचार पत्र, 2 मार्च सन् 1919 ।
44. लीडर - समाचार पत्र, 13 मार्च, सन् 1919,

सन्ध्या के समय पंडित मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में एक विरोध सभा का आयोजन हुआ जिसमें रौलट बिल की आलोचना, सत्याग्रह आन्दोलन का समर्थन तथा आन्दोलन के सम्बन्ध में दिल्ली में हुई 30 मार्च सन् 1919 की घटना, सभा की वक्ताओं का प्रमुख विषय था ।[45]

रौलट बिल की आलोचना, सत्याग्रह आन्दोलन का समर्थन तथा आन्दोलन के सम्बन्ध में दिल्ली में हुई, 30 मार्च सन् 1919 की सभा के सम्बन्ध में "भविष्य" ने सशक्त शब्दों में टिप्पणी की ।

कुछ लेखों के आधार पर "भविष्य" की जमानत जब्त कर ली गई । "इन्डिपेन्डेन्ट" से जमानत की माँग के अतिरिक्त उसके पंजाब के प्रवेश पर रोक लगा दी गई । पंजाब उन दिनों समस्त देश से एक प्रकार से विलग था । पंजाब में दमन के उद्देश्य से सैनिक शासन लागू कर दिया गया था जिसके माध्यम से जनता को अवर्णनीय दण्ड दिये जाने का मार्ग प्रशस्त हो गया था । "इन्डिपेन्डेन्ट" के एक मई के एक अंक में "ओडायरिज्म अनमास्कड" शीर्षक लाला गोवर्धन दास रचित लेख प्रकाशित हुआ । इस लेख की समस्त मूलप्रतियाँ पुलिस अधीक्षक द्वारा जब्त कर ली गई ।

महात्मा गांधी की योजना के अनुसार 7 अप्रैल से सत्याग्रह आरम्भ हो गया । इलाहाबाद के निवासियों ने पूर्ण उत्साह के साथ इस नवीन प्रयोग में भाग

---

45. लीडर - समाचार पत्र, 9 अप्रैल, 1919 ।

46. इन्डिपेन्डेन्ट - समाचार पत्र, 9 मई सन् 1919 ।

लिया । प्रातः काल के स्नान, उपवास तथा प्रार्थना से परिपूर्ण इस शोकदिवस में हिन्दू-मुसलमानों ने सम्मिलित रूप से भाग लिया । पूर्ण हड़ताल के कारण इलाहाबाद नगर में हलचल रहित वातावरण था । लगभग समस्त दुकानें बन्द रहीं । विद्यार्थी समाज का उत्साह तो सीमाहीन था । हिन्दू छात्रावास तथा कानून के विद्यार्थियों के छात्रावास में पूर्ण उपवास किया गया । रेलवे प्लेट फॉर्म पर कुली तक भी विद्यमान नहीं थे ।[47]

सन् 1919 के आरम्भ में हुए राष्ट्रीय सप्ताह को इस वर्ष भी उत्साह से कार्यान्वित किया गया ।[48] पंजाब के सैनिक शासन के सम्बन्ध में निष्पक्ष जाँच की माँग ने सरकार को हन्टर कमेटी की नियुक्ति करने को बाध्य किया। परन्तु हण्टर कमेटी की निष्पक्षता में जनता को प्रारम्भ से ही सन्देह था । इतना ही नहीं अधिकारियों को हर सम्भव भावी आपत्ति से सुरक्षित रखने के लिए केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा में " इन्डेम्मिटी बिल " भी प्रस्तुत कर दिया गया था । सरकार की इन पक्षपातपूर्ण गतिविधियों के विरोध में 17 सितम्बर सन् 1914 को इलाहाबाद के नागरिकों की एक सार्वजनिक सभा हुई । इस सभा में हण्टर कमेटी का विरोध करके वाइसरॉय से निष्पक्ष जाँच कमेटी की नियुक्ति की माँग की गई तथा इन्डेम्मिटी बिल" की भी कड़ी आलोचना की गई । इसके साथ एक प्रस्ताव के द्वारा इलाहाबाद वासियों ने यह स्पष्ट कर दिया कि अब वाइसरॉय उनका विश्वास पात्र नहीं रह गया है ।[49]

---

47. इन्डिपेन्डेन्ट- समाचार पत्र 7 अप्रैल, 1919 ।
48. लीडर, अप्रैल 1919 ।
49. लीडर, समाचार पत्र, 19 सितम्बर सन् 1919 ।

इलाहाबाद में पंजाब से सूचना आने के साथ ही साथ जनमानस में उत्तेजना प्रसारित होती जा रही थी । सत्याग्रह के एक प्रमुख समर्थक सुन्दरलाल ने " खूनी कफन" शीर्षक पुस्तिकायें प्रकाशित की जिसका वितरण करने के अपराध में परमानन्द नाम के व्यक्ति को सुन्दरलाल के ही साथ दंडित किया गया ।[50] पंजाब सरकार ने सैनिक कानून के अन्तर्गत बन्दी व्यक्तियों को प्रान्त के बाहर से वकील कराने का अधिकार देने से इन्कार कर दिया था । फलत: वकील संस्था के अध्यक्ष पंडित मोतीलाल नेहरू द्वारा कुछ अभियुक्तों की पैरवी पर भी प्रतिबन्ध लग गया था । सरकार किसी भी प्रकार से पंजाब की दुर्व्यवस्था से देश को अनभिज्ञ बनाये रखना ही श्रेयष्कर समझती थी । परन्तुवकीलों की संस्था वकीलों के अधिकारों में यह निरंकुश हस्तक्षेप सहन नहीं कर सकती थी अत: 26 मई को तेज बहादुर सप्रू की अध्यक्षता में इस संस्था की एक सभा में उपस्थित सभी व्यक्ति इस विषय से एकमत थे कि इस प्रकार की आज्ञा सरकार के द्वारा अनाधिकार चेष्टा है।[51]

4 अक्टूबर 1919 को पंडित मोतीलाल नेहरू ने प्रधानमंत्री तथा भारत सचिव को प्रेषित किये गये तार में लिखा कि -

---

50. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली । अगस्त 1919, 51 डिपोजिट ।

51. इन्डिपेन्टेन्ट- समाचार पत्र, 28 मई सन् 1919

" The Hunter committee as constituted is entirely one-sided and wholly ignorant of the people's case, police agents and Government proxies masquerading as independent witness will swamp the committee as constituted with false and garbles accounts without fear of detection."[52]

इलाहाबाद की मनस्थिति सन् 1919 के अन्तिम महीनों में प्रारम्भ होने वाले युद्ध विजय के उत्सवों के अनुपयुक्त थी । "इन्डिपेन्डेन्ट" ने इस सम्बन्ध में लिखा -

" It is the simple truth that the heart of India is not in any 'celebration' at the present hour. What -so-ever the official men may think in their notorious and incredible isolation from all the real currents of Indian national life whatever their parasites, steeped in shameless apportunism may say the fact remains that the "Nation in mourning."[53]

7 मई, 1919 को मौलाना फकीरूद्दीन जाफरी की अध्यक्षता में एक सभा हुई, जिसमें विजयोत्सवों में सम्मिलित होने में इलाहाबाद के एक वर्ग ने अपनी असमर्थता प्रकट की । मुसलमान जनता खिलाफत की सुरक्षा के लिए चिंन्चित थी।

---

52. इन्डिपेन्डेन्ट - समाचार पत्र, 9 मई, सन् 1919 ।
53. वही,

तुर्की के भाग्य का निश्चय अभी तक नहीं हुआ था । परन्तु सम्भावनाओं से मुस्लिम जनता परिचित थी । इस अवस्था में उनके द्वारा विजय का स्वागत सर्वथा अनुचित एंव असंगत भी था । दूसरी तरफ पंजाब की घटनाओं ने हिन्दुओं को शोकाकुल बना दिया था । इस परिस्थिति मेंपुरूषोत्तम टंडन द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव की अन्तिम पंक्तियों का निर्णय इस प्रकार था :-

" The public meeting of the citizens of Allahabad resolves to abstain from participating in the proposed peace celebration annoUnced to take place next month."

इलाहाबाद की नगर पालिका की एक बैठक उत्सवों में नगर महा-पालिका की ओर से व्यय की गई राशि को निश्चित करने के लिए हुई । 12 व्यक्ति आरम्भ में इस गोष्ठी में सम्मिलित थे । प्रस्ताव पारित होने से लेकर मत लेने के समय में हैदर मेंहदी, कृपण कान्त मालवीय, मौलाना कमालुद्दीन जाफरी तथा कुछ दर्शक बाहर चले गये । सदस्यों की संख्या कम होने के कारण मत लेना भी असम्भव हो गया ।[54]

सैयद शाह मुहम्मद फकीर तथा श्यामलाल नेहरू ने नगर महापालिका की इच्छा के विरूद्ध अपील इस आधार पर की थी कि नगर महापालिका के व्यय

---

54. इन्डिपेन्डेन्ट - समाचार पत्र, 3 नवम्बर, 1919

के विषयों में शांति उत्सवों के लिए व्यय शामिल नहीं था । अत: उन उत्सवों में व्यय करने का अधिकार नगर महापालिका को नहीं था । उत्सवों के विरूद्ध जनभावना तैयार करने के उद्देश्य से मौलाना कमालुद्दीन ज़ाफरी तथा कृष्णाकान्त मालवीय के हस्ताक्षरों में एक सूचना भी प्रकाशित की । नगर महापालिका की जब इसके परिणामस्वरूप पुन: एक बैठक हुई तो वोट लेने के समय एक सरकारी व्यक्ति की अनुपस्थिति के कारण प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया ।[55]

इन सभी परिस्थितियों में सन् 1919 का "इण्डियन कौंसिल एक्ट" की विशेष परिवर्तन नहीं ला सका । 16 दिसम्बर सन् 1919 के सरकारी दमनचक्र को कुचलने के लिए शासन द्वारा प्रेस अधिनियम और द्रोहात्मक अधिनियम (Sedition Act) का सहारा लिया गया । बंगाल और पंजाब के सम्बन्ध में इस दमनचक्र का खुलकर प्रयोग किया जा रहा था, और सरकार के इन दमन कार्यों ने क्रांतिकारियों के दृढ़ संगठन को जन्म दिया था । पंजाब के सम्बन्ध में श्रीमती एनी बेसेन्ट लिखती हैं -

" सर माइकेल ओडायर के कठोर और दमनकारी शासन, उसके अत्याचारी भर्ती के तरीकों, उनके जबर्दस्ती वसूल किये गये युद्ध सहायता धन और तमाम राजनीतिक नेताओं के ऊपर किये गये उनके अत्याचारों ने असन्तोष में जलते हुए अंगारों को सिर्फ ढोंक रखा था, जो ज्वाला में फूट पड़ने के लिए

---

55. इन्डिपेन्डेन्ट - समाचार पत्र, 5,6,7 दिसम्बर सन् 1919 ।

तैयार थे । " 56

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में सन् 1920 का वर्ष एक नये चरण का प्रारम्भ करता है । प्रथम महायुद्ध [सन् 1914-1919] की अवधि में राष्ट्रीय आन्दोलन कुछ धीमा पड़ गया था । उसके नेतृत्व में भी अन्तर आ गया था । परन्तु सन् 1919 में जो घटनायें घटित हुईं, उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि अंग्रेज लोगों में न तो ईमानदारी है और न ही सहृदयता । प्रत्युत वह राष्ट्रवादी शक्तियों को अमानवीय ढंग से कुचलने पर तुले हैं । अत: महात्मा गाँधी ने तुरन्त अपना रूख बदल लिया और उनके नेतृत्व में कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार के साथ असहयोग करने के लिए अहिंसात्मक सत्याग्रह तथा प्रत्यक्ष कार्यवाही का कार्यक्रम अपनाया ।[57]

जिन परिस्थिति एंव कारणों से सन् 1920 में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किया गया वह संक्षेप में निम्न हैं -

[1] 1919 के सुधार कानून से कांग्रेस में पुन: विभाजन हो गया था।

[2] 1919 के रौलट एक्ट के अन्तर्गत दमनकृत्य नितान्त अवांछनीय तथा अमानुषिक थे ।

[3] जालियावाला बाग के हत्याकान्ड [13 अप्रैल, सन् 1919] से महात्मा

---

56. राम गोपाल, इण्डियन पोलिटिकल, पृष्ठ - 285 ।

57. डी0 सी0 चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉस्टीट्यूशनल डेवलपमेंट, पृष्ठ- 95 ।

गाँधी बहुत ही क्षुब्ध हो गये थे ।

14। खिलाफत के प्रश्न पर पुनः एक बार मुसलमानों में घोर असन्तोष व्याप्त हुआ और कांग्रेस ने भी मुसलमानों का साथ दिया । सन् 1919 में कांग्रेस तथा मुस्लिम, लीग एक दूसरे के बहुत समीप आ चुके थे ।[58]

सीतारमय्या असहयोग आन्दोलन के सम्बन्ध में लिखते हैं - और चूँकि असहयोग को आत्मत्याग के साधन के रूप में प्रस्तुत किया गया है जिसके बिना कोई भी राष्ट्र सच्ची उन्नति नहीं कर सकता और क्योंकि असहयोग के पहले के दौर में ही हर स्त्री, पुरूष एवं बालक को इस प्रकार के अनुशासन तथा आत्मत्याग का अवसर मिलना चाहिए । यह कांग्रेस सलाहदेती है कि एक बड़े पैमाने पर स्वदेशी वस्त्रों को अपनाया जाये, और हर घर में एक हाथ की बुनाई को पुनर्जीवित करके बड़े पैमाने पर वस्त्रों की उत्पत्ति को तुरन्त बढ़ाया जाये ।[59]

सन् 1919 के प्रारम्भ में हुए राष्ट्रीय सप्ताह को इस वर्ष भी उसी उत्साह से कार्यान्वित किया गया । 6 अप्रैल, 1920 को मुंशी ईश्वर सरन की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा हुई । रौलट बिल के विरूद्ध प्रस्तुत किये गये प्रस्ताव का समर्थन करते हुए विपिन चन्द्र पाल ने आन्दोलन का स्वागत किया ।[60]

---

58. डी0 सी0 चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कान्स्टीट्यूशनल डेवलेपमेन्ट, पृष्ठ - 97 ।

59. पट्टाभिसीता रमय्या, द हिस्ट्री ऑफ दि इण्डियन नेशनल कांग्रेस, पृष्ठ - 207

60. लीडर- समाचार पत्र, 8 अप्रैल 1920 ।

इन्डिपेन्डेन्ट मे सुधार बिल के सम्बन्ध में लिखा -

"हमारे बिल की खिलाफत करने का आधार वह सिद्वान्त है जिस पर यह बनाया गया है। हम इस बात को मानने से इन्कार करते हैं कि भारतवासी अपने मामलों को स्वत: संभालने में सक्षम नहीं हैं।"[61]

सन् 1919 के विवादास्पद प्रश्नों का हल अभी नहीं निकल सका। विभिन्न जातियों के प्रतिनिधियों के दृष्टिकोण तथा समिति की बैठकों पर उसके प्रभाव का वर्णन पंडित मोतीलाल नेहरू के द्वारा विशेष अवसर पर आमंत्रित डाक्टर अंसारी ने इस प्रकार किया है -

" When I reached Allahabad there was a complete deadlock. The Sikhs would have no reservation of seats at all any where, neither for the majority, nor for the minority. The Mahasabha People would allow reservation for the minorities but not for the majorities . The Congress and the Muslim proposal was for a reservation of seats both for the majorities and the minorities."[62]

61। इन्डिपेन्डेन्ट - समाचार पत्र, 8 दिसम्बर सन् 1919 ।

62. मोतीलाल नेहरू, नन्दा, पृष्ठ- 187 ।

राष्ट्रीय सप्ताह का ही एक अंश 9 अप्रैल, 1920 की सार्वजनिक सभा भी थी, जिसका सभापतित्व मौलाना विलायत हुसैन ने किया था। प्रथम सभा में ईश्वर सरन तथा द्वितीय सभा में मुसलमान नेता के सभापतित्व से यह स्पष्ट हो जाता है कि इलाहाबाद की दोनों जातियों के नेता सहयोगी भावना प्रदर्शित कर रहे थे। खिलाफत के प्रश्न पर हिन्दूनेता मुसलमानों के रोष के प्रति सहानुभूतिपूर्ण थे। इसी सभा में खिलाफत के प्रश्न के प्रति अपनी सहानुभूति का कारण स्पष्ट करते हुए विपिन-चन्द्र पाल ने कहा था कि उसका उद्देश्य साम्राज्यवाद के प्रसार को रोकना है।[63] इलाहाबाद के कुछ मुसलमान उग्रवादियों ने एक गुप्त सभा स्थापित की थी। यह सूचित भी हो गया था कि पाँच व्यक्तियों को इसी प्रकार की सभाऐं स्थापित करने के लिए सिंध भेजा गया था।[64] सार्वजनिक रूप से अभी तक मुसलमानों ने असहयोग को स्वीकार नहीं किया था। हिन्दुओं के ही समान मुसलमानों में भी इस मार्ग के औचित्य पर मतभेद था। अत: विभिन्न अस्पष्ट मतों को एक स्पष्ट रूप देने के उद्देश्य से जून, 1920 के प्रारम्भ में इलाहाबाद में एक खिलाफत गोष्ठी का आयोजन किया गया। सर्वप्रथम केन्द्रीय खिलाफत समिति के नेताओं की एक सभा श्री छोटानी की अध्यक्षता में जहूर अहमद के निवास स्थान पर सम्पन्न हुई। इस सभा में महात्मा गाँधी के साथ मुसलमान नेताओं का असहयोग-विषयक वार्तालाप हुआ। जून में हिन्दू मुसलमानों की एक सम्मिलित सभा हुई, जिसमे नम्रदलीय नेता भी उपस्थित थे।[65]

---

63. लीडर-समाचार पत्र, 11 अप्रैल, 1920।
64. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स नेशनल आरकाईव्स ऑफ इण्डिया नयी दिल्ली, अप्रैल 1920, 103 डिपोजिट।
65. लीडर, समाचार पत्र, 3 जून, सन् 1920।

मुसलमानों के प्रति लगभग सभी की सहानुभूति थी । परन्तु असहयोग को अपनाने के सम्बन्ध में उन्होनें शंकायें व्यक्त की थीं, तथापि साधारण रूप से जनमत असहयोग के पक्ष में था । 2 जून, 1920 को पुनः एक सम्मिलित सभा आयोजित की गई, जिसमें निर्णय लेने के उद्देश्य से रात्रि में केन्द्रीय खिलाफत समिति की गोष्ठी हुई । असहयोग पर सर्वसम्मति से जो प्रस्ताव पारित हुआ, उसका मुख्य अंश इस प्रकार था :-

" This metting reaffirms the movement of non-coop-eration in accordance withthe four stages already approved by the central khilafat committee..."

स्वदेशी आन्दोलन पर भी इसी प्रकार से प्रस्ताव पारित हुआ तथा इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए भी एक उप समिति बनायी गयी । एक अन्य प्रस्ताव के द्वारा खिलाफत आन्दोलन के लिए एक स्वयंसेवक दल के संगठन की योजना बनायी गयी । इस दल का उद्देश्य आन्दोलन के लिए धन एकत्र करना था ।[66] खिलाफत के निर्णयों ने कुछ व्यक्तियों को मुसलमानों की तरफ से आश्वास्त्र कर दिया था । यह प्रथम अवसर था जब कि राष्ट्रीय मोर्चे पर हिन्दू तथा मुसलमानों ने मिलकर युद्ध करने का निश्चय किया था । "लीडर" के संम्वाददाता ने सभा को महत्त्वपूर्ण बताते हुए लिखा -

---

66. लीडर - समाचार पत्र, 6 जून सन् 1920 ।

" The year 1920 will pass down in Indian history as a remarkable one and here in Allahabad a decision has been taken unanimously which may God-willing, develop a new spirit of sacrifice and comradeship, indeed a new religion which ceases to distinguish Hindus and Muslims symbolise Prayag's Sangam."[67]

सरकार के द्वारा अपनायी गयी परिवर्तन की ओर प्रवृत्त होने की यह नीति कुछ व्यक्तियों के विचार से आशाचिन्ह थी, परन्तु सत्याग्रही प्रवृत्तियाँ अभी तक प्रबल थीं । इसका प्रमाण चुनावों से प्राप्त हुआ । मुसलमानों का असन्तोष चरमसीमा तक पहुँच गया था । उनकी दृष्टि में तुर्की के दुर्भाग्य का मुख्य कारण अंग्रेजों का दुर्व्यवहार था ।[68]

13 अप्रैल, का जालियाँवाला बाग दिवस पी० एन० चैटर्जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ था, जिसका प्रस्ताव हैदर अली मेंहदी द्वारा प्रस्तुत किया गया था । इसी वातावरण से प्रभावित होकर मई, 1920 की प्रान्तीय राजनैतिक सरकारी रिपोर्ट में यह सूचना दी गई कि -

---

67. लीडर - समाचार पत्र, 7 जून सन् 1920 ।

68. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स- नेशनल आरकाईव्स आफ इंडिया, नयी दिल्ली । जुलाई 1920, 89 डिपोजिट ।

" ... The cause of national autbnomy in India, and that of the khilafat are originally bound up."[69]

बम्बई में पुलिस के आयुक्त ने सम्मिलित खिलाफत गोष्ठी की गति विधियों की सूचना देते हुए महात्मा गाँधी के इस पक्ष का विशेष उल्लेख किया -

" The features of the meeting were Mahatma Gandhiji's out standing assumption of dictatorship and the Muslim leaders acquiescence therein."[70]

इलाहाबाद से प्राप्त हुई सरकार की रिपोर्ट में भी यह स्वीकारोक्ति है कि आन्दोलनात्मक प्रवृत्तियाँ अभी तक सुदृढ़ थीं ।[71]

31 अगस्त सन् 1920 को वाइसरॉय को दी गयी आन्दोलन प्रारम्भ करने का निश्चय करने की अवधि समाप्त हुई । अत: उसी दिन असहयोग आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ । कांग्रेस के विशेष अधिवेशन ने भी असहयोग को अपना पथ निर्धारित कर लिया था । उसी निर्धारण के अनुसार युक्तप्रान्त का संचालन करने के लिए युक्तप्रान्तीय कांग्रेस सीमित की एक बैठक इलाहाबाद

---

69. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाईव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली । जुलाई 1920, 95 डिपोजिट ।
70. वही, जुलाई 1920, 109 बी
71. वही, जून, 1921, 13 डिपोजिट ।

के आनन्द भवन में हुई । इस बैठक में असहयोग के कुछ चुने हुए कार्यक्रमों के आधार पर आन्दोलन को गति देने का निश्चय किया गया । इनमें उपाधि का त्याग, सरकारी अदालतों का बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा का प्रसार, सरकारी उत्सवों से विमुखता, अवैतनिक पदों का त्याग, ब्रिटिश वस्तुओं का बहिष्कार, इत्यादि असहयोग के समस्त प्रमुख कार्यक्रम सम्मिलित थे । इस सभा ने ब्रिटिश युवराज के आगमन पर स्वागत उत्सवों से पूर्णत: विलग रहने का निश्चय किया ।[72] सरकारी शिक्षण संस्थाओं से पृथक होने का कार्य भी प्रारम्भ हो गया था । इलाहाबाद गवर्मेन्ट कालिज, क्रिश्चियन कालिज, तथा जेम्स मिशन स्कूल के कुछ मुसलमान विद्यार्थियों ने उपयुक्त संस्थाओं से पृथक हो जाने की सूचना "इन्डिपेन्डेन्ट" को दी ।[73] कायस्थ पाठशाला के ग्यारवीं कक्षा के विद्यार्थी उदित नारायण तिवारी ने कायस्थ पाठशाला के प्रधानाचार्य को एक पत्र में लिखा -

" Carefully pondering over the present political situation of India, I have decided that a student who has even the slightest regard for his motherland should at once severe his connection from the institution which is under Government Control. I, therefore with due respect request you to remove my name from the register."[74]

---

72. लीडर-समाचार पत्र, 25 अगस्त 1920 ।
73. इन्डिपेन्डेन्ट - समाचार पत्र, 3 नवम्बर, 1920 ।
74. वही, 20 नवम्बर, 1920 ।

विद्यार्थियों की शिक्षण संस्था से पृथक प्रवृत्ति ने अनुभवी आचार्यों तथा प्रबन्धकों को चिन्तित कर दिया । मुस्लिम छात्रावास के प्रधानाचार्य ने दो विद्यार्थियों को छात्रावास त्याग कर चले जाने की आज्ञा दी, क्योंकि वह असहयोग के समर्थन में वकृतायें देते हुए पाये गये थे । इस कार्य ने विद्यार्थियों को क्रुद्ध कर दिया, जिसको उन्होंने सभाओं के माध्यम से व्यक्त किया ।[75] इलाहाबाद के कायस्थ पाठशाला में श्री कालीप्रसाद कुलभास्कर के जन्मोत्सव के अवसर पर ट्रस्ट के एक सदस्य रोशन लाल ने महात्मा गाँधी तथा उनके आन्दोलन का अपमानजनक उल्लेख किया, तब विद्यार्थी क्रोधित हो उठे । प्रधानाचार्य ने विद्यार्थियों को ही अपराधी बताया । इस पर असन्तुष्ट होकर विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी जो प्रधानाचार्य के झुकने पर ही समाप्त हुई ।[76]

सितम्बर, 1920 में कलकत्ता में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ । यद्यपि इस अधिवेशन में महात्मा गाँधी द्वारा प्रस्तुत असहयोग आन्दोलन के प्रस्ताव को कांग्रेस के विशाल बहुमत का समर्थन प्राप्त नहीं हुआ, क्योंकि सी० आर० दास, लाल लाजपतराय, मालवीय जी, विपिन चन्द्र पाल, जिन्ना, तथा एनी बेसेन्ट इसके समर्थन में नहीं थे । तथापि थोड़े सेबहुमत से यह पास हो गया । इसके पश्चात् दिसम्बर, 1920 के कांग्रेस के नियमित नागपुर अधिवेशन में कांग्रेस ने एक विशाल बहुमत से इसकी पुष्टि कर दी।

---

75. इन्डिपेन्डेन्ट- समाचार पत्र, 23 नवम्बर सन् 1920 ।

76. वही, 9 दिसम्बर सन् 1920 ।

इस दृष्टिकोण से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का सन् 1920 का नागपुर अधिवेशन कांग्रेस के इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है ।[7] इसने कांग्रेस में एक नया दृष्टिकोण, उत्साह, स्फूर्ति, और साहस प्रदान किया। कांग्रेस ने अब वैधानिक आन्दोलन की सीमा का परित्याग कर सरकार का सक्रिय विरोध करने का निश्चय किया । इसी अधिवेशन में कांग्रेस ने उच्च मध्यवर्ग की संस्थाके स्थान पर सच्चे और पूर्ण अर्थों में सर्व-साधारण की हिन्दुस्तानी संस्था का रूप धार कर लिया ।[78]

असहयोग आन्दोलन के चौरी चौरा काण्ड और असहयोग आन्दोलन के अन्त के सम्बन्ध में जवाहर लाल नेहरू ने लिखा - " आन्दोलन केवल चौरी-चौरा के कारण स्थगित नहीं किया गया, वरन् वास्तविकता यह थी कि यद्यपि बाहर से हमारा आन्दोलन बड़ा शक्तिशाली दिखायी देता था और वह बड़ी प्रगति कर रहा था, किन्तु आन्दालन अन्दर से छिन्न-भिन्न हो रहा था । यह आन्दोलन स्थगित नहीं किया जाता तो शासन के द्वारा खूनी पद्धति से इस आन्दोलन का अन्त कर दिया जाता है आतंक का एक ऐसा राज स्थापित हो जाता, जो जनता के उत्साह को ही समाप्त कर देता ।[79]

जनवरी, 1921 के प्रारम्भ में ही इलाहाबाद के मौलाना कमालुद्दीन ज़ाफरी ने मौलवी आजाद हुसैन तथाहबीब को असहयोग का प्रचार कार्य करने के लिए नियुक्त किया । उनका कार्य ग्रामों में खिलाफत समितियों का निर्माण करना था। मौलाना शहा हाफ़िज आलम ने इसी उद्देश्य से प्रान्त में

---

77. डी०सी०चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉन्स्टीट्यूशनल डेवलपमेन्ट, पृष्ठ 101
78. पी०आर० जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन, पृष्ठ-85
79. जवाहर लाल नेहरू, ऑटोबॉयोग्राफी, पृष्ठ - 87

पर्यटन प्रारम्भ किया । जन - जन से समर्थन प्राप्त करने का कार्य किया जाने लगा ।

11 जनवरी सन् 1921 को सरकार को प्राप्त गुप्त सन्देश कृषि प्रधान जनता में तथा विशेषकर युक्त प्रान्त के किसानों में प्रसारित होती असन्तोष की लहर को स्वीकार करता है । इलाहाबाद जनपद की अवस्था से सम्बन्धित रिपोर्ट कहती है कि इस जिले में किसान सभा का प्रभाव सर्वाधिक था । इसके साथ ही वर्तमान असन्तोष के आधार की परख भी अधिकारियों ने की थी । अत: रिपोर्ट का यह निष्कर्ष था कि -

" There is very noticeable discontent among agricultural classes, but.. this discontent lacks definite aims and is directed entirely against the land lords, and is not in any way anti-British or even anti-Government."[82]

असहयोग आन्दोलन को तीव्र गति प्रदान करने का कार्य सार्वजनिक सभाऐं कर रही थीं । 6 अप्रैल, 1921 को सत्याग्रह दिवस के अवसर पर हड़ताल हुई । विद्यार्थी समाज धन एकत्र करने में असफल ही रहा । सन्ध्या को ही पंडित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में सभा हुई ।[82]

---

80. इन्डिपेन्डेन्ट - दैनिक समाचार पत्र, 9 जनवरी, 1921।
81. लीडर - समाचार पत्र, 8 अप्रैल, 1921 ।
82. वही, 15 अप्रैल, 1921 ।

13 अप्रैल, 1921 को इलाहाबाद में जॉलिया वाला दिवस मनाया गया । इसकी सभा में सम्मिलित व्यक्तियों की संख्या 1,500 के लगभग थी । इस सभा के अध्यक्ष श्री पुरूषोत्तमदास टंडन थे । पंडित जवाहर लाल नेहरू ने असहयोग पर अपनी आस्था प्रकट करते हुए जनता से तिलक स्वराज्य फन्ड में योगदान देने की याचना की ।[82]

5 मई, 1921 को पुन: एक बार मौलाना विलायत हुसैन की अध्यक्षता में एक सभा हुई । इलाहाबाद की नगर महापालिका ने महात्मा गांधी के आगमन पर उनका स्वागत करने की अनिच्छा प्रकट की थी जो कि इलाहाबाद के निवासियों के लिए असहय था । अत: इस सभा ने महात्मा गांधी का भव्य स्वागत करने का निश्चय किया ।[83]

इलाहाबाद जनपद की कान्फ्रेंस भी असहयोगी प्रवृत्तियों को तीव्रतर बनाने में सहायक हुई । इस कान्फ्रेन्स का यह प्रमुख उद्देश्य था कि नागपुर के असहयोग प्रस्ताव को जिले-जिले का समर्थन प्रदान करा दिया जाये । इस अवसर पर देश के समस्त अग्रणी नेता भी उपस्थित थे । सर्वप्रथम मोतीलाल नेहरू ने महात्मा गांधी के मानपत्र भेंट कर नगरमहापालिका के कार्य का प्रायश्चित किया । स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री पुरूषोत्तम टंडन द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रथम प्रस्ताव द्वारा असहयोग को पुन: स्वीकृत किया गया ।

---

82. लीडर - समाचार पत्र, 15 अप्रैल, 1921 ।
83. वही, 7 मई सन् 1921 ।

द्वितीय प्रस्ताव इलाहाबाद जिले के किसानों के कष्टों के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के लिए पंडित मोतीलाल नेहरू द्वारा प्रस्तुत किया गया । एक अन्य प्रस्ताव के द्वारा स्वराज्य फन्ड में दान देने की प्रार्थना की गई । पंडित जवाहर लाल नेहरू ने विश्वास प्रकट किया कि 30 जून, के पूर्व इलाहाबाद के लगभग, 50,000 व्यक्ति कांग्रेस की सदस्यता अवश्य ग्रहण कर लेगें । कार्यकर्ताओं की विशेष ध्यान महिलाओं की सदस्यता की ओर आकर्षित किया । ज़हूर अहमद ने पंचम प्रस्ताव द्वारा इलाहाबाद में 10,000 चरखे खरीदकर घर-घर में स्वदेशी वस्त्र के लिए सूत कातने का अनुरोध किया । तत्पश्चात मादक द्रव्यों का क्रय कम हो जाने पर सन्तोष भी प्रकट किया ।[84]

31 मार्च तक की रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए कांग्रेस बुलेटिन यह सूचित करता है कि पंडित मोतीलाल नेहरू, पंडित जवाहर लाल नेहरू, ज़हूर अहमद , पुरूषोत्तमदास टंडन, मंजरअली सोखता, गौरीशंकर मिश्र, कपिलदेव मालवीय आदि इलाहाबाद के प्रमुख व्यक्तियों ने वकालत करना बन्द कर दिया । इसके अतिरिक्त पाँच अध्यापकों ने असहयोग में भाग लिया ।[85]

इलाहाबाद की अभारतीय जनता के लिए कान्फ्रेन्स के दो दिन अत्यन्त चिन्ताजनक थे । 10 मई, 1921 को 1857 के विद्रोह की पुनरावृत्ति के मिथ्या समाचार उन तक पहुँचाकर उन्हें आतंकित कर दिया । आन्दोलन के

---

84. लीडर- समाचार पत्र, 13 मई सन् 1921 ।

85. इन्डिपेंडेन्ट - समाचार पत्र 14 मई सन् 1921 ।

कारण हुई सशंक प्रवृत्ति आन्दोलन के प्रभाव की ओर संकेत करती है । कान्फ्रेंस द्वारा इलाहाबाद का ही नहीं, युक्त प्रान्त के निश्चय को भी सरकार के सम्मुख स्पष्ट कर दिया गया -

" इलाहाबाद का उत्साह द्विगुणित हो गया था । नगर महापालिका की नीति भी परिवर्तित हो गयी थी । श्री पुरूषोत्तमदास टंडन की अध्यक्षता में असहयोग के एक प्रमुख कार्यक्रम राष्ट्रीय शिक्षा के लिए सरकारी अनुदान अस्वीकार कर दिया गया । पाठ्यक्रम में राष्ट्रीयता का समावेश करने के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति का यही मार्ग था । 20 जुलाई 1921 तक इलाहाबाद में नगर महापालिका द्वारा संचालित 50 तथा 6 स्वतन्त्र राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना हो चुकी थी । स्वराज्य फन्ड में इलाहाबाद निवासियों का योगदान 35,000 रूपये था, 20,000 व्यक्तियों ने कांग्रेस की सदस्यता को स्वीकार किया था । स्वदेशी केप्रचार के लिए 12,000 चरखे भी खरीदे गये थे ।[86] राष्ट्रीय विद्यालयों की ओर से विद्यार्थियों को स्वदेशी प्रचार की टोलियों के प्रान्त में पर्यटन का आयोजन किया गया । सूत काटने की शिक्षा देने के लिए संस्थाओं का निर्माण हो रहा था । इलाहाबाद के चौक तथा दारागंज में कई खद्दर की दुकानें खुलीं, राष्ट्रीय विद्यालयों में कातने की शिक्षा पाठ्यक्रम का एक अंग थी महात्मा गाँधी विद्यालय के विद्यार्थियों ने स्वदेशी प्रचार के लिए धन एकत्र करने के लिए प्रत्येक घर में एक मिट्टी का

---

86. इन्डिपेंडेन्ट - समाचार पत्र, 24 जुलाई, सन् 1921 ।

बर्तन रखने की प्रथा प्रारम्भ थी ।[87] अगस्त में ही महात्मा गाँधी की उपस्थिति में विदेशी वस्त्रों को अग्नि में समर्पित किया गया ।[88]

इलाहाबाद जनपद में आन्दोलन की तीव्र प्रगति को देखकर दमन कार्य प्रारम्भ कर दिया गया था । सर्वप्रथम पंडित जवाहर लाल नेहरू को 9 नवम्बर , 1920 को "इन्डिपेन्डेन्ट के ऑफिस में दी गई, 30 नवम्बर, 1920 को डेराशाह अजमल में तथा 6 मार्च, 1921 को सुल्तानपुर में दी गई वक्तृताओं के आधार पर चेतावनी दी गई तथा दन्ड की व्यवस्था के पूर्व उन्हें माँफी माँगने कासमय दिया गया ।

"इन्डिपेन्डेन्ट" के सम्पादक जार्ज जोसेफ तथा प्रकाशक रंगा एयूयर को भी इसी आशय के पत्र प्राप्त हुए । "इन्डिपेन्डेन्ट" के जिन लेखों पर आपत्ति प्रकट की गयी थी, उनमें 11 जनवरी 1921 के अंक में प्रकाशित " द किसान क्राइसिस" उसी अंक का लेख "न्यू एज इन रायबरेली । फरवरी 1921 का संपादकीय जिसमें किसान नेता बाबा रामचन्द्र की गिरफ्तारी के विषय में लिखा गया था । 10 मई के अंक में प्रकाशित "टेरोरिज़्म एन मैड" सम्मिलित थे ।

परन्तु सरकारी चेतावनी प्रभावहीन होती जा रही थी । अभी तक इलाहाबाद ने केवल स्वदेशी को आत्मसात करने की ओर ही प्रयास किया था ।

---

87. इन्डिपेंडेन्ट - समाचार पत्र, 25 अगस्त, 1921 ।

88. लीडर- समाचार पत्र, 24 अगस्त, सन् 1921 ।

" The whole country knows that the one remedy is the attainment of Swaraj and that there is no other."

इसके उपरान्त स्वराज्य की प्राप्ति का मार्ग इस प्रकार स्थिर किया गया था -

(1) भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की सदस्यता प्राप्तकरना ।

(2) चरखे का विस्तृत प्रयोग करना ।

(3) सरकारी अदालतों का बहिष्कार कर पंचायतों के निर्णय को मान्य करना ।

(4) स्वराज्य फन्ड में सामर्थ्यानुसार दान करना ।

(5) समस्त जातियों में एकता उत्पन्न करना ।

यह सन्देश पुनः कहता है कि -

" There is no doubt that the kissans have taken up a rightly task. They have started on a great pilgrimage and many will be the hardships they will have to endure if they wish to put an end to their sufferings without Tapasya there can be no success".

परन्तु उसी के साथ इस पावन युद्ध में लूट, हिंसा तथा असत्य

की लेशमात्र भी छाया न पड़ने देने का आदेश भी दिया गया था । उनका यह कहना था कि सरकार को किसानों की एकता से बाध्य होकर दमनकारी कानून लागू करना पड़ा था । यह स्वयं सरकार की पराजय का साक्षीथा । किसानों के विरूद्ध झूठे मुकदमों की सूचनाऐं चारों ओर से इलाहाबाद में आ रही थीं । इस सम्बन्ध में पंडित मोती लाल नेहरू का निर्देश था कि सरकार से इस परिस्थिति में न्याय की आशा करना व्यर्थ थी । अत: इन झूठे मुकदमों के लिए वकील आदि पर धन व्यय करना व्यर्थ था । किसान केवल सत्य भाषण करें तथा सरकारी दन्ड को यथाशक्ति सहन करें । किसी भी प्रकार अच्छे व्यवहार के लिए जमानत देने से जेल जाना अधिक श्रेयष्कर है । इसी में सरकार की पराजय तथा किसानों की विजय निहित थी । अन्त में उनका सन्देश था कि -

" Kissan Brethren, if you will act in accordance with what is written above then only will you be the true followers of Mahatma Gandhiji and fulfil Mahatma Gandhi's Vachan." [93]

इन्डिपेन्डडेन्ट ने 6 दिसम्बर, के एक अंक में प्रतिज्ञापत्र को प्रकाशित कर जनता का आव्हान किया । प्रतिज्ञापत्र पर तुरन्त हस्ताक्षर करके कांग्रेस

---

92. इन्डिपेन्डडेन्ट - समाचार पत्र, 3 मई, सन् 1921 ।

के स्वयं सेवक बन जाने का कार्य पंडित मोतीलाल नेहरू तथा पंडित जवाहर लाल नेहरू ने अविलम्ब किया । बैठक में उपस्थित व्यक्तियों ने तुरन्त प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर कर दिये थे । इस निर्णय ने इलाहाबाद के चरण असहयोग की दूसरी स्थिति की ओर अग्रसित कर दिये । अतः गणमान्य नेताओं को बन्धन में डालने की ओर सरकार प्रवृत्त हुई । 5 दिसम्बर, 1921 को कपिलदेव मालवीय श्याम लाल नेहरू, पंडित मोतीलाल नेहरू तथा जवाहरलाल नेहरू को गिरफ्तार कर लिया गया । आनन्दभवन में कांग्रेस के ऑफिस की पुलिस ने जाँच की तथा कार्यकारिणी समिति के प्रस्तावों पर अधिकार कर लिया ।[93] 13 दिसम्बर को आक्रोश उस समय अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया जब युक्त प्रान्तीय कांग्रेस समिति की एक बैठक के दौरान पुलिस ने वहाँ पहुँचकर जाँच आरम्भ की ।[94] 14 दिसम्बर 1921 को एक बैठक पुनः आयोजित हुई, जिसमें गिरफ्तार व्यक्तियों को बधाई देकर नवीन चुनावों द्वारा रिक्त स्थानों की पूर्ति की गयी ।[95]

सन् 1919 में एक नम्रदलीय संस्था की स्थापना हुई थी, जिसका नाम "युक्त प्रान्तीय लिबरल एसोसिएशन" रखा गया था । इस संस्था का कार्य सदैव असहयोग आन्दोलन को अनुचित सिद्ध करना रहा । 24 मार्च 1920 को

---

93. इन्डिपेन्डडेन्ट - समाचार पत्र, 6 दिसम्बर, सन् 1921
94. लीडर- समाचार पत्र, 16 दिसम्बर, सन् 1921,
95. वही, 17 दिसम्बर, सन् 1921 ।

आयोजित एक बैठक में खिलाफत आन्दोलन के विरुद्ध प्रस्ताव पारित किया गया। प्रस्ताव का निर्णय था -

"The U.P. Liberal Association while expressing its regret at the severity of the terms ~~of the terms~~ of the Turkish treaty and urging that these terms should be revised so as to make them more consonant with the principle for which the war was avowedly waged, is strongly of opinion that the line of action pressed in connection with the khilafat agitation is highly detrimental to the interests of the country."

नम्रदलीय नेताओं का मुख्य विरोध कार्यपद्धति से था, उसके कारण से नहीं। उनके विचारों के अनुसार असहयोग का मार्ग भारत की वर्तमान परिस्थितियों के अनुपयुक्त ही नहीं, भावी कष्टों का भी आव्हानकर्ता था।[96]

सन् 1921 में इलाहाबाद में हुए युक्तप्रान्तीय लिबरल एसोसियेशन के अधिवेशन के आरम्भ में ही युवराज का स्वागत करते हुए अध्यक्ष ने कहा-

---

96. इन्डिपेन्डडेन्ट-समाचार पत्र, 26 मई, 1920।

" It is our duty to offer our loyal and most cordial welcome to his Ro al Highness.. The kind Emperor and the members of his family are above all politics."

अखिल भारतीय लिबरल एसोसियेशन में आन्दोलन के प्रत्येक अंग पर उन्होनें अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की । स्वागत समिति के अध्यक्ष हृदयनाथ कुंजरू थे । उन्होनें अपनी स्वागत वक्तृता में स्पष्ट कर दिया कि आन्दोलन के कारण उत्पन्न हुई समस्याओं के लिये जितना उत्तरदायी आन्दोलनकारियों को मानते थे, उतना ही सरकारी पदाधिकारियों को भी । उनका यह विचार था कि शांति तथा सुव्यवस्था की स्थापना का कर्तव्य अधिकारियों को क्षणिक से आरोप के माध्यम से सामूहिक गिरफ्तारियों का अधिकार नहीं देता । फिर अनेक अवसरों पर उनके आरोप भी तर्क तथा तथ्यविहीन होते थे । इस कथन की पुष्टि के लिए उन्होंने पंडित मोतीलाल नेहरू पर लगाये गये हिंसक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देने के आरोप का उदाहरण दिया । सरकार के इन दमनकारी कृत्यों ने आन्दोलनकारियों की आन्दोलनात्मक प्रवृत्तियों को नष्ट करने के विपरीत उन्हें जान सहानुभूति प्रदान कर पुष्टि होने का अवसर प्रदान किया था ।[97]

नम्रदल के नेताओं ने सुधारो के अन्तर्गत चुनावों में भाग अवश्य लिया था, परन्तु द्वैध शासन (Dyarchy) के प्रश्नपर उनके अनुभव आशाप्रद

97.
लीडर- समाचार पत्र, दिनांक 30 दिसम्बर सन् 1921 ।

नहीं थे । शासन में पुनः सुधार की आवश्यकता उन्हें एक ही वर्ष के बाद अनुभव होने लगी थी । हृदयनाथ कुंजरू ने अपना व्यक्तित्व अनुभव इस प्रकार प्रकट किया -

" Dyarchy has been found to be prejudicial to the growth of responsible Government." [98]

अधिवेशन में असहयोग के प्रत्येक अंग की आलोचना करने के पश्चात् इन नेताओं ने यह प्रस्ताव पारित किया -

" इस सम्मेलन (ऐसोसिएशन) की यह दृढ़ राय है कि कांग्रेस द्वारा चलाये गये सविनय अवज्ञा आन्दोलन का सबसे बड़ा खतरा राष्ट्र के वास्तविक हित को है और यह निश्चित रूप से लोगों को अन्तहीन कष्ट एवं यातना पहुँचायेगा और राष्ट्र से हार्दिक निवेदन करूँगा कि वह ऐसे शासन की स्वीकृति न दे जिसमें राजसी शांति , कानून एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता हो क्योंकि वह निश्चित रूप से शत्रुवत मानसिकता को जन्म देती है जो कि केवल मौजूदा सरकार के लिए ही नहीं, वरन् किसी भी सरकार के लिए होगी ।" [99]

जनवरी , 1922 के प्रारम्भ में जिलाधीश ने जिला कांग्रेस समिति को आदेश दिया था कि नगर के दो मील के घेरे में एक सप्ताह तक कोई

---

98. लीडर-समाचार पत्र, 30 दिसम्बर सन् 1921 ।

99. वही, 31 दिसम्बर सन् 1921 ।

कोई सार्वजनिक सभा नहीं होगी । इस आदेश के उल्लंघन के उद्देश्य से 26 जनवरी को श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू की अध्यक्षता में सार्वजनिक सभा हुई । मादक द्रव्यों की दुकानो पर शान्ति पूर्वक धरना भी दिया जा रहा था । परन्तु आन्दोलन के इस उत्साह को 4 फरवरी को चौरी चौरा में हुई अशोभनीय घटना ने कुंठित कर दिया । महात्मा गांधी ने आन्दोलन तुरन्त बन्द कर दिया । कारागार में बन्दी नेता इस सूचना से पिंजरबद्ध पक्षियों के समान विकल हो उठे, किन्तु उनका प्रत्येक अस्त्र गांधी के अटल निश्चय के सम्मुख विफल हो गया ।

परिवर्तित परिस्थितियों का मूल्यांकन करने तथावर्तमान का पथ निर्धारित करने के लिए युक्तप्रान्तीय कांग्रेस समिति की बैठक 25 मार्च, 1922 को इलाहाबाद में हुई । गांधी जी के विचारानुसार स्वतंत्रता युद्ध दो सीमाओं पर हो रहा था । उनमें से ध्वंसात्मक युद्ध स्थगित हो गया था परन्तु रचनात्मक कार्यक्रम पूर्ववत् जारी थे । अत: बैठक ने दो प्रमुख निश्चय लिये । प्रथम प्रस्ताव विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार से सम्बन्धित था, जिसमें यह कहा गया था -

" The committee strongly urges all Congress organisation in the province to carry on an intensive propoganda in favour of Khadder and the boycott of foreigh cloth amongst the purchasers and sellers of cloxths ɱx. The committee recommends that purchasers be invited to sigh pledges to boycott foreign cloxth."

अन्य प्रस्तावों के द्वारा जनता के उत्साह की निम्नकारिणी के स्त्रोत को अवरुद्ध होने से रोकने के लिए 6 अप्रैल , 1922 से प्रारम्भ होने वाले राष्ट्रीय सप्ताह को परम्परानुसार मनाने का निश्चय किया गया ।[100]

10 अप्रैल, 1922 को स्थानीय कांग्रेस समिति की सभा पंडित जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में हुई । सभा के प्रमुख पाँचवे प्रस्ताव में कहा गया था कि इलाहाबाद के वस्त्र विक्रेताओं ने अपनी प्रतिज्ञा भंग कर विदेशी वस्त्र मँगाये थे । इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए धरना देना आवश्यक था । गुप्त सूचना विभाग के एक इंसपेक्टर ने यह सूचना दी कि वह 20 अप्रैल , को स्वराज्य भवन के प्रांगण में आयोजित एक सभा में उपस्थित था, जिसमें पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उर्दू में बोलते हुए कहा था कि व्यापारियों को हर सम्भव अवसर दिया गया था, परन्तु अब धरने द्वारा उन्हें प्रतिज्ञापालन के लिए बाध्य किया जायेगा । केशवदेव मालवीय ने छेदी नामक एक व्यापारी को सूचना दी कि उसके द्वारा विदेशी वस्त्र की बिक्री का समाचार प्राप्त होने के कारण उसकी दुकान पर धरना दिया जायेगा । धरना तभी समाप्त होगा जब वह नवीन प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करेगा ।[101]

सब इंसपेक्टर बाबूराम ने यह स्वीकार किया कि उसने स्वयं सेवकों को ब्रजलाल, छेदीलाल, जीतमल की दुकानों पर धरना देते हुए देखा था । इस आयोजन से बाध्य होकर लगभग सभी व्यापारियों ने एक नवीन प्रतिज्ञापत्र

---

100. लीडर "- समाचार पत्र, 31मार्च, 1922 ।

101. वही, 21 मई सन् 1922 ।

पर हस्ताक्षर किये । प्रतिज्ञा के प्रमुख अंग थे कि वह विदेशी वस्त्र नहीं मँगायेगें यदि प्रतिज्ञा भंग होगी तब वह व्यापारी मंडल " द्वारा नियत जुर्माना देगें । अभी तक उन्होंने जितना विदेशी वस्त्र मंगाया है, उसकी मात्रा वह " व्यापारी मंडल " को सूचित करेगें तथा भविष्य में विदेशी वस्त्र मँगाने पर 5 रूपये प्रति थान दण्ड देना उन्हें स्वीकारार्थ होगा ।[102] आन्दोलन के प्रणेताओं के दन्डित होने के उपरान्त भी आन्दोलन चलता रहा । इस सम्बन्ध में निर्णय युक्तप्रान्तीय कांग्रेस समिति तथा खिलाफत समिति की 20 तथा 21 मई, 1922 की बैठकों ने लिया ।[103]

इलाहाबाद में मौलाना अब्बुल कलाम आजाद ने कुछ प्रस्तावों को अखिल भारतीय कांग्रेस समिति से मान्य करा दिया था , इस सम्बन्ध में उन्होनें नेहरू से बातचीत की । उन्होंने भी कुछ परिवर्तनों के साथ उनके प्रस्तावों को स्वीकृत कर लिया । प्रस्ताव से यह स्पष्ट हो गया था कि समझौते का अर्थ मतभेदों की समाप्ति नहीं, वरन् कुछ समय के लिए विरोधों को दबाकर रखना तथा परस्पर मान्य कार्यक्रमों को एक होकर करना था । 20 फरवरी 1923 को परिवर्तनवादियों की एक गोष्ठी इलाहाबाद में हुई जिसमें समझोते की शर्तों पर विचार किया गया । कार्यकारिणी तथा अखिल भारतीय कांग्रेस चितरंजनदास ने समझौता विषयक एक प्रपत्र तैयार किया । कार्यकारिणी ने निर्णय किये गये, वह इस प्रकार से थे -

---

102. लीडर, समाचार पत्र, 7 मई, सन् 1922 ।

103. वही, 24 मई, सन् 1922 ।

(1) Suspension of council entry propoganda on both sides fill the 30th April.

(2) Both parties to be at liberty to work the remaining items of their respective programmes in the interval without interfering with each other.

(3) The majority party will be at liberty to carry on their progoganda in accordance with the Gaya Programme about money and volunters.

(4) The majority partiy will cooperate with the majority party in appealing for and raising such funds and enlisting such workers as may be necessary for the constructive programme and other common matters.

(5) Each party to adopt such courses after the 30th April as may be advised ." [104]

---

104. ए० आई० सी०सी० रिकार्डस, 14, 1923 ।

सन् 1924 में महात्मा गाँधी ने अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा" मैं स्वराज्यवादियों के मार्ग में अवरोध अथवा उनके विरूद्ध प्रचार में भाग नहीं ले सकता, यद्यपि मैं ऐसी योजना को सक्रिय सहायता नहीं कर सकता, जिसमें मुझे स्वयं विश्वास नहीं है ।[105]

साइमन कमीशन ने जहाँ एक तरफ जनता को पुनर्चेतना का रंग दिया, वहीं नम्रदलीय नेताओं को वर्षों बाद कांग्रेस के समकक्ष खड़ा होने का अवसर दिया । दक्षिणपंथी नेताओं को जहाँ असहयोग अप्रीतिकर था वहीं कौंसिल में प्रवेशकर निरन्तर रूकावटें डालने की स्वराज्य पार्टी की नीति भी अरूचिकर थी । इसीलिए सन् 1924 में जब युक्तप्रान्तीय लिबरल कांन्फ्रेंस इलाहाबाद में हुई तब उन्होनें स्वराज्य पार्टी की कार्यपद्धति का विरोध किया । वह स्पष्ट कर देना चाहते थे कि भारतीय राजनीति में अब भी ऐसे तत्व विद्यमान थे जो भारतीय मांगों की स्वीकारोक्ति तथा उस ओर सुधार करने का प्रत्येक अवसर सरकार को प्रदान करना चाहते थे । स्वराज्यवादियों के ही समान वह भी शासन शैली से असन्तुष्ट थे, परन्तु असहयोग की मूल प्रवृत्ति स्वराज्य पार्टी के कार्यक्रम में उपस्थित होने के कारण वह उसको अहितकर मानते थे । [106] मिस विलकिन्सन लिखती हैं -

" जालियाँवाला बाग की दुखान्त घटना के बाद सारे देश में जितनी

---

105. रामगोपाल, इण्डियन पोलिटिक्स, पृष्ठ - 305 ।

106. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाइव्स ऑफ इण्डिया, नयी दिल्ली, अप्रैल 1924, 135 ।

साइमन कमीशन की निन्दा की गयी, उतनी अँग्रेजों के और किसी कार्य की नहीं हुई ।[107]

सन् 1925 में स्वराज्यवादी दल इतना अधिक शक्तिशाली हो गया कि गाँधी जी मोती लाल नेहरू के हाथों में जो केन्द्रीय विधानसभा में स्वराज्य दल के नेता थे, सम्पूर्ण कांग्रेस संगठन का नेतृत्व सौंप देने के लिए तत्पर हो गये । देशबन्धु चितरंजनदास सन् 1925 की बीमारी की अवस्था में द्वैध शासन प्रणाली का अन्त करने के लिए विधानपरिषद की कार्यवाही में भाग लेने के लिए गये और इसमें उन्हें सफलता प्राप्त हुई । 15 जून, 1925 को चितरंजन दास की मृत्यु के बाद पंडित मोतीलाल नेहरू ने दल का नेतृत्व संभाला तथा अब स्वराज्यवादी स्पष्ट रूप से सहयोग की ओर झुकने लगे ।[108] जुलाई सन् 1925 मेंसारे महीने दंगे होते रहे । इनमें प्रमुख स्थान दिल्ली, कलकत्ता, और इलाहाबाद थे ।[109]

---

107. राम गोपाल, इण्डियन पोलिटिक्स, पृष्ठ - 329।

108. पी० आर० जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इण्डिया एन्ड इण्डियन कॉंस्टीट्यूशन, पृष्ठ - 96 ।

109. बी० पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 289 ।

पंचम - अध्याय

संवैधानिक विकास का काल

(1926 - 1937)

ANAND BHAWAN
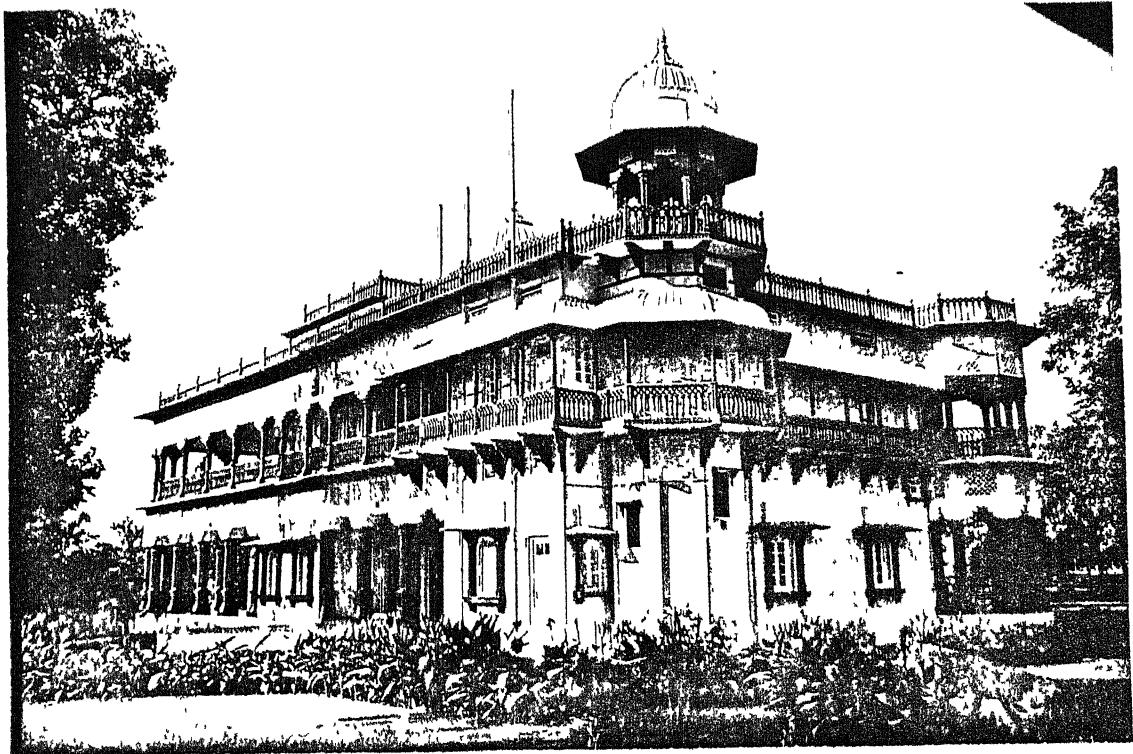
ALLAHABAD

ANAND BHAWAN

ALLAHABAD
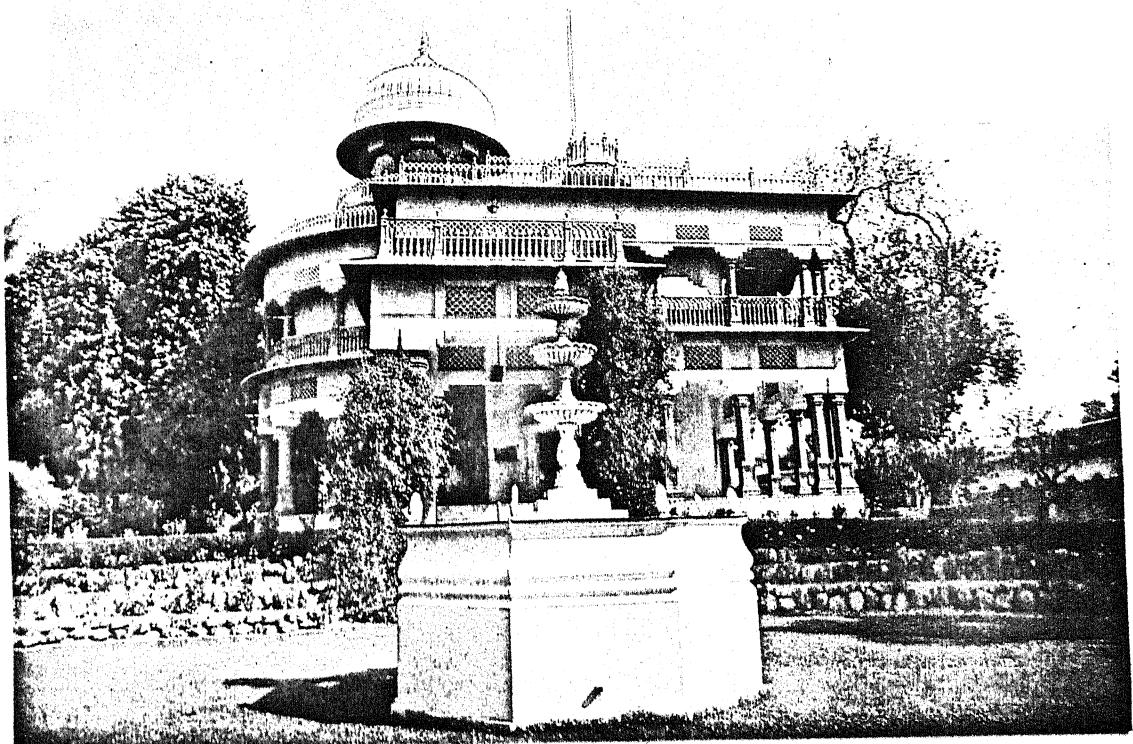
सन् 1925 में केन्द्रीय व्यवस्थापिका में संयुक्त दल के कारण जहाँ स्वराज्य दल को अनेक प्रस्तावों पर सरकार को हटाने का अवसर मिला था वही उसे अपनी अवरोध की मूलनीति में समझौता भी करना पड़ा । 16 जून सन् 1925 को चितरंजन दास की मृत्यु के पश्चात् पंडित मोतीलाल नेहरू ने स्वराज्य दल का नेतृत्व संभाला तथा अब स्वराज्यवादी स्पष्ट रूप से सहयोग करने की ओर झुकने लगे ।[1] इन सबका परिणाम यह हुआ कि दल में अधिक विघटन होने लगा । अब उनका सिद्धान्त "उत्तरापेक्षी सहयोग" का हो गया ।[2]

सन् 1926-1927 का काल राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में अन्धकार का काल सिद्ध हुआ । इस अवधि में देश के अनेक स्थानों पर साम्प्रदायिक दंगे हुए । अब यह स्पष्ट हो गया था कि हिन्दूओं और मुसलमानों की एकता को पुनर्जीवित करना सम्भव नहीं है । स्वराज्य दल की शक्ति क्षीण होती जा रही थी । राष्ट्रीय आन्दोलन भी गतिशून्य हो गया था । अतः इसे सजीव करने के लिए नयी परिस्थितियों तथा योजनाओं की आवश्यकता थी ।[3]

मार्च सन् 1926 मे राम प्रसाद बिस्मिल युक्तप्रान्तीय क्रांतिकारियों का नेतृत्व कर रहे थे । उन्होंने बनारसीलाल को " क्रांतिकारी" के वितरण

---

1. पी० आर० जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इण्डिया एन्ड इण्डियन कॉंस्टीट्यूशन, पृष्ठ - 96 ।
2. डी०सी० चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉंस्टीट्यूशनल डेवलेपमेन्ट, पृष्ठ - 110 ।
3. वही, पृष्ठ - 111 ।

का कार्य दिया था । गुप्त सूचना विभाग के इन्सपेक्टर की सूचना के अनुसार इस पत्र की लगभग 306 प्रतियाँ प्रान्त के विभिन्न भागों से प्राप्त हुई थीं । प्रारम्भ में पत्र में यह लिखा है =

"Chaos is necessary to the birth of a new star. India is also taking a new birth, and is passing through that inevitable phase, when chaos and agony will play their destined role".

इसके पश्चात् ही पत्र यह भी घोषणा करता है कि विदेशियों को भारत पर आधिपत्य रखने का अधिकार नहीं है । इस सन्दर्भ में क्रान्तिकारियों ने अपना ध्येय इस प्रकार से स्थिर किया :-

" The immediate object of the revolutionary party in the domain of politics is to establish a Federal Republic of United States of India by an organized and armed revolution".

शान्तिपूर्ण अहिंसावादी सत्याग्रह की मृगमरीचिका से मुग्ध जनता को यथार्थ भूमि के स्पर्श की अनुभूति देने का प्रयास इस पत्र के माध्यम का मुख्य भाव था । स्वतंत्रता का एकमात्र पथ है हिंसावादी क्रान्ति । इस ध्येय की प्राप्ति के लिए दुख-कष्ट, विपत्तियाँ, बलिदान आदि सभी अनिवार्य है। अन्त में क्रान्तिकारियों पर आरोपित अराजकता तथा आतंकवाद के आरोपों का खण्डन करते हुए यह पत्र कहता है कि क्रान्तिकारियों के आतंकवादी कार्यों से इंग्लैण्ड के अन्य शत्रुओं का ध्यान भी भारतीय समस्या की ओर आकृष्ट होता है तथा भारतीय क्रान्तिकारियों को उनसे मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करने में सरलता

होती है । काकोरी षड्यन्त्र के सम्बन्ध में कई गवाहों ने "क्रान्तिकारी" के वितरण के प्रमाण भी दिये ।

इलाहाबाद के वकील शंकर सरन को एक श्वेत पत्र भी प्राप्त हुआ जो उन्होंने जिलाधीश को प्रेषित कर दिया । श्वेत पत्र पर विजय कुमार सिन्हा के हस्ताक्षर थे । इसी प्रकार का एक पत्र कायस्थ पाठशाला के प्रधानाचार्य डाक्टर ताराचन्द्र का भी प्राप्त हुआ । "लीडर" के संपादकीय विभाग के एक सदस्य भारद्वाज के पास 28 जनवरी, 1925 की रात्रि को तीन पैकेट प्राप्त हुए । पहला पैकेट सी. वाई. चिन्तामणि के लिए था, दूसरा पैकेट कृष्णाराम मेहता के नाम था, और तीसरा स्वयं भारद्वाज के नाम था । अन्य दो पैकेटों में भी वही सामग्री थी । 26 जनवरी सन् 1925 को "लीडर" के सम्पादक को भी डाक द्वारा "क्रांतिकारी" पत्र भेजा गया ।[4]

सन् 1926 का आरम्भ कौंसिलों के कार्यक्रम के लिए विशेष शुभ न रहा । सन् 1923 की नवीनता का आर्कषण इस समय फीका पड़ चुका था। केवल युद्ध की खातिर लगातार "युद्ध" किये जाना कुछ थकाने वाली बात साबित हुई और नये वर्ष के आरम्भ में ही थकावट और प्रतिक्रिया के लक्षण दिखाई देने लगे ।[5]

जोगेशचन्द्र चटर्जी जब कलकत्ता में 18 अक्टूबर, 1924 को बन्दी बनाये गये तब उनके पास से एक पृष्ठ बरामद हुआ जो सम्भवत: एक क्रान्तिकारी बैठक

---

4. लीडर - समाचार पत्र, 7 मार्च सन् 1925 ।
5. बी0 पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 290 ।

से सम्बन्धित था । ऋषिकेश तथा रामचन्द्र नामक दो विद्यार्थियों ने बताया कि भूपेन्द्रनाथ सान्याल ने उन्हें क्रांतिकारी षड्यन्त्र में भागीदार बनाने का प्रयत्न किया था । रामचन्द्र ने बयान दिया कि उनके कालिज में क्रांतिकारी के वितरण के बाद उनकी बात भूपेन्द्रनाथ सान्याल से हुई और उन्होंने क्रांतिकारी दल के ध्वंसात्मक तथा रचनात्मक दोनों ही पक्षों को उनके सम्मुख स्पष्ट किया था । इसी प्रकार अन्य विद्यार्थियों के साथ भी भूपेन्द्रनाथ सान्याल का वार्तालाप हुआ । रामचन्द्र ने अदालत में यह बयान दिया कि भूपेन्द्र नाथ सन्याल ने उन्हें " कन्हाई लाल " तथा "अग्निवीणा " नामक दो क्रान्तिकारी पुस्तकें अध्ययन के लिए प्रदान की थीं ।[6]

22 दिसम्बर 1925 को प्रचार कार्य में व्यवधान उपस्थित हुआ । भूपेन्द्रनाथ सन्याल, रामचन्द्र तथा एक अन्य विद्यार्थी घूमने जा रहे थे । मार्ग में अपने पास रखे तक विस्फोटक पदार्थ के प्रदर्शन के पश्चात् उन्होंने कार्ड बोर्ड का एक बॉक्स रामचन्द्र को रखने के लिए दिया। दुर्भाग्यवंश विस्फोट हो जाने के कारण रामचन्द्र के कपड़ो में आग लग गई । इस दुर्घटना की जांच करने के लिए इन्सपेक्टर मुहम्मद हुसैन ने भूपेन्द्र नाथ सन्याल के घर की तलाशी ली जहाँ से अनेक क्रान्तिकारी पुस्तकें तथा रामचन्द्र की जली हुई कमीज प्राप्त हुई । 25 दिसम्बर, 1925 को तलाशी ली गयी थी और उसी दिन भूपेन्द्र नाथ सान्याल को बन्दी बना लिया गया ।[7]

---

6. लीडर-समाचार पत्र, 26 फरवरी, 1926 ।
7. वही, 25 फरवरी, 1926 ।

20 मई, सन् 1926 को पंडित मोतीलाल नेहरू ने जवाहरलाल नेहरू को लिखे अपने पत्र में हिन्दू-मुस्लिम परिस्थिति का रूप स्पष्ट करते हुए लिखा -

"The Hindu-Muslim problem is however getting more and more acute. No sooner a riot is suppressed there is an another outbreak........almost all public men have taken sides".[8]

हिन्दू महासभा को अपने नियंत्रण में करने का प्रयत्न स्वराज्य पार्टी के सदस्य निरन्तर कर रहे थे। सभा के एक वर्ग को प्रभावित करके अपने लोगों को सभा में निर्वाचित कर देने की गुप्त योजना बनायी गई। हिन्दू महासभा के नेता भी धन के बल पर कांग्रेस के सदस्यों को आकृष्ट कर रहे थे। सभा में अपने विश्वासपात्र व्यक्तियों के प्रवेश की सुविधा के लिए इलाहाबाद की तहसीलों में स्वराज्य पार्टी ने 780 सदस्य बनाये थे जो हिन्दू महासभा में अपने 39 व्यक्ति निर्वाचित कर सकते थे। सभा की गतिविधियों की रचना आनन्दीप्रसाद दुबे द्वारा प्राप्त होती थी।[9] सीतला सहाय ने स्वराज्य पार्टी की नीति की सूचना पंडित मोतीलाल नेहरू को दी -

---

8. नेहरू पेपर्स - मोतीलाल नेहरू सीरिज, मोतीलाल नेहरू से जवाहरलाल नेहरू को पत्र, दिनांक 20-5-1926।
9. ए. आई. सी. सी. रिकार्ड्स, नेहरू मेमोरियल एन्ड म्यूजियम लाइब्रेरी, नयी दिल्ली। दिनांक 20-7-1926।

"Our policy is to create difference amongst the original members of the Hindu Mahasabha".

परन्तु यह योजना कार्यान्वित न हो सकी । गौरीशंकर मिश्रा के द्वारा हिन्दू महासभा इस कूटनीति से परिचित हो गई । अत: उन व्यक्तियों को हिन्दू महासभा में प्रवेश ही नहीं मिला , जो कांग्रेस समर्थकों को मत दे सकते थे ।[10]

साम्प्रदायिकता के फलस्वरूप धर्मनिरपेक्षता की विजय कठिन प्रतीत हो रही थी । बिड़ला के धन की सहायता से हिन्दू-महासभा के प्रचार कार्य ने युक्त-प्रान्त की राजनैतिक अवस्था में पंडित मोतीलाल नेहरू जैसे दृढ़ व्यक्ति को भी निराश कर दिया । उन्होंने विश्वस्त साथियों के अभाव को एक कसक के साथ महसूस किया । रफ़ी अहमद किदवई तथा सीतला सहाय के अतिरिक्त अन्य कोई भी व्यक्ति उनका विश्वसनीय नहीं रह गया था ।[11]

राजनीतिक कूटनीति के युद्ध में इलाहाबाद के रेस्पोन्सिबिस्ट भी शामिल थे । दल के प्रमुख व्यक्तियों में ठाकुर नर्मदा प्रसाद सिंह उल्लेखनीय थे । गौरीशंकर मिश्रा जो स्वराज्य पार्टी की हिन्दू महासभा सम्बन्धी योजना की विफलता के लिए उत्तरदायी थे, इस वर्ग के लिए कार्य कर रहे थे । ठाकुर नर्मदा प्रसाद सिंह चतुर व्यक्ति थे । वह भी कांग्रेसी जनों को अपने

---

10. ए. आई. सी. सी. रिकार्डस. सीतला सहाय से मोतीलाल नेहरू को पत्र, दिनांक 4-8-1926 ।

11. नेहरू पेपर्स - मोतीलाल नेहरू सीरिज, दिनांक 5-8-1926 मोतीलाल नेहरू से जवाहरलाल नेहरू को पत्र ।

वर्ग में मिलाने के लिए प्रयत्नशील थे । लाला लाजपतराय ने हिन्दू महासभा के धन में से उनको भी कुछ धन दिया था जिसके द्वारा वह कांग्रेसी सदस्यों को कम कर रहे थे । इस प्रकार के विजित व्यक्तियों में बाबा राघवदास थे जिन्होंने हिन्दू महासभा के लिए प्रचार कार्य करना स्वीकार कर लिया था । सीतला सहाय ने अपने पत्र में स्वराज्य पार्टी की इस हानि के मूल कारण की ओर संकेत किया था :-

> I am afraid this is the situation in more than one place in U.P. and time has come when we should go out and create confidence in workers and help them financially if necessary........there are some who are delighted to work for the Hindu-Mahasabha simply because we cannot provide for them. We must do something to combat this, [12]

सन् 1926 के अन्त तक स्वराज्य दल की शक्ति बिल्कुल समाप्त हो गई । इस दल के पतन के प्रमुख कारण निम्न थे -

(1) चितरंजनदास की मृत्यु होना ।

---

12. नेहरू पेपर्स- मोतीलाल नेहरू सीरिज । सीतला सहाय से मोतीलाल नेहरू को पत्र, दिनांक 20-7-1926 ।

(2) दल की नीति में परिवर्तन होना ।

(3) 1926 के निर्वाचन में कम सफलता प्राप्त होना ।

(4) कांग्रेस में एक अन्य दल की स्थापना होना ।

(5) हिन्दू-मुस्लिम दंगे होना ।

(6) स्वराज्य दल में फूट पड़ना ।[13]

स्वराज्यवादियों की "अड़गानीति" के औचित्य को स्वीकार करते हुए केल्सफोर्ड लिखते है - " मेरे विचार से अड़गा लगाने की नीति उचित ही थी, क्योंकि उसने ब्रिटिश अनुदार दल को इस बात का कायल कर दिया कि द्वैध शासन प्रणाली अव्यावहारिक थी ।[14]

जब साइमन कमीशन की नियुक्ति की गयी तब व्यवस्था खराब थी, तभी पंडित मोतीलाल नेहरू ने कहा -

"We are fast settling to the condition of 20 years ago. I think there can be no greater mistake for the country than appointment of a Royal Commission on reforms at this juncture"[15]

ब्रिटिश सरकार ने साइमन कमीशन की नियुक्ति करने का निर्णय निर्धारित

---

13. पी० आर० जैन, नेशनल मूवमेंट आफ इंडिया कॉस्टीट्यूशन, पृष्ठ - 96

14. वही, पृष्ठ - 98 ।

15. नेहरू पेपर्स- मोतीलाल नेहरू सीरिज, मोतीलाल नेहरू से जवाहर लाल नेहरू को पत्र, दिनांक 14-4-1927 ।

ब्रिटिश सरकार ने साइमन कमीशन की नियुक्ति करने का निर्णय निर्धारित समय से 2 वर्ष पूर्व ही सन् 1927 में कर लिया और नवम्बर 1927 में इसकी नियुक्ति की घोषणा कर दी। ऐसा क्यों किया गया इसके लिए यह अनुमान लगाया जाता है कि इस सुधार कानून 1919 का भारतवासियों ने प्रारम्भ से ही तीव्र विरोध किया था। इसकी समाप्ति तथा इसके स्थान पर नये कानून के निर्माण की माँग निरन्तर प्रबल होती जा रही थी।[16] सन् 1919 के सुधार अधिनियम के प्राविधानों के अन्तर्गत नियुक्त किये गये इस संसदीय आयोग को साइमन कमीशन इसलिए कहा जाता है कि इसके अध्यक्ष का नाम सर जॉन साइमन था। इस कमीशन में अध्यक्ष सहित कुल 7 सदस्य थे जो कि सभी अँग्रेज ने इस कमीशन की सबसे बड़ी कमी यही थी। इसी के कारण भारतीय जनता के प्रत्येक वर्ग ने इसकी नियुक्ति को देश का सबसे महान् अपमान समझा और विविध स्थानों पर इसके प्रति विरोधप्रकट किया जाने लगा।[17]

ताराचन्द्र ने लिखा है -

" ब्रिटिश संसद के सात सदस्यों की इस "पूर्णत: प्रबुद्ध ज्यूरी" (exceptionally intelligent jury) से यह आशा की गयी थी कि वह संसद को एक ऐसी समस्या पर सलाह दे जो कि अत्याधिक जटिल

---

16. डी०सी० चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉन्स्टीट्यूशनल डेवलेपमेन्ट, पृष्ठ - 113।

17. वही, पृष्ठ - 114।

तथा ऐतिहासिक दृष्टि से विश्वव्यापी महत्व की थी ।[18] डी० ई० वाचा जैसे अखिल भारतीय नरम नेताओं ने कमीशन के खिलाफ एक घोषणा पत्र निकाला । कांग्रेस के अतिरिक्त भारत के सभी राजनैतिक दलों के प्रतिनिधियों ने घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किये । मिस विल्किन्सन ने तो यहाँ तक कह डाला कि अमृतसर काण्ड के पश्चात् ब्रिटिश सरकार के किसी भी कार्य की भारत में इतनी अधिक तीव्र निन्दा नहीं हुई, जितनी की साइमन कमीशन की नियुक्ति की ।[19] इसी के साथ कांग्रेस के ध्येय की भी एक पृथक प्रस्ताव द्वारा परिभाषा दी गई । इसके अनुसार यह कहा गया कि " यह कांग्रेस उद्घोषित करती है कि भारतीय जनता का लक्ष्य पूर्ण राष्ट्रीय स्वतंत्रता है।[20]

सन् 1928 का वर्ष प्रारम्भ हुआ तो देश के राजनैतिक वातावरण में साइमन कमीशन की नियुक्ति के कारण सरकार के प्रति रोष ही शेष विद्यमान था । देश कमीशन के बहिष्कार में जी जान से लगा हुआ था । 2 फरवरी, 1928 को वाइसरॉय ने अपनी घोषणा करके मानो भारतीयों को चुनौती दे दी, और 3 फरवरी 1928 को साइमन कमीशन बम्बई में आकर उतरा । उस दिन सम्पूर्ण भारत में हड़ताल मनायी गई और कमीशन के बहिष्कार का श्री गणेश कर दिया गया । अखिल भारतीय हड़ताल

---

18. डी०सी० चतुर्वेदी, इण्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कान्स्टीट्यूशनल डेवलेपमेन्ट, पृष्ठ - 115 ।

19. बी० पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 309

20. वही, पृष्ठ - 312 ।

के अतिरिक्त 3 फरवरी 1928 को कोई और मार्के की घटना नहीं हुई । -- विरोधी प्रदर्शनों द्वारा साइमन कमीशन का विराट् स्वागत हुआ और " Go Back Simon " साइमन वापस लौट जाओ " के झण्डे तथा तख्ते दिखाये गये । - - लखनऊ में भी कमीशन के आने वाले दिन निशस्त्र और शान्त भीड़ पर पुलिस ने कई बार जान बूझकर एंव अकारण डन्डे बरसाये । युक्त प्रान्त की पुलिस ने तो पंडित जवाहर लाल नेहरू तक को नहीं छोड़ा ।[21]

10 जनवरी, 1928 को युक्तप्रान्तीय लिबरल एसोसिएशन के माध्यम से अली इमाम की वक्तृता इसी सन्दर्भ में हुई । उनका विश्वास था कि भारत को साम्राज्य के साथी के रूप में अपने भाग्य निर्णय करने के अवसर पर बोलने का पूर्ण अधिकार है । 1919 के सुधारों में कोई ऐसा नियम नहीं था कि जिससे साइमन कमीशन में भारतीय सदस्यों को सम्मिलित करने में रुकावट हो । साइमन कमीशन के कार्य में सुविधा के लिए विभिन्न व्यवस्थापिका सभाओं की समितियाँ नियुक्त की गयी थीं । परन्तु अली इमाम को सन्देह था कि उन समितियों को साइमन कमीशन के समान अधिकार दिया जायेगा । कोई भी देश अपने आत्मसम्मान पर इस प्रकार का आघात सहन नहीं कर सकता । नरमदलीय नेता आज अपने को उस मार्ग पर खड़ा देख पाते थे जहाँ उनके समस्त सिद्धान्त , नीति, साम्राज्य प्रेमी सभी उसका

---

21. बी० पट्टाभिसीतारमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 315 ।

साथ देने से इन्कार कर रहे थे। वे प्रारम्भ से ही असहयोग के विरोधी थे, परन्तु आज उसी असहयोग के माध्यम से आत्मभिव्यक्ति के लिए वह बाध्य थे। और इसी परिस्थिति के लिए वही सरकार उत्तरदायी थी जिसकी गौरवगाथा उनकी समस्त नीतियों की नींव थी। इसीलिए अली इमाम ने अंतिम निर्णयात्मक घोषणा इस प्रकार की -

" Tell us distinctly and clearly whether or not, after this enormous volume of expression of opinion that has gone out from this country, you will modify your scheme. If you do not modify, it do not blame us because we can not accept it as it is. It is not only our self respect standing against it, but our political future is involved in it"

सभा में उपस्थित पंडित जवाहर लाल नेहरू ने इस तथ्य पर सन्तोष प्रकट किया कि एक घटना विशेष ने कांग्रेस तथा नम्रदलीय नेताओं को एक दूसरे के निकट लाकर दोनों की अभिव्यक्ति के लिए एक मंच प्रस्तुत किया है।[22]

दूसरी तरफ मुसलमानों का एक वर्ग भी साइमन कमीशन का विरोधी था। वह अपने विचारों को प्रचारात्मक स्वरूप देने को भी तत्पर था। सैयद

---

22. लीडर - समाचार पत्र, 12 फरवरी सन् 1928 ।

ज़हूर अहमद इस वर्ग में अग्रणी थे । नगर के मुसलमानों को सम्बोधित करते हुए एक घोषणापत्र प्रकाशित किया गया था जिसमें उनको बहिष्कार से पूर्णतः विलग रहने का परामर्श दिया गया था ।[23] छल कपट से अवरूद्ध इलाहाबाद की श्वाँस को प्राण देने का कार्य इसी साइमन कमीशन द्वारा संपादित हुआ । भारत का राजनैतिक सागर जो कि अभी तक शान्त था, पुनः उत्साह की तरंगों से आन्दोलित होने लगा । मद्रास के कांग्रेस अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता के सम्बन्ध में प्रस्ताव पारित हुआ । साइमन कमीशन के बहिष्कार करने का निर्णय लेने के साथ भारत के लिए संविधान रचना के ध्येय से एक सर्वदलीय सम्मेलन की घोषणा की गई । यह निर्णय पुनर्जागरण का प्रतीक था । ऐसा प्रतीत होने लगा था कि चेतना देशवासियों को पुनः अग्रसित कर रही है । और यह देश के समस्त दलों की मनोवृत्ति से परिलक्षित हो रहा था ।

इलाहाबाद ने मद्रास कांग्रेस के प्रस्ताव को भलीभाँति कार्यान्वित करने के लिए तुरन्त उद्योग किया । 26 जनवरी को जिला कांग्रेस समिति की बैठक में कार्यक्रम की रूपरेखा बनी जिसमें जनवरी के अन्त तक लगभग 80,000 पुस्तिकाओं का वितरण, कांग्रेस के प्रस्ताव का अर्थ जनता में स्पष्ट करने के लिए मुहल्लों में सभाऐं, जिस दिन साइमन कमीशन बम्बई में पदार्पण

---

23. लीडर - समाचार पत्र, 2 फरवरी, सन् 1928 ।

करे उस दिन सार्वजनिक हड़ताल, जुलूस तथा सभा सम्मिलित थे। कांग्रेस की समिति द्वारा साइमन कमीशन के विरोध का प्रचार जारी रहा। सभाऐं आयोजित हुई, पुस्तिकाएं बिखरित हुई।

इलाहाबाद के विद्यार्थी भी साइमन कमीशन के विरोध में थे। हिन्दू छात्रावास, हालैण्ड, हॉल, म्योर छात्रावास आदि में प्रस्ताव पारित करके विरोध के प्रदर्शनो में भाग लेने का निश्चय किया गया।[24]

पहली जनवरी को सार्वजनिक सभा तथा दूसरी जनवरी को पंडित जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में विद्यार्थियों की एक सभा हुई जिसमें विद्यार्थियों ने 3 जनवरी को अध्ययन स्थगित करके दुकानदारों से हड़ताल मे भाग लेने का आग्रह करने का निर्णय लिया। विद्यार्थी समाज की मन:स्थिति के परिपेक्ष्य में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अधिकारियों का पहले घंटे के बाद विश्वविद्यालय बन्द कर देने का निर्णय अस्वाभाविक नहीं था।[25]

मुसलमानों का एक वर्ग साइमन कमीशन का बहिष्कार करने के विरूद्ध था। सैयद जुहूर अहमद ने एक घोषणा पत्र निकाला। घोषणापत्र पर मौलाना बिलायत हुसैन, शफात अहमद खॉ, हाजी मुहम्मद हुसैन, नगर महापालिका के कुछ मुसलमान सदस्यों के हस्ताक्षर थे। इसके उपरान्त 39 हिन्दू तथा मुसलमान दुकानदारों। इलाहाबाद के। तथा कटरा एवं कर्नलगंज के कुछ व्यक्तियों

---

24. लीडर-समाचार पत्र, 3 फरवरी सन् 1928।

25. वही, 4 फरवरी, सन् 1928।

के हस्ताक्षर युक्त एक सूचना प्रकाशित हुइ जिसमें 3 तारीख की हड़ताल में सम्मिलित न होने का निश्चय किया गया था । इस सूचना के पूर्व 2 अवैतनिक जिलाधीशों को उन दुकानदारों के निकट जाते देखा गया था ।[26]

3 फरवरी , 1928 के प्रदर्शनों में विद्यार्थियों ने बृहद् रूप से भाग लिया । वह दुकानदारों से अपनी दुकानें न खोलने का आग्रह करते हुए पाये गये । प्रातःकाल से ही विद्यार्थियों के समूह सीनेट हॉल, इलाहाबाद विश्वविद्यालय तथा विभिन्न छात्रावासों के सम्मुख विद्यार्थियों को अपने अध्ययन कक्षों में जाने से विरत कर रहे थे । नगरमहापालिका का ऑफिस भी बन्द था ।

पंडित जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में सन्ध्या के समय भारद्वाज आश्रम से जुलूस प्रारम्भ हुआ । यह सभा इलाहाबाद की प्रतिनिधि सभा थी जिसमें नम्रदलीय नेता भीउपस्थित थे । इस सभा के अध्यक्ष तेज बहादुर सप्रू स्वयं थे । वास्तव में साइमन कमीशन से न तो स्वराज्य पार्टी के नेता सन्तुष्ट थे और न ही नम्र दल के नेता । साइमन कमीशन के विरूद्ध सबसे गम्भीर आरोप था कि उसमें केवल अभारतीयों को सम्मिलित किया गया था । 30 करोड़ भारतीयों में से 10-12 व्यक्ति भी इस कार्य के योग्य उन्हें प्रतीत नहीं हुए थे । यह बुद्धि से परे की वस्तु थी । अतः सी0 वाई0 चिन्तामणि ने यह प्रस्ताव

---

26. लीडर - समाचार पत्र, 4 फरवरी, सन् 1928 ।

प्रस्तुत किया -

"This meeting of the citizens of Allahabad places on record its condemnation of the appointment of statutory commission in utter disregard of Indian opinion and its firm resolve to have nothing to do with that commission in any form and at any stage of its work".

इसी प्रस्ताव के द्वारा केन्द्र तथा प्रान्तों के समस्त निर्वाचित सदस्यों से साइमन कमीशन के कार्य में किसी भी रूप में भागीदार न होने की याचना की गयी ।[27]

9 जुलाई, 1928 को जब सम्मेलन आरम्भ हुआ तब पंडित मदनमोहन मालवीय, अली इमाम, तेजबहादुर सप्रू, सच्चिदानन्द सिन्हा, डाक्टर अन्सारी मौलाना अबुल कलाम आजाद, सी०वाई० चिन्तामणि, कुरैशी, शेरवानी, सुभाषचन्द्र बोस, और सरदार मंगलसिंह, पंडित जवाहर लाल नेहरू आदि देश के सभी प्रमुख नेता सम्मिलित थे । इस सम्मेलन का परिणाम स्वयं पंडित मोतीलाल नेहरू के शब्दों में प्रकट हुआ है । मोतीलाल नेहरू ने महात्मा गांधी को सूचना देते हुए लिखा :-

---

27. लीडर- समाचार पत्र, 6 फरवरी सन् 1928 ।

"I am at last able to say tnat some kind of unanimity has been arrived at as to the report of the committee. It is neither complete nor of the genuine type but something we can stand for both in the all parties conference and the country at large"[28]

पंडित जवाहर लाल नेहरू तथा सुभाषचन्द्र बोस स्वतंत्रता के पक्ष के नेता थे, जिन्होंनें पूर्ण स्वतंत्रता लीग की स्थापना करके अपनी वैचारिक दृढ़ता शक्ति का परिचय दिया। उन्होंनें कार्यकारिणी परिषद से त्यागपत्र दे दिये थे, जिन्हें कार्यकारिणी ने स्वीकार नहीं किया। कार्यकारिणी का यह कथना था कि उन्हें लीग का कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता होगी। वास्तव में इस मतभेद से कांग्रेस के वरिष्ठ नेता उनकी आकृत्रिम राष्ट्रीयता के कारण चिन्तित नहीं थे। पंडित जवाहर लाल नेहरू स्वतंत्रता के समर्थक होते हुए भी इस सर्वदलीय रिपोर्ट को अधिकाधिक सफल बनाने के लिए प्रयत्नशील थे। अत: पंडित मोतीलाल नेहरू ने श्रीमती एनी बेसेन्ट को लिखे अपने एक पत्र में अपना विश्वास प्रकट किया -

---

28. नेहरू पेपर्स - मोतीलाल नेहरू सीरिज। मोतीलाल नेहरू से महात्मा गांधी को पत्र, दिनांक 11-7-1928, जी-1 ।

" I have no fear from this group which have at their head an earnest patriotism always willing to look at the other side of the shield"[29]

पंडित मोतीलाल नेहरू ने संविधान को निर्मित करने का कार्य पंडित जवाहर लाल नेहरू की सहायता से किया जिसमें तेजबहादुर सप्रू भी सहायक सिद्ध हुए । नेहरू रिपोर्ट ब्रिटिश सरकार को उचित प्रत्युत्तर तथा पंडित मोतीलाल नेहरू के लिए एक महान राजनैतिक उपलब्धि थी । महात्मा गाँधी ने भी नेहरू रिपोर्ट को महान तथा सफल माना था । नेहरू रिपोर्ट को सभी दलों का तो नहीं बहुमत का समर्थन तो प्राप्त हो ही गया था ।

इलाहाबाद ने नेहरू रिपोर्ट का खुलकर स्वागत किया । 25 अगस्त, 1928 को म्योर छात्रावास द्वारा सी० वाई० चिन्तामणि के नेतृत्व में आयोजित नेहरू रिपोर्ट पर वाद-विवाद सभा में म्योर छात्रसंघ के मंत्री ने निम्न प्रस्ताव पारित किया -

" This Hostel accords its full support to the recommendations of the Nehru committee"

---

29. नेहरू पेपर्स- मोतीलाल नेहरू सीरिज । मोतीलाल नेहरू से श्रीमती एनी बेसेन्ट को पत्र, बी- 7 ।

पी0 एन0 सप्रू ने इस तथ्य पर सन्तुष्टि प्रकट की कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय के मुसलमान छात्रों ने नेहरू रिपोर्ट का समर्थन करके अपने शीर्षस्थ नेताओं से अधिक दूरदर्शिता तथा सद्व्यवहार का परिचय दिया है । सर्वाधिक प्रशंसनीय तथ्य तो यह था कि नेहरू रिपोर्ट प्रकाशित करके ब्रिटिश चुनौती का उत्तर दिया जा सकता था ।[30] दूसरा एक उल्लेखनीय निर्णय जो सम्मिलित निर्वाचन के रूप में स्वीकृत हुआ था, कांग्रेस को एक बार फिर सही मार्ग की ओर अग्रसर करने में समर्थ था । नेहरू रिपोर्ट ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया था कि पृथक निर्वाचन स्वयं अल्पसंख्यकों के लिए हानिकारक था । उनकी सीट निश्चित कर बहुसंख्यक अपने को अन्य समस्त उत्तरदायित्व से मुक्त कर लेते हैं । पृथक निर्वाचन में अल्पसंख्यकों को सदैव बहुसंख्यकों के बैरभाव का सामना करना पड़ता है और अपनी ऐसी परिस्थितियों में साम्प्रदायिकता को लाभ सदैव होता है । इन विभिन्न उल्लेखनीय तथ्यों के आधार पर इस प्रकार की बहुमति, प्राप्त राजनैतिक रिपोर्ट का प्रस्तुतिकरण जो वर्षों से विलग साथियों को एक दूसरे के निकट लाने में प्रयत्नशील हुई थी, सर्वाधिक प्रशंसनीय तत्व था ।[31]

युक्त प्रान्तीय लिबरल एसोसियेशन का उत्साह इस ओर सीमातीत था । 25 अगस्त सन् 1928 की सभा में नेहरू रिपोर्ट का उसने सर्वसम्मति से समर्थन किया । लखनऊ कान्फ्रेंस में भेजने के लिए प्रतिनिधि भी निर्वाचित

---

30. लीडर- समाचार पत्र, 16 अगस्त सन् 1928 ।
31. वही, 27 अगस्त, सन् 1928 ।

किये ।[32]

8 सितम्बर सन् 1928 को पुनः तेज बहादुर सप्रू की अध्यक्षता में एक सभा आयोजित हुई जिसमें तेज बहादुर सप्रू ने कहा कि औपनिवेशिक पद की प्राप्ति ऐसा ही उद्देश्य था जो विभिन्न वर्गों का समर्थन प्राप्त कर सकता था । उनका यह भी विश्वास था कि इससे अधिकांश देशवासी सन्तुष्ट हैं । उनका यह उद्देश्य देश के लिए पूर्ण स्वतंत्रता से अधिक उन्नति का क्षेत्र सिद्ध होगा ।[33]

शफात अहमद खाँ ने साइमन कमीशन का बहिष्कार न करने वाले मुसलमान वर्ग के प्रस्ताव घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किये थे । शफात अहमद खाँ के इस प्रकार के प्रचार में रूचि लेने के कारण स्वयं विश्वविद्यालय के अधिकारी असन्तुष्ट हो गये । विश्वविद्यालय की महासमिति की आगामी बैठक में शफात अहमद खाँ के विरूद्ध कुछ प्रस्ताव करने का निश्चय किया गया था । इच्छुक प्रस्तुतकर्ताओं में कैलाशनाथ काटजू, पी० एन० सप्रू तथा नानकचन्द्र मुख्य थे । प्रत्येक प्रस्ताव में शफात अहमद खाँ द्वारा राजनैतिक तथा साम्प्रदायिक प्रचार में भाग लेने पर असंतुष्टि तथा उनके द्वारा विद्यार्थियों तथा विश्वविद्यालय पर समग्र रूप से पड़ने वाले कुप्रभाव के प्रति चिन्ता व्यक्त की गयी थी ।[34]

---

32. लीडर- समाचार पत्र, 28 अगस्त, सन् 1928 ।
33. वही, 13 सितम्बर, सन् 1928 ।
34. वही, 28 अक्टूबर सन् 1928 ।

सन् 1928 के अधिवेशन की समाप्ति के पश्चात महात्मा गाँधी ने पंडित जवाहर लाल नेहरू को तुरन्त प्रचार कार्य में लग जाने की अनुमति दे दी । यह स्पष्ट था कि सरकार द्वारा भारत को औपनिवेशिक पद देने में वह स्वयं ही विश्वास करने में असमर्थ थे । जनवरी, 1929 को वाइसरॉय लार्ड इर्विन ने इस अविश्वास को यथार्थ रूप भी दिया जो कांग्रेस कार्यकर्ताओं को अपने निश्चित कार्य को तुरन्त प्रारम्भ कर देने का निर्देश था । पंडित जवाहरलाल नेहरू ने यद्यपि कार्यकर्ताओं की कमी अनुभव की, तथापि उनके कार्य में गतिरोध नहीं हुआ । उधर पंडित मोतीलाल नेहरू कौंसिल से निराशा हो चले थे । वैधानिक साधनों से प्रगति की सम्भावना का विश्वास अर्थविहीन प्रतीत होने लगा था । अब वह मुक्ति के अवसर की प्रतीक्षा में थे । कार्यकारिणी ने सभी व्यवस्थापिका सभाओं से पृथक होने का निश्चय कर लिया था - इस निर्णय पर विचारार्थ 26 जुलाई को इलाहाबाद में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक प्रारम्भ हुई । उसके दूसरे दिन की बैठक का प्रमुख प्रस्ताव महात्मा गाँधी के द्वारा प्रस्तुत हुआ, जिसका आश्रय कांग्रेस की निर्धारित नीति का स्पष्टीकरण था । प्रस्ताव ने यह सूचना दी कि -

" देश की साधारण स्थिति को देखते हुए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी को इस बैठक की यह राय है कि अब समय आ गया है कि सारा राष्ट्रीय उद्योग देश को 31 दिसम्बर 1929 के बाद अहिंसात्मक आन्दोलन

का संग्राम छेड़ने के लिए तैयार करने में लगा देना चाहिए । और यह कार्य समिति इस बात से सहमत है कि संग्राम को जारी रखने के लिए केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सभी कौंसिलों के कांग्रेसी सदस्यों को इस्तीफा दे देना चाहिए । परन्तु कौंसिल के अधिकांश सदस्यों की प्रकट की हुई राय का ख्याल करके यह कमेटी निश्चय करती है कि कौंसिल छोड़ने का प्रश्न लाहौर में होने वाली कांग्रेस तक टाल दिया जाये ।

परन्तु इसी के साथ किसी भी समय आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त कौंसिल त्याग का संकेत भी दिया गया । प्रस्ताव से यह स्पष्ट होता है कि आसन्न युद्ध की ध्वनि नेताओं के मन-मस्तिष्क को निरन्तर सजग बना रही थी । युद्ध भेरी बजने पर वह अपने देश को सुदृढ़ नेतृत्व देने तथा स्वयं देश को युद्ध के लिए एकताबद्ध बनाने में सफल रहे । महात्मा गाँधी ने संगठन तथा ऐक्य के तर्कों के आधार पर ही इस प्रस्ताव को स्वीकृत करने की प्रार्थना की थी । यह निश्चित था कि यदि लाहौर कांग्रेस में पूर्ण स्वतंत्रता का जयघोष कर दिया गया तो कौंसिल की कोई आवश्यकता नहीं रह जायेगी, परन्तु शत्रु को भयभीत करने के लिए केवल युद्ध घोषणा ही पर्याप्त नहीं हैं, उसके पीछे दृढ़ शक्ति का होना भी अनिवार्य है । यह प्रस्ताव उसी शक्ति की प्राप्ति का साधन था ।[35] 25 जुलाई सन् 1929 को पंडित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में प्रान्तीय कांग्रेस समिति ने भी कांग्रेस के सदस्यों को कौंसिल से सम्बन्ध-विच्छेद

---

35. अभ्युदय- समाचार पत्र, 3 अगस्त, सन् 1929 ।

का आदेश दिया था ।[36]

कांग्रेस को विद्रोह करने के लिए तैयार देखकर लार्ड इर्विन ने कांग्रेस की माँग पर विचार करने की इच्छा प्रकट की । इंग्लैण्ड की संसद में भी इस विषय पर वाद-विवाद हुआ । नम्रदलीय नेताओं ने, जो किसी भी प्रकार से राष्ट्र को अग्नि पथ का राही होने से रोकना चाहते थे इस घोषणा को अपनी सिद्धि का साधन बनाया था । दिल्ली में नेताओं के घोषणापत्र में परिवर्तित परिस्थिति के अनुसार कांग्रेस की नीति में परिवर्तन की स्वीकृति थी । इसके पश्चात् इलाहाबाद मे सर्वदल सम्मेलन हुआ । 18 नवम्बर सन् 1929 को पंडित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में सम्मेलन आनन्द भवन में प्रारम्भ हुआ । तेज बहादुर सप्रू ने उदार दल की स्थिति स्पष्ट करते हुए उदार दृष्टिकोण सर्वदा ध्यान में रखने की प्रार्थना की । गोलमेज परिषद के पूर्व ही समस्त माँगों की पूर्ति चाहना वाइसराय तथा मजदूर सरकार के प्रति अन्याय होगा । महात्मा गाँधी का विचार था कि अभी तक यह कहा नहीं जा सकता कि लाहौर कांग्रेस का निर्णय क्या होगा ? अतः तब तक यथास्थिति बनाये रखने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए । अतः सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव के द्वारा दिल्ली वक्तव्य का समर्थन कर दिया गया । इसी दिन हुई कार्यकारिणी की बैठक ने भी इसी निर्णय का समर्थन किया ।[37] इलाहाबाद जनपद के लिए

---

36. अभ्युदय - समाचार पत्र, 27 जुलाई, सन् 1929 ।
37. वही, 23 नवम्बर , सन् 1929 ।

लाहौर कांग्रेस के लिए पंडित जवाहरलाल नेहरू का चुनाव स्वर्णिम अवसर लेकर आया । पंडित जवाहरलाल नेहरू के माध्यम से सम्पूर्ण राष्ट्र का नेतृत्व करने का गौरव इलाहाबाद का प्राप्य बना । इस अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता की घोषणा होने के कारण संघर्ष की परिस्थितियाँ अनिवार्य हो गईं । 6 जनवरी , सन् 1930 को इलाहाबाद से प्रेषित सरकुलर नम्बर- 1 पी 11, 4574 ने कांग्रेस सदस्यों को समस्त केन्द्रीय तथा प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओं से त्यागपत्र देने का आदेश दिया । इसके साथ ही संगठन की शक्ति की वृद्धि के लिए स्वयंसेवकों की नियुक्ति, भर्ती, सार्वजनिक सभाओं का आयोजन तथा 26 जनवरी, सन् 1930 के राष्ट्रीय दिवस को उत्साह सहित सम्पन्न करने के स्पष्ट निर्देश सरकुलर में थे ।[38]

इलाहाबाद में 26 जनवरी, सन् 1930 के स्वतंत्रता दिवस का उमंगभरा स्वागत हुआ । लगभग समस्त छात्रावासों पर राष्ट्रीय ध्वज फहराया गया सन्ध्या के जुलूस के उपरान्त सभा आयोजित हुई । कार्य-कारिणी ने महात्मा गाँधी को अपनी इच्छानुसार सत्याग्रह प्रारम्भ करने का अधिकार दे दिया था । 26 फरवरी को युक्त प्रान्तीय कान्ग्रेस समिति में गणेश शंकर विद्यार्थी की अध्यक्षता में इलाहाबाद में कार्यकारिणी के निर्णय का समर्थन करते हुए प्रान्त में उचित स्थानों में सत्याग्रह प्रारम्भ करने का निर्देश दिया गया । समस्त जिला कांग्रेस समितियों को सत्याग्रह के लिए विशेष

---

38. ए०आई०सी०सी० सरकुलरस् पी-1, सन् 1930 ।

स्थानों को चुन लेने के लिए कहा गया प्रारम्भ से ही पंडित जवाहरलाल नेहरू की आर्थिक नीति से प्रवाहित होकर किसानों को सहभागी बनाने का निश्चय कांग्रेस समिति ने किया । बढ़ती हुई मालगुजारी को न देकर सत्याग्रह के लिए किसानों को तत्पर हो जाने का सन्देश तुरन्त दे दिया गया । समिति के इस निश्चय के प्रतिकार स्वरूप समस्त जिला अधिकारियों को नमक कानून के अन्तर्गत विशेष अधिकार प्रदान कर दिये गये ।[39]

इस समय वातावरण तनावपूर्ण बन गया था । इसी समय पंडित मोतीलाल नेहरू ने रंगास्वामी अयंगर को लिखा -

" As you know I am in the thick of fight and anything might happen to me at any moment. I do not in the least mind what it is going to be. I have sown tne wind and am prepared to reap the whirlmind"[40]

पंडित जवाहर लाल नेहरू को सरकार ने अधिक दिनों तक आन्दोलन का संचालन करने का अवसर नहीं दिया । 14 अप्रैल, 1930 को पंडित जवाहर लाल नेहरू बन्दी बना लिये गये । उनके पश्चात् भी इलाहाबाद पंडित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में देश का नेतृत्व करता रहा ।

---

39. अभ्युदय- समाचार पत्र, । मार्च सन् 1930 ।

40. नेहरू पेपर्स- मोतीलाल नेहरू सीरिज । पंडित मोतीलाल नेहरू से रंगास्वामी अंयगर को पत्र, दिनांक - 10-3-1930 , 1-9 ॥41

नमक कानून के पश्चात् विदेशी वस्त्र का बहिष्कार आन्दोलन कारियों का द्वितीय प्रमुख आकर्षण था । खादी का प्रयोग अधिकाधिक किया जाने लगा । धरना देने का भार अधिकांशत: महिला समाज ने स्वयं ले लिया था । 28 अप्रैल को प्रात: से ही श्रीमती कमला नेहरू, कृष्णा नेहरू, प्रभावती आदि ने स्वयं सेविकाओं के रूप में धरना प्रारम्भ किया । मध्यान्ह के समूह में उमा नेहरू, विजय लक्ष्मी पंडित के साथ अन्य महिला स्वयं सेविकायें भी कार्यरत रहीं । महात्मा गांधी गिरफ्तार कर लिये गये, उन्हीं की गिरफ्तारी के साथ इलाहाबाद में विद्यार्थी आन्दोलन का सूत्रपात हुआ ।[41]

परन्तु इससे पूर्व निर्णयानुसार सत्याग्रह के लिए इलाहाबाद को तैयार रखने का अभियान प्रारम्भ हुआ था । 15 मार्च, सन् 1930 को युक्त प्रान्तीय कांग्रेस समिति ने गणेश शंकर विद्यार्थी, श्री प्रकाश, श्री कृष्ण दत्त पालीवॉल, पंडित जवाहरलाल नेहरू, रजी अहमद किदवई की एक समिति को जिले के किसी भी एक भाग में सत्याग्रह प्रारम्भ करने का अधिकार दे दिया । बिना लाइसेन्स नमक बनाकर नमक कानून को भंग करने का आव्हान किया गया । सत्याग्रह समिति को यह अधिकार दे दिया गया कि वह हर सम्भव स्थानों पर मालगुजारी तथा लगानबन्दी आन्दोलन प्रारम्भ करें । आन्दोलन में व्यय करने के लिए सत्याग्रह फण्ड खोला गया । समस्त सब जिला तथा नगर

---

41. लीडर - समाचार पत्र, 30 अप्रैल, 1930 ।

समितियों को यह सूचना दी गई कि अप्रैल में सत्याग्रह प्रारम्भ किया जायेगा अत: समस्त समितियाँ कम से कम 200 स्वंयसेवकों को इस कार्य के लिए तैयार रखें । प्रारम्भ में केवल वैधानिक कानून भंग का प्रयोग करके सरकार को दमन करने हेतु उद्यत करना नेताओं का ध्येय था ।[42]

अप्रैल के प्रथम सप्ताह में आन्दोलन का प्रारम्भ राष्ट्रीय सप्ताह के साथ हुआ । 10 अप्रैल, सन् 1930 को ।। स्वयं सेवकों ने नमक कानून भंग करने का समारोह सम्पन्न किया । उसी दिन पंडित जवाहर लाल नेहरू ने सरकुलर नम्बर 35 में समस्त कांग्रेस समितियों को लिखा -

" I would suggest, however, that the time has come when we should call for wide-scale manufacture of contraband salt......It is, therefore, desirable that instead of having selected areas when Satyagrah is offered, and where the police usually comes in force and prevents manufacture, we should have large number of such places in each district and Tahsil"[43]

महात्मा गाँधी की गिरफ्तारी के साथ ही इलाहाबाद में विद्यार्थी आन्दोलन का सूत्रपात हुआ । 5 मई सन् 1930 को विद्यार्थी समुदाय

---

42. ए०आई० सी० सी० सरकुलरस् पी-1, 1566 ।

43. ए० आई० सी० सी० सरकुलरस् 10.4.1930, पी-1/ 1903

की ओर से पद्मकान्त मालवीय तथा मदन मोहन उपाध्याय ने यह घोषणा की कि 6 मई सन् 1930 को विद्यार्थी हड़ताल करेंगें ।

इलाहाबाद के मॉडन स्कूल में इसी सम्बन्ध में धरना शुरू हुआ । स्वराज्य भवन में इलाहाबाद में पंडित विजय लक्ष्मी पंडित की अध्यक्षता में एक विद्यार्थी सभा हुई , जिसमें विद्यार्थी संघ " का संगठन किया गया 8 मई सन् 1930 को मॉडर्न स्कूल को बन्द कर दिया गया । पद्मकान्त मालवीय विद्यार्थी आन्दोलन का संचालन करने हेतु अपराध के लिए दंडभागी बने । सरकार ने यह आदेश प्रसारित किया कि केवल वे विद्यार्थी ही स्कूल में प्रवेश पा सकेगें जो कि अपने शिक्षाकाल में राष्ट्रीय बिल्ले लगाकर स्कूल नहीं जायेगें । परिणामस्वरूप अब यह आन्दोलन समस्त विद्यार्थी वर्ग में प्रसारित हो गया । पंडित मदन मोहन मालवीय ने कहा कि हिन्दू विश्वविद्यालय के द्वारा ऐसे विद्यार्थियों के लिए सदैव खुले रहेगें । आन्दोलन को रचनात्मक रूप देने के लिए मुट्ठीगंज में " इलाहाबाद हाईस्कूल " खोला गया ।

इस प्रकार से अब यह आन्दोलन अपने द्वितीय चरण में प्रवेश कर रहा था । वैधानिक कानून भंग से साम्राज्य की गौरव हानि के बाद सरकार की आर्थिक हानि आन्दोलनकारियों का लक्ष्य बन गई । 2मई, 1930 को पंडित मोतीलाल नेहरूद्वारा प्रेषित सरकुलर इसी लक्ष्य पर संकेत देता है -

" we have now popularixed such breaches and the obvious next step is to concentrate upon areas wh re salt can be produced on commercial lines and to manufacture large quantities". [44]

मई, सन् 1930 में मौलना अबुल कलाम आजाद ने डेराशाह अजमल में इलाहाबाद के मुसलमानों की एक सभा आयोजित की । जिसमें मुसलमानों की एक संख्या संगठित हुई । जिसका ध्येय भारत की स्वतंत्रता के लिए प्रयास करना था । अब्दुल मजीद मंजरअली सोख्ता आदि राष्ट्रीय मुसलमानों की स्वतंत्रता युद्ध से सहानुभूति प्रकट की गयी थी । इसके पूर्व विपरीत रंगों में आवेष्ठित एक अन्य सभा भी आयोजित हुई, जिसके संयोजकों में ज़ुहूर अहमद, मौलाना विलायत हुसैन, शफात अहमद खाँ आदि थे । सभा के प्रस्ताव का मुख्य अंश था।

"The meeting is strongly of opinion that in the present juncture no moslem shell take part until such time as the congress is prepared to accept such safegards for minority communities as are demanded by those communities"[45]

---

44. ए.आई.सी.सी. सरकुलरस पी-1, 2163 ।
45. लीडर- समाचार पत्र, 3 मई, 1930 ।

आन्दोलन को विस्तृत करने का निर्णय कार्यकारिणी को लेना था । 12 मई सन् 1930 को कार्यकारिणी की बैठक इसी उद्देश्य से इलाहाबाद में हुई । इस बैठक ने समस्त मोर्चे पर युद्ध छेड़ने का आदेश दे दिया था। बैठक के निदेशों कापालन करने के लिए इलाहाबाद में "स्वदेशी लीग" की स्थापना हुई, जिसकी प्रबन्धक समिति के सदस्यों को किसी भी प्रकार के वस्त्रों का क्रय न करने समस्त सार्वजनिक अवसरों तथा वकीलों द्वारा न्यायालयों में हाथ के कते सूत से निर्मित, खद्दर का व्यवहार, विदेशी वस्तुओं के न्यूनतम सम्भव प्रयोग तथा विदेशी वस्तुओं के व्यवहार की शपथ लेनी पड़ती थी ।[46]

जुलाई सन् 1930 में आन्दोलन बहिष्कार सप्ताह के रूप में मनाया गया । इसी बार आन्दोलन का संचालन करने के लिए स्थानीय संचालकों की नियुक्ति का नियम बनाया गया था । बहिष्कार सप्ताह उमा नेहरू के संचालन में सम्पन्न हुआ । 22 जुलाई सन् 1930 को एक सार्वजनिक सभा हुई । सप्ताह का तृतीय दिवस " विद्यार्थी दिवस " था । इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने उस दिन हिन्दू छात्रावास में सभा की तथा सीनेट हॉल तथा अन्य छात्रावासों पर राष्ट्रीय ध्वज फहराए । सप्ताह का चतुर्थ दिवस मुख्यत: मुसलमानों से सम्बन्धित था । प्रान्तीय संचालक मंजर अली

---

46. लीडर - समाचार पत्र, 21 मई, सन् 1930 ।

सोख्ता के नेतृत्व में इस दिवस का सार्वजनिक सभा द्वारा समापन हुआ ।[47]

अगस्त में, बम्बई, में पंडित मदन मोहन मालवीय की गिरफ्तारी के साथ ही इलाहाबाद का आन्दोलन अधिक उत्तेजक हो गया । 3 अगस्त के प्रदर्शनी को उस काल में इलाहाबाद द्वारा प्रस्तुत किया गया सबसे बड़ा राजनैतिक प्रदर्शन बताया गया था। पंडित मदन मोहन मालवीय इलाहाबाद द्वारा राष्ट्र को अर्पण किये गये गौरवमय नेताओं में से एक थे । अत: उनकी गिरफ्तारी पर इलाहाबाद का रोष स्वाभाविक था । बड़े पैमाने मे हड़ताल मनायी गई । खद्दर भंडार से प्रारम्भ हुए जुलूस में सम्मिलित होकर एक जुलूस भी मोतीपार्क पहुँचा । श्रीमती मदन मोहन मालवीय, ,श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, ख्वाजा अब्दुल मजीद, श्रीमती कमला नेहरू, कैलाश नाथ काटजू सभी उपस्थित थे ।[48]

इलाहाबाद के छात्र भी अपने भाग का कार्य करने में पीछे नहीं रहे । इलाहाबाद विश्वविद्यालय, कायस्थ पाठशाला, एग्लों बंगाली कॉलेज पर धरने दिये गये । पंडित मदन मोहन मालवीय की गिरफ्तारी के दूसरे दिन भी इलाहाबाद की हड़ताल पूर्ववत जारी एवम् सफल रही । 10 अगस्त सन् 1930 को युक्त प्रान्तीय कांग्रेस समिति ने अपनी बैठक में आन्दोलन के प्रति आशाजनक संतोष व्यक्त किया । चुनावों का समय समीप आ जाने के कारण कौंसिल बहिष्कार फिर से आकर्षण का केन्द्र बन गया । समस्त नगर

---

47. लीडर- समाचार पत्र, 25 जुलाई, सन् 1930 ।
48. वही, 6 अगस्त, सन् 1930 ।

समितियों से इस बैठक में बहिष्कार का वातावरण तैयार करने का आदेश दिया ।[49]

जिस प्रकार से जुलाई का आन्दोलन बहिष्कार सप्ताह के रूप में सामने आया, उसी प्रकार सितम्बर का आकर्षण स्वदेशी प्रस्ताव था । सप्ताह विद्यार्थी संघ कीतरफ से मनाया जा रहा था । प्रबंधक ने कुछ मुहल्लों में घर-घर जाकर राष्ट्रीय बिल्लों तथा ध्वजों के विक्रय, विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार तथा स्वदेशी के प्रयोग के अधिकाधिक लोगों के लिए नागरिकों को प्रतिज्ञाबद्ध किया । सन्ध्या के समय कीगई सभा में एक ऐसी संस्था के निर्माण का निश्चय हुआ जिसका मुख्य कार्य व्यापारियों से विदेशी वस्त्र के बहिष्कार से सम्बन्धित बात करना था । इस सप्ताह के अन्दर इलाहाबाद विद्यार्थी संघ के अनुसार 2,000 से अधिक व्यक्तियों ने स्वदेशी का व्यवहार करने की शपथ ली थी । जिले के ग्रामों में स्वदेशी का प्रचार करने के लिए विद्यार्थी संघ ने प्रचारक भी भेजे ।[50]

22 सितम्बर , सन् 1930 को स्वयंसेवकों की कान्फ्रेंस इलाहाबाद में सम्पन्न हुई , जिसमें इलाहाबाद के ग्रामों से विशाल संख्या में स्वयं सेवकों ने एकत्र होकर अपनी संगठन शक्ति का प्रदर्शन किया । बहिष्कार के विभिन्न विषयों पर जोर देते हुए कौंसिल बहिष्कार के सम्बन्ध में विशेष प्रस्ताव पारित हुआ ।[51]

---

49. लीडर- समाचार पत्र, 13 अगस्त , सन् 1930 ।
50. वही, 29 सितम्बर, 1930 ।
51. वही, 24 सितम्बर, सन् 1930 ।

अक्टूबर सन् 1930 में स्वयं सेवकों की कान्फ्रेंस पुनः हुई । अब तक पंडित जवाहर लाल नेहरू मुक्त हो चुके थे । अतः इस कान्फ्रेंस की अध्यक्षता पंडित जवाहरलाल नेहरू ने की । सरकार द्वारा पंडित जवाहर लाल नेहरू पर 2 महीने तक वक्तृता देने पर लगाया गया प्रतिबंध कान्फ्रेंस में भाषण देने से रोक न सका । कान्फ्रेंस का मुख्य प्रस्ताव-लगानबन्दी, आयकर, अतिरिक्त पुलिस का कर बन्द करने से सम्बन्धित थे । कान्फ्रेंस में सभी जिला कांग्रेस समितियों को अवैध घोषित होने के बाद भी कार्यरत रहने का आदेश दिया । लगानबन्दी आन्दोलन के लिए पंडित जवाहर लाल नेहरू के विचार में तीन बातें जरूरी थीं । सर्वप्रथम कम से कम 51% ग्राम निवासियों को कांग्रेस के सदस्यों में, द्वितीय-कांग्रेस की ओर से ग्रामों में पंचायत नियुक्त की जा चुकी हो, तृतीय ग्राम के कम से कम 75% व्यक्ति आन्दोलन में भाग लेने के लिए तत्पर हों ।

इलाहाबाद में स्वयं सेवकों की भर्ती का कार्य निरन्तर हो रहा था । केशव देव मालवीय, चन्द्रकान्त तथा अन्य कार्यकर्ता नगर के मुहल्लों में सभाऐं कर चन्दा एकत्र करने तथा स्वयंसेवक बनाने में प्रयत्नशील थे । नवम्बर से इस कार्य को और तीव्रगति से करने का निश्चय किया गया । नवम्बर में निश्चित हुआ कि विशाल संख्या में कांग्रेसी जुलूस एक मुहल्ले में प्रवेश करेगा और तब तक वहाँ पर रहेगा, जब तक सम्पूर्ण मुहल्ले में ठोस प्रचार न हो जाये । समस्त मुहल्लों में कांग्रेस समितियों का निर्माण होगा जो कांग्रेस के लिए निश्चित

संख्या में स्वयं सेवकों तथा सदस्यों का निर्माण करेगी 2 अब तक इलाहाबाद के समस्त मुख्य मुहल्लों में कांग्रेस आश्रम स्थापित हो चुके थे । इस अभियान का नेतृत्व केशवदेव मालवीय के हाथ में था ।[52]

महिलाओं का कार्य इस आन्दोलन में प्रारम्भ से ही उल्लेखनीय रूप से प्रशंसनीय था । अब इन्होंने अपना एक अलग संगठन " देश सेविका संघ " के नाम से बनाया था, जिसके विभिन्न-विभिन्न विभाग थे । उमा नेहरू विदेशी वस्त्र के बहिष्कार विभाग की, विजय लक्ष्मी पंडित मादक द्रव्यों के बहिष्कार विभाग की कृष्णा नेहरू महिला स्वयं सेवकों की प्रमुख चुनी गई । प्रभातफेरी का कार्यक्रम श्यामकुमारी नेहरू के नेतृत्व में सम्पन्न करने का निश्चय हुआ ।

श्रीमती कमला नेहरू इलाहाबाद कांग्रेस समिति की प्रधान थी । उन्होंने इलाहाबाद नगर के व्यापारियों को एक पत्र भेजकर विदेशी वस्त्रों पर कांग्रेस की सील लगाने का आदेश दिया और यह चेतावनी भी दी कि यदि 3 दिसम्बर सन् 1930 के पूर्व आदेश का पालन नहीं हुआ तो उनकी दुकानों पर धरना देना अवश्यम्भावी हो जायेगा । दुकानदारों की प्रवृत्तियों के गुप्त अध्ययन शैली अपनाकर कांग्रेस उन दुकानदारों की प्रवृत्तियों के गुप्त अध्ययन शैली अपनाकर कांग्रेस उन दुकानदारों का पता लगाने में समर्थ

---

52. लीडर-समाचार पत्र, 30 अक्टूबर, सन् 1930 ।

होती थी , जो गुप्त रूप से विदेशी वस्त्र मँगाते थे । कांग्रेस की उन गतिविधियों ने साँवल दास खन्ना को अपनी दुकान के विदेशी वस्त्र का सीलबन्द करने के लिए विवश कर दिया ।

उधर इलाहाबाद की स्वदेशी लीग नुमाइशों तथा बुलेटिनों के माध्यम से स्वदेशी का प्रचार कर रही थी । समय-समय पर 5,000 बुलेटिनों के मूल्य रहित वितरण की व्यवस्था की गई थी । एक स्वदेशी नुमाइश हिन्दू छात्रावास के छात्रों की ओर से आयोजित हुई । कांग्रेस के द्वारा उत्पन्न की गई इस हलचल ने सरकार को प्रतिक्रियात्मक कदम लेने को बाध्य कर दिया । अन्त में सन् 1908 के इण्डियन क्रिमिनल लॉ (संशोधित) के विभाग 16 के अन्तर्गत समस्त नगर कांग्रेस समितियाँ, बहिष्कार समितियाँ, सत्याग्रह समितियाँ, मुहल्ला आश्रम, युवक लीग आदि अनेक संस्थाएँ अवैध घोषित कर दी गईं ।[53]

महात्मा गाँधी की योजना सदैव उनकी अन्त: प्रेरणा से बनी है, मष्तिष्क के भावना-हीन, हानि-लाभ दर्शक तर्क से नहीं बनी है । उनका गुरू और मित्र उनका अन्त:करण ही रहा है। इसी को लॉयड जार्ज ने "सदियों की प्रगति का निचोड़ एक युग में निकालना" बताया है । इसी को भारतीय शब्दों में कहा जाये तो " हजारों वर्ष का काम बारह महीने में कर दिखाया । "

---

53. लीडर-समाचार पत्र, 3 नवम्बर, सन् 1930 ।

महात्मा गाँधी की दिव्य दृष्टि और शुद्ध विचार का लोहा सभी ने माना । नरमदल वालों तक ने नमक सत्याग्रह को भले ही बेहूदा और खतरनाक बताया हो, परन्तु महात्मा गाँधी की पवित्रता से वह भी इन्कार नहीं कर सके ।[54]

गोलमेज परिषद के अंतिम दिनों में उसके प्रतिनिधियों ने जो कि उस समय लन्दन में थे, एक ओर सरकार से और दूसरी ओर कांग्रेस के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित किया । इधर पंडित मोतीलाल नेहरू ज्यादा बीमार हो जाने के कारण अपने समय से कुछ समय पहले ही जेल से रिहा कर दिये गये । परन्तु 21 जनवरी सन् 1931 को इलाहाबाद में कार्य समिति की जो बैठक हुई उसमें ज्यादातर वही सदस्य थे जो असली सदस्यों की गिरफ्तारियों के बाद उनके स्थानापन्न हुए थे । इसलिए उन्होंनें असली सदस्यों की मूल कार्य समिति के अभाव में कोई कार्य करने में असमर्थता प्रकट की ।[55]

महात्मा गाँधी जेल से छूटते ही, पंडित मोतीलाल से मिलने के लिए इलाहाबाद चल दिये , जहाँ पर मोतीलाल नेहरू बीमार पड़े हुए थे । कार्यसमिति के सभी सदस्यों को भी वहीं बुलाया गया । वहीं स्वराज्य भवन में 31 जनवरी, सन् 1931 और 1 फरवरी सन् 1931 को कार्य समिति की बैठक हुई, जिसमें निम्न प्रस्ताव पास हुआ -

---

54. बी0 पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 363 ।
55. वही, पृष्ठ - 417 ।

" यह समिति विदेशी कपड़े के जिसमें विदेशी सूत से बना कपड़ा भी शामिल है, व्यापारियों और कांग्रेस कार्यकर्ताओं को स्मरण कराती है कि सर्वसाधारण की भलाई के लिए विदेशी कपड़े का बहिष्कार बहुत जरूरी है । इसलिए यह राष्ट्रीय हलचल का एक आवश्यक अंग है और उस वक्त तक ऐसा ही बना रहेगा, जब तक कि राष्ट्र को तमाम विदेशी कपड़ा और विदेशी सूत हिन्दुस्तान से बहिष्कृत कर देने की शक्ति प्राप्त न हो जाये, फिर ऐसा चाहे विदेशी कपड़े पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाकर किया जाय या प्रतिबन्धक तटकर लगाकर ।[56]

कार्य समिति के असली सदस्य 3 फरवरी तक इलाहाबाद ही रहे । पंडित मोतीलाल नेहरू की हालत दिन ब दिन खराब होती जा रही थी । उन्हें एक्सरे परीक्षण के लिए लखनऊ लाया गया महात्मा गांधी भी उन्हीं के साथ थे, जहां मौत से बड़ी कशमकश के बाद इन अन्तिम शब्दों के साथ पंडित मोतीलाल नेहरू हमसे विदा हो गये -

" हिन्दुस्तान की किस्मत का फैसला स्वराज्य भवन में ही कीजिए । मेरी ही मौजूदगी में फैसला कर लो । मेरी मातृभूमि के भाग्य निर्णय के आखिरी सम्मानपूर्ण समझौते में मुझे भी साझीदार होने दो । अगर मुझे मरना ही है तो स्वतंत्र भारत की गोद में मुझे मरने दो । मुझे अपनी आखिरी नींद गुलाम देश में नहीं, वरन् आजाद देश में ही लेने दो । "

---

56. बी0 पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 418 ।

पंडित मोतीलाल नेहरू की मृत्यु पर , 7 फरवरी सन् 1931 को महात्मा गाँधी ने इलाहाबाद से यह सन्देश भेजा -

" मोतीलाल नेहरू की मृत्यु प्रत्येक देशभक्त के लिए ईष्यांप्रद होनी चाहिए । क्योंकि अपना सब कुछ न्यौछावर करके वह मरे हैं और अन्त समय पर देश का ही ध्यान करते रहे हैं । इस वीर की मृत्यु से हमारे अन्दर भी बलिदान की भावना आनी चाहिये । हममें से प्रत्येक को चाहिए कि जिस स्वतंत्रता के लिए वह उत्सुक थे और अब जो हमारे नजदीक आ पहुँची है, उसको प्राप्त करने के लिए अपना सर्वस्व नहीं तो कम से कम इतना बलिदान तो करें ही, कि जिससे वह हमें प्राप्त हो जाये ।[57]

इससे पूर्व आन्दोलन को पूर्ववत् जारी रखने का निर्णय लिया गया। गोष्ठी के दूसरे ही दिन राजेन्द्र प्रसाद ने प्रत्येक कांग्रेस समिति को एक सरकुलर द्वारा गोष्ठी के निर्णय से अवगत कराया । गोष्ठी के पश्चात पंडित मोतीलाल नेहरू का श्री जयकर श्री निवास शास्त्री तथा तेजबहादुर सप्रू द्वारा प्रेषित तार प्राप्त हुंआ, जिसमें उनके भारत पहुँचने तक निर्णय स्थगित रखने का अनुरोध था । प्रत्युत्तर में कार्यकारिणी को तार भेजा गया कि उनकी इच्छानुसार कार्यकारिणी द्वारा पारित प्रस्ताव प्रकाशित नहीं किया जायेगा । प्रस्ताव प्रकाशित न होने से यह भावना प्रसारित हो गयी थी कि

---

57. डॉ० पट्टाभिसीतारमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 419 ।

युद्ध बन्द कर दिया गया है । अत: फरवरी में 21 फरवरी सन् 1931 को प्रस्ताव का पुन: समर्थन किया । इसी के साथ विदेशी वस्त्र के बहिष्कार को केवल सविनय अवज्ञा आन्दोलन तक के लिए सीमित न करके उसे स्थायी राष्ट्रीय कार्यक्रम का रूप दे दिया गया ।[58]

कांग्रेस समिति ने अक्टूबर सन् 1931 में प्रान्तीय कांग्रेस समिति से करबन्दी आन्दोलन प्रारम्भ करने की अनुमति देने की प्रार्थना की । पंडित जवाहरलाल नेहरू ने तुरन्त इस निर्णय की सूचना देते हुए महात्मा गांधी को लिखा -

" After very careful consideration our district congress committee felt that there was no way out except to advise that rents should be withheld. The advice must be given within the next two or three weeks if it is to be in time and effective"[59]

सरकार द्वारा घोषित लगान में छूट कांग्रेस को सन्तुष्ट नहीं कर सकी । सरकारी घोषणा की आलोचना कांग्रेसी व्यक्ति ग्रामों में जाकर तथा आलोचनात्मक पत्रिकाओं के माध्यम से कर रहे थे । उधर सरकार ने

---

58. लीडर - समाचार पत्र, 4 फरवरी सन् 1931 ।

59. नेहरू पेपर्स - मोतीलाल नेहरू सीरिज, जवाहर लाल नेहरू से महात्मा गांधी को पत्र - दिनांक 16 अक्टूबर 1931 ।

किसानों को यह सूचना दी कि यदि उन्होंने शीघ्र ही कर एवं लगान नहीं चुकाया तो छूट वापस ले ली जायेगी । इस विषम अवस्था में ऐसी घोषणा सर्वथा मूर्खतापूर्ण एवं अनुचित थी । पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कुछ जिलों का (प्रान्तों के) दौरा कर इलाहाबाद में दिये गये अपने वक्तव्य में लगान तथा कर चुकाने की किसानों की असमर्थता किसानों के भूमि से लगान के आधार पर उनसे मनमाना कर वसूल करने की सरकारी एवं जमींदारी की नीति तथा उनके ऊपर किये गये अत्याचारों का करूण चित्रणकर वचन बद्ध कांग्रेस द्वारा किसानों की सहायता की आवश्यकता के स्पष्ट किया गया । उचित विचार-विमर्श के उपरान्त इलाहाबाद जिला कांग्रेस समिति ने 15 अक्टूबर को किसान सम्बन्धी कांग्रेस की नीति को निर्धारित करने के लिए कुछ प्रस्ताव पारित किये । कांग्रेस की यह माँग थी कि 1339 फसली का कर इतना कम कर दिया जाये कि वह 1898 की दर से 20% कम हो, साथ ही खेती करने में व्यय अधिक होने के कारण 10% की छूट और प्रदान करनी चाहिए । समस्त बकाया कर माफ कर देना चाहिए । नालिशें भी खारिज होनी चाहिए । समिति ने निर्णय लिया कि -

"The Committee desires to give clear expression to their decision that if the Government do not change their policy towards the tenants then in order to protect them, the committee will have to oppose the Government"

समिति ने प्रान्तीय कांग्रेस समिति से करबन्दी आन्दोलन प्रारम्भ करने की अनुमति देने की प्रार्थना की ।[60]

3 नवम्बर 1931 को पंडित जवाहरलाल नेहरू ने लगान की दर निश्चित करने के लिए नियुक्त अधिकारी, इलाहाबाद के आयुक्त तथा जिलाधीश से भेंट करने का प्रस्ताव किया जिसको उन्होंने स्वीकार किया । गोष्ठी आयुक्त भवन में हुई जिसमें पंडित जवाहर लाल नेहरू, पुरूषोत्तम दास टंडन, वेंकटेश नारायण तिवारी तथा अधिकारी वर्ग उपस्थित था । सरकारी प्रतिनिधियों ने अपने निर्णय को उचित बताया और कांग्रेस के प्रतिनिधि उनसे सहमत नहीं हो सके जिसके परिणामस्वरूप गोष्ठी का कोई स्थायी परिणाम नहीं निकला । पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कुँवर जगदीश प्रसाद के सम्मुख स्पष्ट किया -

" We were told that we could not consider that basis of remissions nor could we discuss arrears or debts or ejectments or local calamities or similar matters..... the result of the lengthy discussions was that perhaps an addition of Rs.25,000 or so might be added to the remissions for Allahabad District"

---

60. लीडर- समाचार पत्र, 18 अक्टूबर, सन् 1931

जिला तथा प्रान्तीय कांग्रेस समिति ने स्थिति पर पुनः विचार किया तथा सरकार से फिर से वार्ता करने के लिए एक विशेष समिति नियुक्त की ।[6]

मैलकम हैले ने वाइसराय समिति के गृह सदस्य क्री को कान्फ्रेंस के विषय में लिखा कि कांग्रेस के प्रतिनिधियों ने इलाहाबाद विशेष की परिस्थिति में रूचि न लेकर बन्दोबस्त के मूल आधार पर ही आक्षेप किया था जिसमें परिवर्तन करना अब अनुचित होगा । वह कांग्रेस को अब अधिक हस्तक्षेप करने का अवसर प्रदान नहीं करना चाहते थे । कांग्रेस की माँगों को स्वीकार करना अब उनके विचार में असम्भव था, परन्तु वह पंडित जवाहरलाल नेहरू को ऐसा उत्तर देना चाहते थे जिससे उन्हें सरकार पर आरोप लगाने का आधार प्राप्त हो । अतः पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा लिया गया अधिकारियों को भेंट करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया । परन्तु आन्दोलन प्रारम्भ होने की सम्भावना के समय पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा उनके मित्रों को बन्दी बनाने का निश्चय वह कर चुके थे । 10 नवम्बर को युक्त प्रान्तीय सरकार के सचिव ने पंडित जवाहर लाल नेहरू को यह उत्तर दिया कि समस्त छूट को अनुचित बताकर बन्दोबस्त को नये सिरे से करना अब असम्भव है । बकाया कर पर भी कोई विचार नहीं किया जा सकता है, जब तक कि उसकी सही मात्रा ज्ञात न हो । नालिशों के सम्बन्ध में समस्या की

---

6. लीडर- समाचार पत्र, 7 नवम्बर सन् 1931

गुरूता का उल्लेख कर उस ओर भरसक प्रयत्न करने का निश्चय किया गया । परस्पर वार्तालाप के लिए उन्होंने केवल सरकारी निर्णय को कार्यान्वित करने का विषय सुरक्षित रक्खा था । यह उत्तर कांग्रेस के मनोकूल नहीं था । 15 नवम्बर सन् 1931 से कर एकत्र किया जाना था । अब महात्मा गाँधी के लौटने की प्रतीक्षा नहीं की जा सकती थी । अत: पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कांग्रेस से करबन्दी आंदोलन सम्बन्धी अनुमति माँगी । वह भी समय के अभाव के कारण करबन्दी सम्बन्धी अनुमति देने के लिए बाध्य हुए । 26 नवम्बर सन् 1931 को युक्त प्रान्तीय कांग्रेस समिति की बैठक में जिला कांग्रेस समिति को अभी कर न देने का परामर्श देने की आज्ञा दे दी गई ।[62]

26 नवम्बर सन् 1931 की बैठक के निर्णय के अनुसार जिला कांग्रेस समिति की तरफ़ से किसानो के नाम सूचना प्रकाशित हुई जिसका मुख्य अंश इस प्रकार से था :-

"आप लोगों की सूचना के लिए यह एलान जिला कांग्रेस समिति की ओर से किया जा रहा है कि आप सभी लगान तथा मालगुजारी रोके रहें और सरकार से बातचीत हो जाने पर कांग्रेस की आज्ञा की राह देखें, लेकिन साथ ही आप यह भी तैयारी रखें कि अगर कोई उचित रास्ता सरकार ने आपके दुख को दूर करने के लिए नहीं निकाला, तो अपने बचाव के लिए

---

62. लीडर - समाचार पत्र, 18 नवम्बर, सन् 1931 ।

लगान और मालगुजारी बन्द कर सत्याग्रह करना होगा।"[63]

कांग्रेस इस समय एक प्रकार से अवांछनीय विच्छेद कीओर अग्रसित होती जा रही थी। वार्तालाप के लिए प्रान्तीय सरकार की शर्त मान लेने के बाद किसानों की कौन सी विषम समस्या शेष रह जाती, जिस पर सरकार से विचार विमर्श किया जाता। इसी के फलस्वरूप शेरवानी ने प्रत्युत्तर में लिखा -

" Our council had no desire to take the initiative in the matter by giving special advice during negotiations. But when aggressive steps to collect the amounts fixed are imminent, and these collections are bound to result as they have done so frequently in great distress to the country, then some advice has to be given to the distracted peasantry".

25 नवम्बर सन् 1931 को जिला किसान कान्फ्रेंस का समारोह हुआ। कांग्रेस ने किसानों के सम्मुख सम्मत परिस्थिति का चित्र उपस्थित करअपने परामर्श को न्यायोचित सिद्ध कर किसानों का समर्थन भी प्राप्त किया।[64]

---

63. लीडर - समाचार पत्र, 6 दिसम्बर, सन् 1931।

64. अभ्युदय - समाचार पत्र, 2 दिसम्बर, सन् 1931

2 दिसम्बर सन् 1931 को नवीन युक्तप्रान्तीय सचिव जे0 एम0 बेले ने शेरवानी को सूचित किया कि कांग्रेस ने अपने 16 नवम्बर सन् 1931 के प्रस्ताव को वापस लेने से इन्कार कर दिया है अत: सरकार अपने 17 नवम्बर के प्रस्ताव को वापस लेती है । शेरवानी द्वारा अन्तिम उत्तर देने के साथ दोनों वर्ग अपने- अपने निर्धारित कार्य में तल्लीन हो गये । इलाहाबाद जिले के स्वयं सेवकों को ग्रामों में संगठन के लिए प्रेषित किया जाने लगा । इनमें हिन्दुस्तानी सेवा दल के स्वयं सेवक भी सम्मिलित थे । इलाहाबाद मे लगान तथा कर की वसूली पूर्णत: बन्द हो गई । सरकार को यह विश्वास था कि बिना सहायता के अब लगान की वसूली असम्भव है। इन समस्त समस्याओं के लिए पंडित जवाहर लाल नेहरू को उत्तरदायी माना जाता था । अत: प्रान्तीय सरकार ने अवसर देखकर उन्हें बन्दी बनाने की अनुमति केन्द्र से प्राप्त कर ली । किसानों की अवस्था का वास्तविक चित्र उपस्थित करने के लिए " अभ्युदय " ने "किसान अंक " प्रकाशित किया। 3 दिसम्बर सन् 1931 को पुलिस ने प्रेस को घेर लिया तथा " किसान अंक " की उपलब्ध चारों प्रतियाँ जब्त कर लीं ।[65]

प्रान्तीय सरकार ने परिस्थिति का सामना करने के लिए विशेष अधिनियम लागू किये । उनके अन्तर्गत इलाहाबाद के जिलाधीश ने 10 दिसम्बर सन् 1931 को कांग्रेस के मुख्य नेताओं की गतिविधियों पर अंकुश लगा दिया ।

---

65. अभ्युदय- समाचार पत्र, 9 दिसम्बर, सन् 1931 ।

जिलाधीश की आज्ञा की अवहेलना के लिए 18 दिसम्बर सन् 1931 को इलाहाबाद ने विरोध सभा की जिसमें पुरूषोत्तम दास टंडन ने युक्त प्रान्तीय अधिनियम के विरोध में उद्‌गार प्रकट किये । उन्होनें कहा कि इस सभा में उनका खड़ा होना ही अधिनियम का अच्छा प्रत्युत्तर है । इस अधिनियम ने दिल्ली के समझौते पर पटाक्षेप कर दिया । इस सभा में भाग लेने का दण्ड पुरूषोत्तम टंडन को प्राप्त होना ही था। फलत: वह बन्दी बना लिये गये । पंडित जवाहरलाल नेहरू " 22 दिसम्बर सन् 1931 में पुरूषोत्तम दास टंडन की गिरफ्तारी की सूचना पाकर इलाहाबाद आये ।[66]

श्री पुरूषोत्तम दास टंडन को आनन्द भवन तक पहुँचने पर सरकार का तीनबार आदेश नवीन अधिनियम के अनुसार प्राप्त हुआ । इसके प्रत्युत्तर में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जिलाधीश को यह सूचना दी कि वह कांग्रेस के अतिरिक्त किसी अन्य का आदेश मानने के आदी नहीं हैं । साथ ही यह भी सूचित करना पंडित जवाहरलाल नेहरू को उचित प्रतीत हुआ कि वह महात्मा गांधी के आगमन पर उनसे मिलने बम्बई जायेगें । कांग्रेस के ऑफिस को जिलाधीश के आदेश से बन्द कर दिया गया था। 26 दिसम्बर को बम्बई जाते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा शेरवानी बन्दी बना लिये गये और उसी दिन सन्ध्या समय लाल बहादुर शास्त्री ने

---

66. अभ्युदय - समाचार पत्र, 18 दिसम्बर, सन् 1931 ।

जिलाधीश के आदेश का उल्लंघन करते हुए सार्वजनिक सभा में वक्तृता देकर अपने को दंडभागी बना लिया ।

उधर महात्मा गाँधी के भारत आगमन के साथ ही सविनय अवज्ञा आन्दोलन का प्रवाह पुन: बाँध तोड़कर प्रवाहित हो उठा । 4 जनवरी सन् 1932 को कांग्रेस समिति ने एक जुलूस निकालने तथा सभा करने का विचार किया । इस बार अधिकारी पुलिस के साथ पहले से ही तत्पर थे । अत: दमन प्रारम्भ से ही अत्यन्त तीव्र था । जिलाधीश ने एक सप्ताह पूर्व ही इस प्रकार के आयोजन के विरूद्ध आदेश जारी कर दिये । आज्ञा भंग के उद्देश्य से आयोजन प्रारम्भ किया । पुरूषोत्तम दास टंडन पार्क से प्रवेश मार्ग तथा खद्दर भंडार पर सशस्त्र पुलिस नियुक्त की गई । जुलूस के जाने का मार्ग पुलिस ने घेर लिया । जिलाधीश ने जुलूस के नेता मंजरअली सोखता को जुलूस तितर-बितर करने का आदेश दिया और मंजर अली सोखता के इन्कार कर देने पर उन्हें बन्दी बना लिया । तत्पश्चात् -लाठियों की सहायता ली गई जिससे दो व्यक्तियों की मृत्यु हो गई । उस दिन 18 व्यक्ति गिरफ्तार हुए ।[67]

सम्पूर्ण अप्रैल सन् 1932 के महीने में निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार विमलचन्द्र मिश्र, मुज़फ्फ़र हुसैन, रणजीत पंडित ,उमा नेहरू, श्रीमती कमला नेहरू

---

67. लीडर - समाचार पत्र, 6 जनवरी, 1932 ।

तथा सर्वप्रमुख रूप से पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में इलाहाबाद में नमक कानून भंग किया गया । 11 अप्रैल सन् 1932 को आनन्द भवन [इलाहाबाद] को देश को अर्पण करके उसे राजनीतिज्ञों का तीर्थस्थल बना दिया ।

पंडित जवाहरलाल नेहरू का कार्य अध्यक्ष के रूप में अप्रैल के प्रारम्भिक दिनों में समस्त राष्ट्र के आन्दोलन का संचालन करता रहा । इलाहाबाद के केन्द्र से उनके द्वारा प्रेषित सरकुलर दिन प्रतिदिन की गतिविधियों के सम्बन्ध में निर्देश देते थे । ऐसे ही कुछ सरकुलर पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त की सरकार के अधिकार में आये । इनमें से एक राजनैतिक मुकदमों में बचाव के सम्बन्ध में था । आन्दोलन का प्रारम्भ होते ही स्वयं सेवकों की गिरफ्तारी अवश्यम्भावी थी । इस अवस्था में मुकदमें में किसी प्रकार का भाग न लेने का निर्देश दिया गया था । सरकुलर न0 33 नमक कानून भंग से सम्बन्धित था । " द सिग्नल" शीर्षक तृतीय सरकुलर में 8 अप्रैल को आन्दोलन प्रारम्भ कर देने का आव्हान था ।[68]

24 मई, सन् 1931 को कांग्रेस की ओर से इलाहाबाद में जिला सम्मेलन आयोजित करने का प्रयास विफल सिद्ध हुआ । सभाओं के आयोजक को रोकने के लिए पुलिस ने सभी सार्वजनिक स्थलों को घेर लिया था । जुलाई 1932 को प्रमुख आकर्षण स्वराज्य भवन पर अधिकार करने का अभियान करना था । 31 जुलाई सन् 1932 को इस प्रयत्न का अंतिम दिन था । 30 तारीख

---

68. होम पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स - नेशनल आरकाईव्ज्स आफ इंडिया, नयी दिल्ली । 5/90, 1932 ।

को प्रान्त के विभिन्न जिलों से स्वयं सेवकों ने इलाहाबाद की ओर प्रस्थान किया । सभी स्वयं सेवक विभिन्न स्टेशनों पर बन्दी बना लिये गये । केवल फर्रूखाबाद के स्वयं सेवक ही इलाहाबाद पहुँच सके । पुलिस के द्वारा लगभग 46 स्वयं सेवकों को बन्दी बना लेने के बाद भी अभियान कार्यान्वित किया गया ।[69]

28 अगस्त सन् 1932 तथा 4 सितम्बर सन् 1932 को विशेष रूप से बहिष्कार दिवस के रूप में मनाया गया । प्रचार कार्यों को नवीन माध्यम रूप से अपनाया गया । चलती हुई गड़ियों को रोककर बहिष्कार सम्बन्धी पत्रिकाएँ वितरित की जाती थीं ।

इलाहाबाद में लगभग 12 गड़ियों को इसी उद्देश्य से रोका गया था ।[70]

सन् 1933 की यवनिका उठते ही हमें कांग्रेस आन्दोलन की अंतिम ज्वाला के दर्शन होते हैं । इलाहाबाद में प्रतिमास 4 तारीख को बन्दी दिवस मनाया जा रहा था । सन् 1933 की 4 जनवरी को जुलूस निकालने के प्रयत्न में 6 महिलायें तथा 11 पुरूषों को बन्दी बनाया गया ।[71]

इलाहाबाद अभी भी करबन्दी आन्दोलन के पुनर्गठन का प्रयास कर रहा था । व्यंकटेश नारायण तिवारी को इस प्रयास के लिए उत्तरदायी

---

69. ए. आई. सी. सी. रिकार्ड्स - 51/ 1932 ।

70. वही, पी- 35/ 1932 पार्ट 1 ,

71. वही, सन् 1933, भाग - 2 ,

माना गया । 29 जनवरी, सन् 1933 को इस सम्बन्ध में इलाहाबाद में हो रही एक सभा के अवसर पर 20 जिला आन्दोलन संचालक पुलिस की हिरासत में आ गये । परम्परा के अनुसार 26 जनवरी को स्वतंत्रता दिवस का आयोजन भी हुआ , परन्तु इन समस्त आयोजनों में सन् 1930 की गति तथा दृढ़ता नहीं थी, इसलिए सम्भवत: अधिकारी कह सके कि -

" 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस के उपलक्ष्य के दिन प्रदर्शन कारियों के दो समूह लखनऊ और इलाहाबाद में गिरफ्तार किये गये, 15 और 29 जनवरी को अनेकों गिरफ्तारियाँ एवं सजाऐं हुई और समारोह विफल रहे तथा सरलता से नियंत्रित कर लिये गये ।[72]

कांग्रेस के अभी तक के स्वीकृत कार्यक्रम से स्पष्ट पृथककरण था। सरकारी रिपोर्ट ने स्पष्ट लिखा -

" ....There is little doubt that Pandit Jawaharlal's main object is to develop his new programme of organizing the masses and endeavouring to innoculate them with views of communism though this does not appear from the published Revolutions."[73]

---

72. होम पोलिटिक्स डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स -नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली, दिनांक -18-1-1933 ।

73. वही, दिनांक 17-12-1933 ।

सन् 1931, 1932 के आघात क्रांतिकारियों के लिए घातक सिद्ध हुए थे। अतः इलाहाबाद मे सन् 1933 का वर्ष क्रांतिकारी गतिविधियों के राष्ट्रीय अभाव का परिचायक था। 15 फरवरी, सन् 1934 को एक सन्देहास्पद अवस्था में क्रांतिकारी के साथ से पुलिस को एक रिवाल्वर तथा कुछ कारतूस, प्राप्त हुए थे।[74]

21फरवरी सन् 1934 को एक इलाहाबाद में एक गोष्ठी हुई। जिसमें कांग्रेस कार्यकर्ताओ ने "बंगाल दिवस" मनाने का प्रस्ताव रखा। सरकार जिस दिशा का स्पर्श करने के लिए प्रयत्नशील थी वह कार्य महात्मा गांधी द्वारा सम्पन्न हुआ। उन्होनें आन्दोलन को स्थगित करने का आदेश दिया। इस आदेश ने नेताओं को दूसरे मार्ग पर जाने केलिए विवश कर दिया। 6 मई से इलाहाबाद में महात्मा गांधी द्वारा इस नवीन निर्णय से उत्पन्न परिस्थिति पर विचार किया जाने लगा। जिले के नेताओं की मनोभावना को स्पष्ट रूप देने के लिए केशवदेव मालवीय ने पुरूषोत्तम दास टंडन के निवास स्थान पर सभा आयोजित की। नेताओं के सम्मुख मुख्य प्रश्न था कि कौंसिल प्रवेश, जिसके सम्बन्ध में पटना में आयोजित महासमिति की बैठक के पूर्व ही वह अपनी नीति निर्धारित कर लेना चाहते थे।[75]

---

74. होम पोलिटिक्स डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स- नेशनल आरकाइव्स ऑफ इंडिया नयी दिल्ली, दिनांक 5-12-1934।

75. लीडर - समाचार पत्र, 10 मई सन् 1934।

इलाहाबाद में कांग्रेस के दो विरोधी समूह थे, जिनमें से एक का नेतृत्व सुन्दरलाल कर रहे थे। श्रीमती कमला नेहरू का नाम भी वर्ग विशेष के साथ किया जा रहा था। स्पष्टत: अपने वर्ग को श्रीमती कमला नेहरू के समर्थन के प्रदर्शन के साथ लोकप्रियता प्रदान करना सुविधाजनक था। उनकी अनभिज्ञता में उनकी अनुमति के बिना उनके नाम पर ग्रामीणों को एकत्रित करना तथा इसी के समान अन्य घटनाऐं भी ऐसी थीं, जिन्होनें पंडित जवाहरलाल नेहरू के लिए उनकी मुक्ति के उपरान्त इलाहाबाद की राजनैतिक परिस्थिति से सामान्जस्य स्थापित करना दु:साध्य बना दिया। [76]

साम्प्रदायिक निर्णय पर कांग्रेस के विभिन्न वर्गों में तीव्र मतभेद प्रकट हुआ। पंडित मदनमोहन मालवीय इस सम्बन्ध में कांग्रेस की निरपेक्ष नीति के कटु आलोचक थे। उन्होनें इसी मतभेद के आधार पर कांग्रेस से पृथक होकर राष्ट्रीय दल गठित करने का निश्चय किया। भारत में शासन सम्बन्धी सुधारों के प्रश्न पर संसद के दोनों सदनों की समिति की रिपोर्ट इसी काल में प्रकाशित हुई। इलाहाबाद जिला कांग्रेस समिति ने इस रिपोर्ट के प्रति अपना तीव्र असन्तोष प्रकट किया। उनके अनुसार रिपोर्ट कांग्रेस द्वारा स्वीकृत पूर्ण स्वाधीनता के लक्ष्य के मार्ग की अलक्ष्य सी दूरी भी कम नहीं करती। अत: समिति ने युक्त प्रान्तीय कांग्रेस समिति के अध्यक्ष की रिपोर्ट के विरूद्ध प्रदर्शन आयोजित करने

---

76. नेहरू पेपर्स - मोतीलाल नेहरू सीरिज,
जवाहर लाल नेहरू से सुन्दरलाल को पत्र दिनांक, 17-8-1934,
522।

की अनुमतिमांगी ।[77]

कांग्रेस ने इस 1934 के निर्वाचन में भाग लिया और उसको साधारण स्थानों के निर्वाचन में आशातीत सफलता प्राप्त हुई । सत्याग्रह स्वयं ही एक भारी विजय है, जैसा कि लेम्स लॉविल ने कहा था -

" Truth for ever on the scaffold,
wrong for ever on the throne,
yet that scaffold sways the future
And behind the dim unknown
Standeth God within the shadow.
Keeping watch above his own".[78]

ब्रिटिश संसद के द्वारा सन् 1935 में भारत के लिए एक अधिनियम पारित हुआ, जो भारतीय शासन अधिनियम 1935 के नाम से जाना जाता है । इस अधिनियम के तीन प्रमुख लक्षण थे ।

§1§ ब्रिटिश प्रान्तों और स्वेच्छा से शामिल होने वाली रियासतों को मिलाकर एक अखिल भारतीय संघ के निर्माण की योजना।

§2§ प्रान्तीय स्वायत्ता ।

§3§ केन्द्र में आंशिक रूप से उत्तरदायी शासन की स्थापना ।

---

77. लीडर - समाचार सन् 25 नवम्बर सन् 1934 ।

78. बी0 पट्टाभिसीता रमय्या, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ - 560 ।

कांग्रेस में इस बात पर मतभेद था कि इस अधिनियम के आधार पर होने वाले चुनावों में भाग लिया जाये अथवा नहीं, लेकिन अन्त में कांग्रेस ने चुनावों में भाग लिया। सन् 1937 में जो चुनाव परिणाम सामने आये वह कांग्रेस के लिए अति उत्साहवर्धक थे। 11 में से 6 प्रान्तों में - बम्बई, मद्रा मध्यप्रान्त, संयुक्त प्रान्त, विहार व उड़ीसा में कांग्रेस को पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ था। सन् 1937 में ही 8 प्रान्तों में कांग्रेसी मंत्रिमण्डल का निर्माण हुआ और कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों के द्वारा अनेक जनहित कारी कार्य सम्पादित हुए। तत्कालीन गर्वनर जनरल लार्ड लिनालिथगो और अंग्रेज लेखक कूपलैण्ड के द्वारा भी कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों के कार्यों की भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी।[79]

राजनीति 19वीं शताब्दी के गर्हित दर्जे पर न रहकर इस स्वास्थ्यप्रद और सदान्तार पूर्ण दर्जे पर जा पहुँचती है जिसे पहले 15 या 16 वर्षों में भारत ने प्राप्त किया है और उसका श्रेय मोहनदास करमचन्द्र गांधी जैसे विश्व-बन्धु व्यक्ति को जाता है जिसकी अजेयता का वर्णन प्रोफेसर गिलबर्ट मेरे ने निम्न उचित और नपे तुले शब्दों में किया है -

" ऐसे व्यक्ति के साथ सावधानी से पेश आओ, जिसे न तो सांसारिक वासनाओं की रत्ती भर चिन्ता है न आराम या प्रशंसा या पद वृद्धि की, वरन् जो उस काम को करने का निश्चय कर लेता है जिसे वह ठीक

---

79. पुखराज जैन, नेशनल मूवमेंट ऑफ इंडिया एन्ड इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन, पृष्ठ - 123।

समझता है । ऐसा व्यक्ति भयंकर एवं दुखदायी शत्रु है क्योंकि उसके शरीर पर तो तुम आसानी से विजय प्राप्त कर सकते हो, परन्तु उसकी आत्मा पर तुम्हारा जरा भी अधिकार या कब्जा नहीं हो सकता ।[80]

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि इलाहाबाद जनपद का भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रहा । देश में जो भी राजनीतिक आन्दोलन हुए, उसमें इलाहाबाद की भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने जनपद के नेताओं और उनके आदर्शों ने राष्ट्र और प्रान्त को नवीन दिशा प्रदान की ।

---

80. बी पट्टाभिसीता रमय्या - कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ- 577

षष्ठम् - अध्याय

निष्कर्ष

कांग्रेस का इतिहास मुख्यतः मानवीय इतिहास है । हम इसे गिब्बन (Gibban) के शब्दों में " इंसान के अपराधों, मूर्खताओं और बदकिस्मतों का लेखा" कैसे मान सकते हैं ? भारत में तो इन तीनों ही बातों की इस इतिहास काल में बहुलता रही है ।

ऐक्टन के शब्दों में "आजादी" जैसी ऊँचे मकसद की चीज हासिल करने के लिए " मानवीय भावनाओं का संघर्ष मात्र " कहें । हाँ, इस भावना की चाह आजादी है । यह कांग्रेस का प्यारा मकसद है और कांग्रेस ने इस आजादी को पूरे तौर पर हासिल करने के लिए अपने भक्तों पर सेवा और कष्ट सहन करने की शर्तें लगाई हैं और तकलीफों को आमंत्रित करके तथा इन्हें बर्दाश्त करते हुए दुश्मनों को अपने ध्येय की न्याय संगतता का पूर्ण विश्वास दिलाया है ।

भारत के गौरवमय इतिहास में उत्तर प्रदेश का विशिष्ट स्थान है और उत्तर प्रदेश के इतिहास में इलाहाबाद जनपद अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है क्योंकि इलाहाबाद जनपद उत्तर प्रदेश के प्रमुख क्षेत्रों में से एक है । इलाहाबाद जनपद भारतीय राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान इस कारण भी प्राप्त कर गया था, क्योंकि इलाहाबाद उदारवादी और दक्षिण पंथ के महानतम और श्रेष्ठतम नेताओं का निवास स्थल था । पंडित जवाहरलाल नेहरू, पंडित मोतीलाल नेहरू, पंडित मदनमोहन मालवीय, श्रीमती कमला नेहरू, विजय लक्ष्मी

पंडित, आदित्यराम भट्टाचार्य । म्योर कॉलिज के आचार्य । पंडित अयोध्या नाथ, श्रीमती स्वरूप रानी नेहरू, पंडित सुन्दरलाल, सतीश चन्द्र बनर्जी, मौलाना मुहम्मद अली, श्रीमती सरोजनी नायडू, श्री पुरूषोत्तम दास टंडन, ज़हूर अहमद, मंजर अली सोखता, गौरीशंकर मिश्र, श्रीमती कृष्णा नेहरू, प्रभावती, आदि प्रमुख व्यक्ति इलाहाबाद के ही निवासी थे, इन सभी के अपूर्व कौशल प्रतिभा एंव अद्‌भुत साहस ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को एक नवीन दिशा प्रदान की ।

भारतीय जनता में व्यक्तिगत लोकप्रियता की दृष्टि में महात्मा गाँधी के अतिरिक्त अन्य कोई भी भारतीय नेता पंडित जवाहरलाल नेहरू के समकक्ष नहीं ठहरता । धनी पिता के इस पुत्र ने, जो विलासिता के जीवन का अभ्यस्त था, अपनी मातृभूमि के लिए सभी प्रकार के त्याग स्वीकार किए । पंडित जवाहरलाल नेहरू को कुल मिलाकर 9 बार नजरबन्द किया गया और उन्होंने अपने जीवनम के लगभग 9 वर्ष कारावास में बिताये ।

श्रीमती कमला नेहरू विजय लक्ष्मी पंडित, श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, प्रभावती, श्रीमती कृष्णा नेहरू, जैसी महिलाओं ने भी अपनी धरना नीति से ब्रिटिश सरकार कोआंतकित और भयभीत कर दिया । पंडित मोतीलाल नेहरू अपनी जीवन शैया पर लेटे हुए भी भारत के स्वतंत्र होने की आकांक्षा रखे थे । पूना की गोष्ठी के फलस्वरूप कांग्रेस का जन्म हुआ । बम्बई में आयोजित कांग्रेस के प्रथम अधिवेधन में "इंडियन यूनियन" के सम्पादक जानकी नाथ घोषाल इलाहाबाद के प्रतिनिधि थे । सन्‌ 1857 के विद्रोह ने यह सिद्ध कर दिया था कि भारतवासियों में राष्ट्रीय चेतना जाग्रत

होने लग गयी थी ।

साम्राज्यवाद तथा विशेषत: भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद का उद्देश्य उपनिवेश की जनता का राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एंव सामाजिक शोषण रहा है । इस तथ्य से भी इन्कार नहीं किया जा सकता है कि विदेशी भावना का संचार शोषक देश में जकड़ी किसी पराधीन देश की जनता में राष्ट्रवादी भावना का संचार शोषक देश ही उत्पन्न करता है ।

सन् 1857 के पश्चात जहाँ राष्ट्रीय चेतना के विकास एंव राजनैतिक कार्यकलाप देश में विकसित होने लगे, वहाँ ब्रिटिश शासन के अत्याचार भी उसी तीव्र गति से बढ़ने लगे । सन् 1885 ई0 तक भारतीय राष्ट्रीयता को बलशाली बनाने में ब्रिटिश शासकों के कार्यकलापों ने बहुत योगदान दिया।

सन् 1885 से लेकर सन् 1905 तक जिन उदारवादियों के हाथ में कांग्रेस का नेतृत्व रहा, उनकी अनेक आधारों पर कटु आलोचना की गई । वस्तुत: न तो उनकी राजनैतिक मनोवृत्ति सही थी और न ही उनके द्वारा अपनाये गये साधन ही प्रभावदायक थे । 1885 से 1937 तक के सम्पूर्ण काल के अध्ययन के उपरान्त भारतीय इतिहास की विशिष्ट धाराओं के आधार पर इलाहाबाद की भी प्रवृत्तियों का अध्ययन करना सम्भव हो जाता है । ब्रिटिश साम्राज्य के प्रारम्भिक दिवस इलाहाबाद के स्वरूप का निर्माण करने में सहायक सिद्ध हुए थे । फलत: ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति आकर्षण सहज

ही उपस्थित था । सन् 1857 के विद्रोह में इलाहाबाद में उपस्थित सेना ने अवश्य भाग लिया था परन्तु इलाहाबाद की साधारण हिन्दू जनता में ब्रिटिश शासन से विलग होने की किसी उत्कट इच्छा के प्रमाण नहीं मिलते । वरन् कुछ विशिष्ट हिन्दू नागरिक ब्रिटिश साम्राज्य के सहायकों के रूप में देखे गये । विद्रोह का नेतृत्व मौलवी लियाकत अली ने धर्म के आधार पर किया था।

विद्रोह दमन के उपरान्त तो ब्रिटिश साम्राज्य के वरदान को यथाशक्ति संचित करने में इलाहाबाद की जनता तत्पर हो गई । शासन के उदारवादी स्वरूप का सम्मोहन इस सीमा तक था कि देश के अन्य प्रान्तों में जब विद्रोह के बीच अंकुरित होने लगे थे, तब इलाहाबाद युक्तप्रान्त की सुप्तावस्था का प्रतीक बना हुआ था । तत्कालीन समाचार पत्रों के उदगार भी अन्य प्रान्तों की तुलना में अपेक्षाकृत कम तीक्ष्ण थे यह स्वयं सरकार की स्वीकृति है । इसके विपरीत इलाहाबाद का तत्कालीन प्रमुख समाचार पत्र " पायनियर" सरकार का पक्षधर था ।

कांग्रेस का आन्दोलन प्रारम्भ होने पर इलाहाबाद के प्रमुख राजनीतिज्ञ कांग्रेस के तत्कालीन नेताओं के समान उदार नीति को अपनाकर जनसेवा के लिए तत्पर हुए । समय के साथ कांग्रेस में दो विपरीत विचारधाराओं ने मतभेद उत्पन्न कर दिये थे । इलाहाबाद की प्रवृत्ति भी इस ओर आकृष्ट हुई परन्तु प्रारम्भ में मात्र विद्यार्थी समाज से ही इलाहाबाद में

आ रहे परिवर्तन की एक झलक मिली । उच्चस्तरीय राजनीति पर दक्षिणपंथी नीति का आवरण उपस्थित था । होमरूल एवं श्रीमती एनी बेसेन्ट की मुक्ति के लिए प्रारम्भ किये गये आन्दोलन में इलाहाबाद युक्तप्रान्त का केन्द्र बनकर सामने आया । इस आन्दोलन ने युवा वर्ग तथा साधारण जनता को उग्रपंथी राजनीति की ओर कुछ और आकर्षित किया । परन्तु प्रमुख राजनीतियों की उग्र नीति का आवरण श्रीमती एनी बेसेन्ट की मुक्ति के साथ ही विलीन हो गया । सन् 1866-69 के अन्त तक इलाहाबाद में उच्च न्यायालय की स्थापना हुई । जिसने प्रान्त के कई प्रतिभाशाली व्यक्तियों को आकर्षित किया । पंडित अयोध्यानाथ न्यायालय के इलाहाबाद आ जाने के साथ ही इलाहाबाद के ही निवासी हो गये । इसके साथ ही पंडित मोतीलाल नेहरू भीकानपुर की जिला अदालत त्याग कर इलाहाबाद आने पर विवश हो गये ।

सन् 1888 के इलाहाबाद के कांग्रेस अधिवेशन में ब्रिटिश सरकार कांग्रेस को वैर-भावना की दृष्टि से देखने लग गयी थी । इससे कांग्रेस की स्थापना का उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य का पोषण करना उचित प्रतीत नहीं होता ।

इलाहाबाद के चौथे अधिवेशन में कांग्रेस को अकथनीय कठिनाईयाँ हुईं, उसे पण्डाल तक के लिए जमीन नहीं मिल सकी थी । सन् 1892 में इलाहाबाद के आँठवे अधिवेशन में उमेश चन्द्र बनर्जी सभापति नियुक्त हुए थे, उन्होनें कांग्रेस के उन सामाजिक प्रश्नों को स्पष्ट किया था, जिनसे कांग्रेस ने अपने को पृथक रक्खा था।

19 वीं शताब्दी के आरम्भ में "बाम्बे एसोसिएशन " की स्थापना की गई, परन्तु कुछ समय उपरान्त ही वह संघ निर्जीव हो गया । फिर इसके स्थान पर "बाम्बे प्रेसीडेन्सी एसोसिएशन " की स्थापना हुई, जिसने कुछ समय के लिए राजनैतिक जागरण की दिशा में प्रशंसनीय कार्य किया ।

लार्ड कर्जन ने सन् 1904 में भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम " पास करके विश्वविद्यालयों की सिंडीकेट तथा सीनेट के सदस्यों की संख्या कमकर दी । इस एक्ट के आधार पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में सभासदों की नियुक्ति की गई, परन्तु इससे इलाहाबाद निवासियों को निराशा हुई क्योंकि विश्वविद्यालय में वास्तव में विश्वविद्यालय का रूप न रखकर सरकारी राजनैतिक संस्था का रूप धारण कर लिया था ।

" प्रयाग समाचार" इलाहाबाद ने आफीशियल सीक्रेट्स बिल " का विरोध करने हेतु सार्वजनिक सभाऐं की जाने की अपील एवं सुझाव दिया, क्योंकि इस बिल से पत्रकारों की स्वतंत्रता छीन ली थी ।

उत्तर प्रदेश में क्रान्तिकारी आन्दोलन का सूत्रपात सन् 1901 से हुआ जबकि इलाहाबाद से "स्वराज्य" नामक पत्रिका निकली । सन् 1907 के आरम्भ की यवनिका उठते ही उग्रवादी दल के प्रमुख नेता बाल गंगाधर तिलक को भी हम इलाहाबाद में देखते हैं । बालगंगाधर तिलक का सन्देश विदेशी अस्त्र के बहिष्कार के विषय में था । और अन्तत: वह इलाहाबाद

के निवासियों को प्रेरित करने में किसी मात्रा में सफल भी हुए थे, इसका अनुमोदन पंडित मोतीलाल नेहरू के पत्र से प्रकट होता है ।

इलाहाबाद के मिन्टो पार्क में महारानी विक्टोरिया घोषणापत्र पढ़ा गया । मिन्टो पार्क का शिलान्यास 3 नवम्बर 1910 को पंडित मदन मोहन मालवीय ने किया था, जिसका पुन: नामकरण मालवीय पार्क किया गया । जिसे बाबू जगजीवन राम ने 25 जनवरी 1928 को भारत सरकार को समर्पित किया ।

उदारवादी नीति के गढ़ में प्रथम दरार तब पड़ी जब इलाहाबाद के उदारवादी विचारों के कांग्रेसी नेताओं से भी अधिक नम्र तथा ब्रिटिश शासन के वरदानों से अभिभूत पंडित जवाहरलाल नेहरू का रूख धीरे-धीरे उग्रवादी राजनीति की ओर झुकता हुआ परिलक्षित हुआ । सन् 1909 के सुधारों के परिणामस्वरूप उत्पन्न सरकार की शुभेच्छा में अविश्वास इस प्रक्रिया का प्रथम चिन्ह था । फिर होमरूल आन्दोलन के काल में उनका परिवर्तन जारी रहा । यहाँ तक कि अन्त में हम उन्हें इलाहाबाद में उग्रवादी दल के एक समर्थक के रूप में देखते हैं । एक बार जब उनके चरण इधर अग्रसित हुए तो फिर बढ़ते ही गये । उनके चरित्र का यह विकास इलाहाबाद के क्रमश: परिवर्तन का प्रतीक भी है । दूसरी तरफ नेहरू पिता पुत्र में हो रहा मानसिक संघर्ष भी इलाहाबाद के प्रतिष्ठित नम्रपंथी और उभरते हुए उग्रवादी

दल बिना कोई विचार किए असहयोग की अग्नि को प्रज्ज्वलित करने के लिए आतुर था तो दूसरी ओर अनुभवी राजनीतिज्ञ भविष्य के सभी परिणामों का भली प्रकार अनुमान लगाये बिना शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य से इस प्रकार के खुले संघर्ष के इच्छुक नहीं थे ।

अन्त में युवक उत्साह के सम्मुख धीरे-धीरे कदम रखने वाले वर्ग को आत्म समर्पण करना पड़ा । तब तक महात्मा गाँधी के प्रभाव ने इलाहाबाद को आच्छादित कर लिया था । नेता और जनता दोनो इस संक्रामक आकर्षण से अछूते न रह सके । यह प्रभाव अस्थायी भी सिद्ध नहीं हुआ । राजनीतिक रूप से इलाहाबाद मुख्यत: गाँधी नीति का ही समर्थक रहा। खिलाफत और असहयोग आन्दोलन में इलाहाबाद द्वारा प्रदर्शित उत्साह सन् 1930 से प्रारम्भ हुए सविनय आज्ञा आन्दोलन में द्विगुणित रूप में प्रकट हुआ । स्वराज्य पार्टी की नीति के उत्थान के फलस्वरूप महात्मा गाँधी जी पृथक नीति को एकवर्ग ने स्वीकृत किया था, परन्तु वह परिवर्तन केवल बाह्य था । सरकार से खुली लड़ाई के चिन्ह दृष्टिगत होते ही इलाहाबाद पुन: एकमत हो गया।

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ थी जिन्हे इलाहाबाद ने स्वंयमेव आगे बढ़कर आत्मसात किया था । कांग्रेस के आन्दोलन को किसानों के समर्थन से विस्तृत एवं दृढ़ बनाने में इलाहाबाद का मुख्य योगदान था। सन् 1918 में ही इलाहाबाद के नेताओं की यह आकांक्षा स्पष्ट हो चुकी थी । परन्तु पंडित जवाहरलाल नेहरू के आकस्मिक ग्राम भ्रमण के अनुभव ने इलाहाबाद के

राजनैतिक समाज को उत्तरोत्तर किसान की ओर अधिकाधिक आकृष्ट किया। फलत: किसानों का भाग्य चिरस्थाई रूप से कांग्रेस आन्दोलन के साथ मिश्रित होता गया । वह दोनों अन्योन्याश्रित बनते गये । सन् 1932 में किसान तथा कांग्रेस के इसी घनिष्ट सम्पर्क ने इलाहाबाद तथा युक्तप्रान्त में सविनय अवज्ञा आन्दोलन का प्रत्यावर्तन अनिवार्य बना दिया । उस समय किसानों को करबन्दी का परामर्श देने के लिए मुख्यत: इलाहाबाद के ही नेता उत्तरदायी थे । आन्दोलन भी सर्वप्रमुख रूप से इलाहाबाद जिले से ही प्रारम्भ हुआ था ।

द्वितीय प्रमुख प्रवृत्ति थी - इलाहाबाद का समाजवादी दृष्टिकोण के प्रति आकर्षण , जिसके प्रणेता थे पंडित जवाहरलाल नेहरू । पंडित जवाहरलाल नेहरू के प्रभाव से इलाहाबाद के नेतृत्व का अधिकांश समाज आर्थिक नीति का समर्थक बननने लगा । महात्मा गाँधी की अपेक्षाकृत भावनात्मक आर्थिक नीति की तुलना में यह एक यथार्थवादी ठोस आर्थिक नीति थी, जिसने भारत की राजनैतिक स्वतंत्रता को सार्थकता प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य किया ।

जहाँ आर्थिक नीति में महात्मा गाँधी से पृथक्करण के चिन्ह परिलक्षित हुए । वहीं राजनैतिक रूप से भी इलाहाबाद ने महात्मा गाँधी को मन प्राण से आत्मसमर्पित कर दिया था यह वह सकना असम्भव है ।

उच्च स्तरीय नेताओं में पुरूषोत्तम दास टंडन के अपवाद को छोड़कर अन्य समस्त नेता महात्मा गांधी की अहिंसात्मक नीति को शुद्ध नीति के रूप में ही स्वीकार करते थे । दूसरी ओर इलाहाबाद निवासी इतने उग्र और भावुक भी नहीं थे कि क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग ले सकें । युवक समाज एक ओर महात्मा गांधी के असहयोग और सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सक्रिय भाग ले रहा था, तो दूसरी ओर क्रान्तिकारी देशभक्तों के प्रति भी उसका दृष्टिकोण श्रद्धापूर्ण था । यहाँ तक की कांग्रेसी नेता भी उन देश प्रेमियों की अवहेलना नहीं कर सकते थे । पुरूषोत्तम दास टंडन स्वयं अहिंसावादी होते हुए भी क्रांतिकारियों की सहायता करने में अग्रणी थे । परिणाम यह था कि जिस इलाहाबाद को सरकार बहुत कुछ अंशों में क्रांतिकारियों की प्रवृतियों से अछूता समझती थी वही क्रान्तिकारियों का प्रमुख आश्रयदाता बन गया । क्रांन्तिकारी आन्दोलन के सन्दर्भ में इलाहाबाद का यह योगदान सन् 1905 से 1935 तक निरन्तर जारी रहा ।

साम्प्रदायिक रूप से इलाहाबाद का कार्य विरोधाभास का उदाहरण बना रहा । इलाहाबाद पुरातनकाल से हिन्दू जाति का विशिष्ट धर्मस्थल था । अत: यहाँ के हिन्दुओं में हिन्दुत्त्व के गौरव के प्रति विशेष जागृति थी । पंडित मदन मोहन मालवीय इलाहाबाद के इसी वर्ग के प्रतिनिधि थे । दूसरी ओर अंग्रेजी शिक्षा तथा अंग्रेजी वातावरण के प्रभाव से तत्कालीन शिक्षित समाज

धर्म को अपने सार्वजनिक जीवन में कोई स्थान नहीं देना चाहता था । परन्तु निश्चित ही इस वर्ग की संख्या धर्मप्राण हिन्दुओं से कम थी । फलत: पंडित मोतीलाल नेहरू जैसे धर्मविमुख व्यक्तियों के विरोध के उपरान्त भी हिन्दू महासभा का निर्माण ही नहीं हुआ वरन् वह धीरे-धीरे इलाहाबाद में कांग्रेस के प्रमुख विरोधी दल का रूप ग्रहण करने लगी । खिलाफत आन्दोलन के काल में जो ऐक्य परिलक्षित हुआ था वह खिलाफत की समाप्ति के साथ ही समाप्त हो गया । उसके तुरन्त बाद साम्प्रदायिक वैमनस्य ने इलाहाबाद को झकझोर दिया । सविनय अवज्ञा आन्दोलन के काल में तो मुसलमानों का विशिष्ट वर्ग आन्दोलन का पूर्ण विरोधी था । ज़हूर अहमद तथा मौलाना विलायत हुसैन जैसे नेता जो सन् 1921 में हिन्दू मुसलमान ऐक्य के प्रचारक थे इस काल में साम्प्रदायिक नेताओं के रूप में सामने आये । इस वातावरण में इलाहाबाद इकबाल द्वारा पाकिस्तान की माँग के उपयुक्त भूमि प्रस्तुत कर सका । सर्वाधिक विरोधाभाव का विषय तो यह था कि जहाँ इलाहाबाद के राष्ट्रीय हिन्दू मुसलमान नेताओं ने बारम्बार एकता के लिए प्रयास किये वहीं विघटन के लिए स्वयं इलाहाबादवासी बहुत कुछ अंशों में उत्तरदायी थे । सन् 1911 के प्रथम ऐक्य सम्मेलन के अवसर पर ही यह विरोधाभास प्रकट हो गया था । एक ओर इलाहाबाद के उदारवादी नेता एकता के लिए प्रयत्नशील थे तो दूसरी ओर नगर के हिन्दू मुसलमान एक दूसरे के विनाश के आकांक्षी बन गये थे । इलाहाबाद के मुसलमानों के लिए हिन्दू

महासभा की गतिविधियाँ विशेष रूप से असन्तोषजनक थीं । पंडित मोतीलाल नेहरू तथा शेरवानी जैसे राष्ट्रीय नेताओं में भी उनका विश्वास नहीं था । दूसरी तरफ पंडित मदनमोहन मालवीय के समर्थक कांग्रेस की साम्प्रदायिक नीति से असन्तुष्ट थे । इसी के परिणामस्वरूप कांग्रेस से पृथक रहकर राष्ट्रीय दल का गठन श्रेयष्कर समझा गया था ।

सन् 1885 से प्रारम्भ उदारवादी परम्परा को इलाहाबाद ने इस समस्त काल में कुछ न कुछ अंशों तक जारी रखा । इलाहाबाद के लिबरल नेता देश के अत्यन्त प्रमुख एवं प्रतिष्ठित नेताओं में थे । यह सत्य है कि कालक्रम के अनुसार उनका समर्थन समिति होता गया परन्तु उनके लिए कोई अन्य मार्ग नहीं था । उनकी प्रवृत्ति सदैव महात्मा गाँधी द्वारा प्रेषित आन्दोलनों की बौद्धिक स्तर पर आलोचना करने की रही । ब्रिटिश सरकार से भी वह कभी सन्तुष्ट नहीं रहे । फलत: शासन में किये गये सन् 1919 के सुधार साम्प्रदायिक निर्णय, गोलमेज परिषदों का कार्य, भारत सचिव तथा वाइसराय तथा संसद के दोनों सदनों की रिपोर्ट सभी उनकी आलोचना के विषय बने ।

साम्प्रदायिक आर्थिक तथा राजनैतिक रूप से कहीं न कहीं विद्रोही की भूमिका निबाहने के उपरान्त भी इलाहाबाद महात्मा गाँधी से विलग नेहरू तथा आधुनिक एवं भावुक आदर्शवादी पंडित जवाहरलाल नेहरू को महात्मा गाँधी से बाँधती थी वहीं धर्मप्राण पंडित मदनमोहन मालवीय

तथा ब्रिटिश शासन से किसी भी प्रकार से पृथक होने के अविच्छुक तेजबहादुर सप्रू तथा सी. वाई. चिन्तामणि को महात्मा गाँधी के सिद्धान्तों की आलोचना करने के उपरान्त भी व्यक्तिगत रूप से उन्हें " महात्मा" मान लेने पर विवश करती थी । यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि व्यक्तिगत रूप से उदारवादी पत्र "लीडर" में महात्मा गाँधी को सदैव श्रेष्ठ माना गया है । नेताओं के ही समान इलाहाबाद की जनता को इन्हीं विभिन्न वर्गों में बाँटा जा सकता है । यदि साम्प्रदायिक मुसलमानों को छोड़ दिया जाये तो यह कहा जाना सम्भव नहीं है कि इलाहाबाद ने महात्मा गाँधी तथा कांग्रेस आन्दोलन को कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में सदैव स्वीकार किया था ।

महात्मा गाँधी ने अहिंसात्मक सविनय अवज्ञा का जो अस्त्र प्रस्तुत किया, वह एक घातोपचार । Shock treatment । था ताकि अस्पष्टता दूर हो जाये और इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि कांग्रेस को अधिकाधिक जनता में लोकप्रिय बनाने में महात्मा गाँधी को काफी सफलता पूर्वक कदम से कदम मिलाकर चलाकर दिखाया ।

महात्मा गाँधी स्वयं कहते हैं कि -

" यह कहना मुश्किल है कि कांग्रेस गाँवों में कहाँ तक पहुँच पायी थी, किन्हीं स्थानों पर खासतौर से किसान आन्दोलन तेजी पर थे जैसे कि सन् 1928 में गुजरात में बारडोली में सरदार पटेल के नेतृत्व में हुआ किसान आन्दोलन । इन समस्त आन्दोलनों का गहरा एंव स्थायी प्रभाव पड़ा ।

कांग्रेस ने सन् 1934 के निर्वाचन में भाग लिया था और उसमें कांग्रेस को साधारण स्थानों के निर्वाचन में आशातीत सफलता भी प्राप्त हुई थी। सन् 1935 में ब्रिटिश संसद के द्वारा भारत के लिए एक नवीन अधिनियम पारित हुआ, जो कि भारतीय शासन अधिनियम 1935 के नाम से जाना जाता है। इस अधिनियम के प्रमुख लक्षण थे - प्रान्तीय स्वायत्तता, केन्द्र में आंशिक रूप से उत्तरदायी शासन की स्थापना, ब्रिटिश प्रान्तों और स्वेच्छा से शामिल होने वाली रियासतों को मिलाकर एक अखिल भारतीय संघ के निर्माण की योजना।

सन् 1931 में जो चुनाव परिणाम कांग्रेस के समक्ष आये, वह अति उत्साहवर्धक थे। 11 प्रान्तों में से 6 प्रान्तों में - बम्बई, मद्रास, मध्यप्रान्त, संयुक्त प्रान्त, बिहार एवं उड़ीसा में कांग्रेस को पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ था। सन् 1937 में ही 8 प्रान्तों में कांग्रेसी मंत्रिमण्डल का निर्माण हुआ और कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों के द्वारा अनेक जनहितकारी कार्य सम्पादित हुए।

== == ==

अनुक्रमणिका

प्रकाशित सामग्री

1. शासकीय प्रशासन

(ए) एडमिस्ट्रेटिव रिपोर्ट, पश्चिमोत्तर एवं युक्तप्रान्त 1885-1929

(बी) कांग्रेस के अधिवेशनों की रिपोर्ट 1888, 1892, 1910

(सी) फ्रीडम स्ट्रगल इन उत्तर प्रदेश, वॉल्यूम एक एंव चार

(डी) कांग्रेस बुलेटिन, 1934-1936

2. अन्य प्रकाशित सामग्री

(1) नन्दा, बी0आर-पंडित मोतीलाल नेहरू, सन् 1964

(2) नेहरू, जवाहर लाल- टुवर्ड फ्रीडम, द ऑटोबायग्रोफी बोस्टन सन् 1961

(3) नेहरू, जवाहरलाल-बिफोर एन्ड आफ्टर इंडिपेन्डेन्स, दिल्ली सन् 1949

(4) नेहरू, मोतीलाल - वाएस ऑफ फ्रीडम सन् 1961

(5) नटराजन - हिस्ट्री ऑफ प्रेस इन इन्डिया, कलकत्ता सन् 1962

(6) नैदरकोट, आर्थर एच-द लास्ट फोर लाइव्स एनी बिसेन्ट, लन्दन सन् 1963

(7) मजूमदार, ए. सी - द इन्डियन रेवोल्यूशन, मद्रास ।

(8) मजूमदार, बी.बी - इन्डियन पोलिटिकल इन्स्टीट्यूशन्स एन्ड रिफोर्म ऑफ लेजिस्लेचर, सन् 1818-1917 कलकत्ता ।

ॅ9ॅ कीथ, ए. बी. - ए कांस्टीट्यूशनल हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, इलाहाबाद 1961

ॅ10ॅ मजूमदार, आर. सी. एन्ड ए. के. - स्ट्रगल फॉर फ्रीडम, वॉल्यूम ग्यारह, बम्बई 1969 ।

ॅ11ॅ मजूमदार, बी. बी. - मिलीटेन्ट नेशनलिज्म इन इन्डिया, कलकत्ता सन् 1966 ।

ॅ12ॅ मोरिस जोन्स, डब्लू. एच. - द गवर्मेन्ट एन्ड पोलिटिक्स ऑफ इंडिया, दिल्ली ।

ॅ13ॅ मजूमदार, आर. सी. - हिस्ट्री ऑफ द फ्रीडम मूवमेंट इन इन्डिया वॉल्यूम एक ।

ॅ14ॅ मजूमदार, ए. सी - इन्डियन नेशनल इवॉल्यूशन ।

ॅ15ॅ गोपाल, राम, -इन्डियन पोलिटिक्स

ॅ16ॅ पट्टाभिसीता रम्मय्या- द हिस्ट्री ऑफ दि इंडियन नेशनल कांग्रेस, वॉल्यूम एक

ॅ17ॅ नेहरू, पंडित जवाहर लाल, ऑटोबायोग्राफी ।

ॅ18ॅ बेसैन्ट, एनी - हाऊ इंडिया रॉट फॉर फ्रीडम, लन्दन ।

ॅ19ॅ लाजपत रॉय, लाला - यंग इन्डिया ।

ॅ20ॅ निहाल सिंह, गुरुमुख - लेंडमार्क्स इन इंडियन कॉन्स्टीट्यूशनल एन्ड नेशनल डेवलेपमेन्ट

ॅ21ॅ ड्यूई, जॉन - स्वतन्त्रता और संस्कृति, इलाहाबाद सन् 1939 ।

I22I धर्मभानु - हिस्ट्री एन्ड एडमिस्ट्रेशन ऑफ द नार्थ वेस्ट प्रोविंसेस, आगरा, सन् 1955 ।

I23I पान्डे, बी. एन. - इलाहाबाद प्रोस्पेक्ट एन्ड रीट्रोस्पैक्ट, इलाहाबाद सन् 1955

I24I बागल, जोगेशचन्द्र, हिस्ट्री ऑफ इंडियन एसोसिएशन 1876-1951, कलकत्ता ।

I25I बोस, सुभाषचन्द्र - द इंडियन स्ट्रगल, कलकत्ता, सन् 1948

I26I ब्रुचर, माइकेल, जवाहरलाल नेहरू - ए पोलिटिकल बायग्रोफी ।

I27I प्रेम नारायण - प्रेस एन्ड पोलिटिक्स इन इन्डिया, सन् 1885-1905, दिल्ली, सन् 1970 ।

I28I फिलिप्स, सी. एच. - द रेवोल्यूशन इंडिया एन्ड पाकिस्तान, सन् 1857-1947 ।

I29I त्रिपाठी, अमलेश - द ऐक्स्ट्रीमिस्ट चैलेंज, कलकत्ता सन् 1967

I30I हसन, काजी महमूद - द नागर ब्राहमण्स एन्ड द फेमिली ऑफ द दवेस, इलाहाबाद, सन् 1955 ।

I31I मैलकम, सरजॉन - लाइफ ऑफ राबर्ट क्लाइव, वॉल्यूम तीन, लन्दन ।

I32I मनकेकर, डी. ए. - लाल बहादुर, बम्बई सन् 1964

I33I यशपाल, सिंहावलोकन, भाग-तीन लखनऊ, 1959

I34I सत्यपाल और सुबोध मुखर्जी - सिक्सटी इयर्स ऑफ कांग्रेस, लाहौर, सन् 1946 ।

135। विपिन चन्द्र - द राइज़ एन्ड ग्रोथ ऑफ इकनॉमिक नेशनलिज्म इन इन्डिया, दिल्ली, सन् 1966

136। वेडरबर्न, विलियम - एलन ऑक्टेवियन ह्यूम, लन्दन ।

137। वैशम्पायन, विश्वनाथ - चन्द्रशेखर आजाद, भाग 2 एंव 3, वाराणसी, सन् 1967

138। जयकर, एम. आर - द स्टोरी ऑफ माई लाइफ, वाल्यूम-। एंव ।।, बम्बई ।

139। दास, एम0 एन0 - इन्डिया अन्डर मार्ले एन्ड मिन्टों, लन्दन सन् 1964 ।

140। इर्विन, लार्ड - स्पीचेस ऑफ लार्ड इर्विन, शिमला, सन् 1930 ।

141। घोष , पी. सी. - इन्डियन नेशनल कांग्रेस, सन् 1892-1909 कलकत्ता, सन् 1960 ।

142। तेंदुलकर, डी. जी. - महात्मा 8 वाल्यूम, बम्बई सन् 1952 ।

143। ताहमंकर, डी. बी. - लोकमान्य तिलक, सन् 1956 ।

144। राजेन्द्र प्रसाद - आत्मकथा, बम्बई सन् 1957 ।

145। राजेन्द्र प्रसाद - इन्डिया डिवाइडेड, बम्बई ।

146। रामगोपाल - हाऊ इन्डिया स्ट्रगल्ड फोर फ्रीडम, बम्बई सन् 1967 ।

147। रामगोपाल - इन्डियन मुस्लिम्स, एशिया पब्लिशिंग हाउस ।

148। रामगोपाल - ट्रायल्स ऑफ जवाहर लाल नेहरू , बम्बई सन् 1962 ।

149। लाल बहादुर - द मुस्लिम लीग, आगरा ।

150। बर्मा, विश्वनाथ प्रसाद - मॉडर्न इन्डियन पोलिटिकल थौट, आगरा, सन् 1964 ।

151। चिन्तामणि , सी वाई - इंडियन पोलिटिक्स सिन्स म्यूटिनी , इलाहाबाद ।

152। चैटर्जी, नन्दलाल - ग्लोरीस ऑफ उत्तर प्रदेश, केम्ब्रिज सन् 1957

153। कन्हैयालाल - कांग्रेस के प्रस्ताव, 1885-1931, वाराणसी सन् 1931

154। करूणाकरन - कान्टून्यूटी एन्ड चेंज इन इंडियन पॉलिटिक्स 1885-1921, दिल्ली, सन् 1964 ।

155। गोपाल, एस 0 - ब्रिटिश पॉलिसी इन इन्डिया, 1885-1905 केम्ब्रिज सन् 1965 ।

156। गोखले, गोपालकृष्ण, स्पीचेस ऑफ जी0के0 गोखले, मद्रास ।

157। खान, सैयद सिरदार अली - द अर्ल ऑफ रीडिंग , लन्दन सन् 1924

158। मदनमोहन मालवीय - लाइफ एन्ड स्पीचेज़ , मद्रास ।

159। राजर्षि, पुरूषोत्तमदास टंडन - व्यक्तित्व एवं संस्मरण, इलाहाबाद सन् 1967 ।

160। महामना, मालवीय- बर्थ सेन्टीनरी कममोरेशन वॉल्यूम, वाराणसी 1961 ।

161। अन्काद, मालवीय जी0 - ए ब्रीफ लाइफ स्केच, बम्बई सन् 1940

162। अम्बेडकर, बी0 आर - थॉट्स ऑन पाकिस्तान, बम्बई सन् 1941

163। सच्चिदानन्द सिन्हा कमीनरेशन वॉल्यूम , पटना सन् 1947 ।

164। चतुर्वेदी, दिनेशचन्द्र - इन्डियन नेशनल मूवमेंट एन्ड कॉस्टीट्यूशनल डेवलेपमेन्ट, मेरठ एंव नयी दिल्लीसन् 1977 ।

165। जैन, डा0 पुखराज - नेशनल मूवमेन्ट ऑफ इन्डिया एन्ड इन्डियन कॉस्टीट्यूशन, आगरा सन् 1983 ।

166। तिवारी, जी0 डी0 - भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं सांविधानिक विकास, दिल्ली , सन् 1961 ।

167। पट्टाभिसीता रमय्या, बी. - कांग्रेस का इतिहास 1885-1935

168। अग्रवाल, आर. एन. - नेशनल मूवमेंट एक कॉस्टीट्यूशनल डेवलेपमेंट इन इंडिया सन् 1967 ।

169। मजूमदार, बी. बी. - इंडियन पोलिटिकल एसोसियेशन्स एन्ड रिफॉर्म ऑफ लोजिस्लेचर सन् 1818-1917 ।

170। मालवीय, पंडित मदनमोहन - लाइफ एन्ड स्पीच ।

171। देसाई, ए. आर. - सोशल बैक ग्राउंन्ड ऑफ इन्डियन नेशनेलिज्म ।

172। सुन्दरलाल - भारत में अंग्रेजी राज ।

173। बनर्जी, एस0 एन0 - ए नेशनल इन द मेकिंगं ।

174। प्रसाद, ईश्वरी - हिस्ट्री ऑफ मोडर्न इंडिया ।

176। चिन्तामणि, सी. वाई - इंडियन पोलिटिक्स सिन्स म्यूटिनिटी ।

|77| प्रधान, आर. जी. - इन्डियन स्ट्रगल फॉर स्वराज ।

|78| एण्ड्रूज - इन्डिया स्ट्रगल फॉर फ्रीडम ।

|79| कन्डीशन ऑफ इन्डिया - रिपोर्ट ऑफ द डेलीगेशन सेन्ट टु इंडिया, बाई इन्डिया लीग इन 1932, लन्दन ।

|80| ए हिस्ट्री ऑफ द फ्रीडम मूवमेंट वॉल्यूम भाग 2, करॉची सन् 1963 ।

|81| बाइग्रोफीज़ ऑफ एनीमेन्ट इंडियन्स, मद्रास ।

अप्रकाशित सामग्री

1. नेहरू मेमोरियल एन्ड म्युजियम लाइब्रेरी, तीन मूर्ति भवन, नयी दिल्ली

|ए| मोतीलाल नेहरू के पत्र

|1| पंडित मोतीलाल नेहरू से रंगास्वामी अयंगर को पत्र, 1-7

|2| पंडित मोतीलाल नेहरू सेगांधी जी को पत्र, जी- ।

|3| पंडित मोतीलाल नेहरू से मदन मोहन मालवीय को पत्र, एम-5

|4| पंडित मोतीलाल नेहरू से एनी बिसेंट को पत्र, बी- 7

|5| पंडित मोतीलाल नेहरू तथा पंडित जवाहर लाल नेहरू का परस्पर पत्र व्यवहार, एन- 4

|बी| पंडित जवाहर लाल नेहरू का पत्र व्यवहार -

|1| पंडित जवाहर लाल नेहरू से महात्मा गांधी जी को पत्र जी-11

|2| पंडित जवाहर लाल नेहरू से सुन्दरलाल को पत्र, एस- 22 ।

।3। पंडित जवाहर लाल नेहरू से संलग्न एक पत्र मोतीलाल नेहरू से मंजर अली को ।

।सी। ए. आई. सी. सी. रिकॉर्ड

।1। प्रान्तीय कांग्रेस की फाइलें, ब्रान्च पी 1922-1925, 1926-1934 ।

2. नेशनल आरकाइव्स ऑफ इन्डिया, नयी दिल्ली -

।ए। होम पब्लिक डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स सन् 1885-1906 तक ।

।बी। होम पालिटिक्स डिपार्टमेन्ट प्रोसीडिंग्स सन् 1907-1935 तक ।

। इनमें अनुमानतः 190 फाइलों का अध्ययन किया गया ।

।सी। गोपाल कृष्ण गोखले के व्यक्तिगत पत्र -

गोखले को श्री सी.वाई चिन्तामणि से, फाइल नम्बर- 108 ।

गोखले को तेजबहादुर सप्रू से पत्र, फाइल नम्बर - 48 ,

3. राजकीय अभिलेखागार, उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद ।

।ए। सेक्रेटिएट रिकार्ड 1890-1920

।बी। जी. ए. डी. डिपार्टमेंट

।सी। जी. ए. डी. ए. डिपार्टमेंट

।डी। एपोंइटमेंट डिपार्टमेन्ट

।ई। होम पुलिस डिपार्टमेन्ट

।एफ। गुप्त सूचना विभाग की फाइलें

3. समाचार पत्र

1. पायनियर । सन् 1906। एंव । सन् 1911।
2. अभ्युदय, साप्ताहिक, सन् 1908 से 1932 तक, अगस्त एंव सितम्बर सन् 1945 ।
3. इन्डिपेन्डेन्ट, दैनिक, सन् 1919 से सन् 1922 तक ।
4. लीडर, दैनिक , सन् 1915 से सन् 1934 तक ।